हृदय बृन्दावन

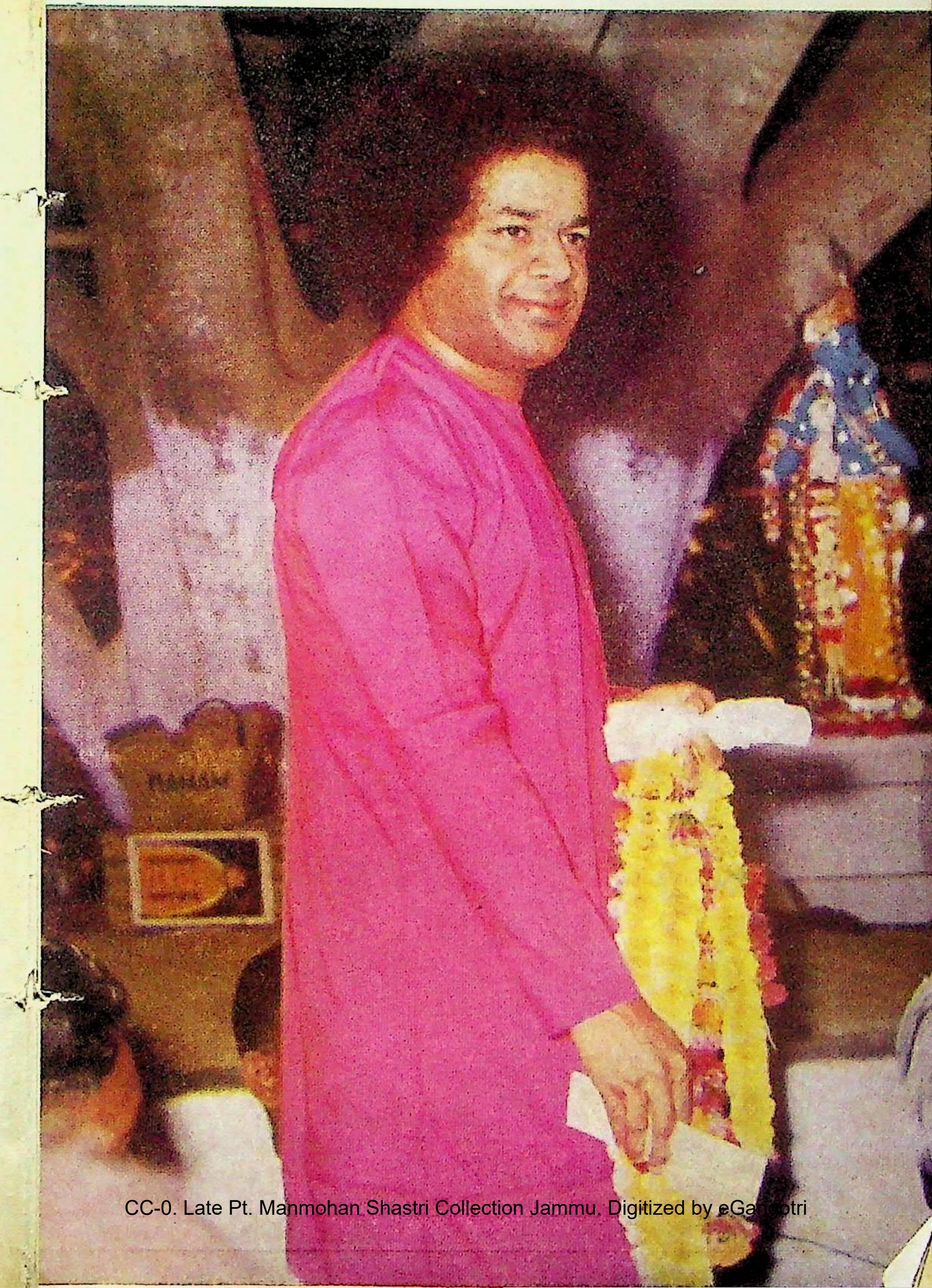


श्री सत्यसाईं छात्रावास के वाल्टर तथा एलसी

कावन ब्लाक के उदघाटन के अवसर पर

२८ अप्रैल १९७७

हृदय बृन्दावन



हृदय बृन्दावन

सत्य साईं भगवान के चरणारविन्दों में
छात्रों द्वारा अर्पित श्रद्धा की एक पुष्पांजलि

श्री सत्यसाई छात्रावास के वाल्टर तथा एलसी कावन ब्लाक के
उद्घाटन के अवसर पर
२८ अप्रैल १९७७

मूल्य :
रु० २.५०

प्रथम सस्करण

दो शब्द

मैं अध्यात्म वाद तथा भक्तिवाद के साथ-साथ एकतावाद का भी समर्थक हूँ। धर्म मेरी दृष्टि में एक ऐसा बिन्दु है जिसके चारों ओर आत्मिक शान्ति की खोज में मनुष्य निरन्तर परिक्रमा करता रहता है। यह दायरा मेरे अस्तित्व के चारों ओर भी खिचा हुआ है और मैं समझता हूँ कि यदि दायरा टूट गया तो मैं अस्त व्यस्त हो जाऊँगा। मैं एक मनुष्य हूँ और सत्य-प्रकाश की खोज में इस प्रकार के समस्त दायरों की परिक्रमा करता रहता हूँ।

जब मैंने सत्य साईं बाबा की पुस्तकों का अध्ययन किया तो मुझे ज्ञात हुआ कि उनका दृष्टिकोण अध्यात्म वाद तथा मानव-उत्थान पर आधारित है। उनकी दृष्टि में धर्म का उद्देश्य मनुष्य को आत्म-सन्तोष प्रदान करना है। धर्म के रूप भिन्न-भिन्न हो सकते हैं परन्तु उद्देश्य सबका एक है। साईं बाबा सभी धर्मों को आदरणीय समझते हैं और यह उनकी महानता का चिन्ह है।

साईं बाबा का यह दृष्टिकोण कि मानव आत्म-बल के सहारे अपनी उन्नति की पराकाष्ठा तक पहुंच सकता है, मेरे लिए प्रेरणा बना कि मैं उनकी पुस्तकों का अनुवाद करूँ। अपनी ओर से मैंने अनुवाद के कार्य में जिस परिश्रम तथा लगन से कार्य किया है वह उस श्रद्धा का ही परिणाम है जो मुझे साईं बाबा की आध्यात्मिक ऊँचाई से मिली है। मुझे आशा है कि पाठकों को मेरा अनुवाद पसन्द

आयेगा और उनसे मेरा निवेदन है कि यदि इसमें कोई त्रुटि हो तो उसके लिए क्षमा करें।

अज़ीज़ इन्दौरी
नई दिल्ली
३० मई, १९७७

संदेश

तुम्हारे अन्दर कोई त्रुटि नहीं।

"जहाँ चाह वहाँ राह है"। यह कहावत पूर्णतः सत्य है। प्रारंभ में तुम्हारी चाह तुम्हारी स्वयं की इच्छा होती है परन्तु इसको भगवद् स्मरण से प्रबल बनाना पड़ता है यहाँ तक कि स्वेच्छा, सर्वशक्तिमान् भगवान की इच्छा में विलीन हो जाए।

ऐसा लगता है कि जीवन एक मनोरंजक खेल है जिसे खेले बिना तुम रह नहीं सकते। वास्तव में इस खेल को छोड़ने की तुम्हारी इच्छा भी नहीं होती परन्तु तुम चाहो तो इस खेल के मूल स्वभाव में परिवर्तन लाने की क्षमता अपने अन्दर उत्पन्न कर सकते हो। यह क्षमता तुम में बीज की भांति निहित है।

तुम दुर्बल नहीं, असहाय नहीं। तुम्हारे भीतर हर प्रकार की शक्ति है। जब भी तुम्हारी इच्छा प्रबल हो जाएगी, जब भी तुम अपने मन को एकाग्र कर लोगे, उसी क्षण तुमको भगवद्दर्शन की अनुभूति प्राप्त हो जाएगी।

यह कार्य कर क्यों नहीं डालते ?

उत्तर स्पष्ट है—तुम ऐसा करना ही नहीं चाहते।

मैं तुमसे अट्टहास नहीं कर रहा हूँ। मैं तो सत्य तथा गंभीरता के साथ यह बात कह रहा हूँ। मैं अपने जीवन के गूढ़ अनुभवों से प्राप्त

सत्य तुम्हारे सम्मुख प्रस्तुत कर रहा हूँ। प्रत्येक परिस्थिति में सर्व-शक्तिमान, सर्वव्यापी भगवान की इच्छा में विश्वास तथा उसके प्रति आत्म समर्पण ही मूल सत्य है। यह सृष्टि के मूल सिद्धान्त का रहस्य है। तुम कहते हो "यदि भगवान ने चाहा"। इसका वास्तविक अर्थ है "यदि तुम स्वयं अपनी प्रबल इच्छा का उपयोग करो।"

इस समस्या का सामाधान है अपनी सुप्त शक्ति तथा अपनी आत्मा के वैभव को जागृत करना। इस कार्य को कर ही डालो। तुम वास्तव में अमर सत्य हो, एक महान् वास्तविकता हो, जिसे न मृत्यु का भय है न परिवर्तन का।

भगवान तुम्हें इस प्रयास में सफल करे।

आशीर्वाद सहित,

बाबा

दैवी आह्वान

सदशिक्षा वह है जो मानवीय मूल प्रवृत्तियों एवं क्षमताओं को जागृत करे, मानव की अन्तर्प्रवृत्तियों को सबल बनाए ताकि मनुष्य आत्मज्ञान के पथ पर अग्रसर हो सके। शिक्षा का सर्वोत्तम कार्य मानव में चैतन्य सत्य की अनुभूति कराना भी है।

भारतीय शिक्षा सिद्धान्त पूर्ण रूप से उन चिरन्तन मान्यताओं पर आधारित रहा है जो परीक्षण की कसौटी पर खरी सिद्ध हुई हैं और जिनका श्रोत हैं पवित्र धार्मिक ग्रन्थ ! शिक्षा प्रणाली कोई सी भी हो, उसका कार्य है मनुष्य में विवेक उत्पन्न करना तथा उसकी मौलिक उत्कृष्टताओं को विकसित करना। इसी से मानव में मानवता का संचरण होता है।

अनादिकाल से भारत आध्यात्मिकता का केन्द्र रहा है। गुरु शिष्य का प्रगाढ़ सम्बन्ध भारतीय शिक्षा पद्धति का मूलाधार रहा है। यह प्रक्रिया पारम्परिक रूप से अग्रसारित होती गई एवं ऐसी विशिष्ट शिक्षा विश्व में और कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं हुई। इसी शिक्षा प्रणाली को राम तथा कृष्ण ने भी ग्रहण किया।

वास्तव में यह विस्तृत ब्रह्मांड महागुरु की लीलास्थली है और मनुष्य है इसका एक शिष्य ! पंचतंत्र—जल, वायु, अग्नि, मिट्टी तथा आकाश—सूर्य तथा चंद्रमा, प्रत्येक प्राणी और वस्तु, प्रत्येक क्रम तथा क्रिया, सभी मनुष्य को कुछ न कुछ शिक्षा प्रदान करते हैं।

प्रकृति माता मनुष्य के लिए मुख्य गुरु के समान है। वह मनुष्य को जन्म के तदनन्तर ही शिक्षित करना आरंभ कर देती है। तत्पश्चात शिशु के माता पिता तथा गुरु इस प्रक्रिया को अग्रसर रखते हैं।

वह व्यक्ति जो दूसरों को आध्यात्मिक बुद्धि प्रदान करता है वास्तव में श्रेष्ठ गुरु है। वह मनुष्य को अज्ञानता के उस अन्धकार से निकालता है जिसमें फंसे रहने के कारण मनुष्य जीवन मरण के निरन्तर चक्र में बंधा रहता है। परमात्मा गुरुओं का गुरु है इसी लिए उसको जगद्गुरु कहा जाता है।

शिक्षा का संबंध उस अवधि से नहीं है जो विद्यालय या महाविद्यालय के प्रांगण में व्यतीत होती है। शिक्षा प्राप्ति की क्रिया हर समय, हर स्थान पर चलती रहती है। इसका कोई अन्त नहीं। मेरी समस्त आशाएं युवकों से जुड़ी हुई हैं। युवकों के लिए यह आभास अति आवश्यक है कि अनुशासन द्वारा बिताया गया संतुलित तथा भरपूर जीवन ही एक ऐसा मार्ग है जो व्यक्ति तथा राष्ट्र को विनाश से बचा सकता है। हमारे पूर्वज समझते थे कि विद्या का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है। यह बात आज भी उतनी ही सत्य है जितनी अतीत में थी।

हम ब्रह्मानुभूति द्वारा ही विश्व में शान्ति निरूपित कर सकते हैं। इसमें संदेह नहीं कि संसार के महान पथप्रदर्शक विश्व में शान्ति तथा सौहार्द लाने के लिए, भौतिक सतह पर अनेकों प्रयास कर रहे हैं परन्तु मुझे इसमें सफलता के चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं। केवल एक ही रास्ता शेष है और वह यह कि हम अपने अन्तर्मन को टटोलें और उस अनंत, असीम स्रोत को खोजें जहाँ से संसार को सुख तथा शान्ति मिल सकती है। वह स्रोत है ईश्वर, जो घट घट में अन्तर्व्याप्त है। वह ब्रह्मांड के कण कण में विद्यमान है। तुममें से प्रत्येक व्यक्ति

भगवान का स्वरूप है। तुम्हारा वास्तविक अस्तित्व सच्चिदानन्द, विवेक तथा प्रसन्नता है परन्तु तुमने सत्य को भुला दिया है। उस सत्य को फिर से पाने की आवश्यकता है और उसका मार्ग है भगवद-स्मरण ! उस शक्तिशाली नाम का जाप करो, यहाँ तक कि तुम्हारा मन तदाकार हो जाए और तुम भी उस असीम सच्चिदानन्द की अनुभूति प्राप्त कर सको जिसकी मादकता का रसपान मैं कर चुका हूँ।

आध्यात्मिक विषयों में मात्र विद्वत्ता प्राप्त कर लेना वास्तविक शिक्षा नहीं। इसी प्रकार स्थूल काया के नष्ट होजाने के पश्चात मोक्ष का अर्थ यही नहीं कि आत्मा को जन्म मरण से मुक्ति मिल जाए। शिक्षा के क्षेत्र में उन क्षमताओं का उत्पन्न करना भी सम्मिलित होना चाहिए जिनके द्वारा व्यक्ति मानव जाति की सेवा कर सके। इसी प्रकार मोक्ष का वास्तविक अर्थ उस समस्त दासत्व से मुक्त होना है जो मनुष्य के पैरों में बेड़ी बना रहता है। दासता दो प्रकार की होती है—एक तो किसी अन्य देश की आधीनता, दूसरे अज्ञान से उत्पन्न होने वाली लालसाओं का शिकार बनना। इन लालसाओं से मुक्ति प्राप्त करना ही आदर्श मोक्ष है और सच्ची शिक्षा वही है जो मनुष्य को एषणाओं से मुक्ति प्रदान कराने में सहायक हो सके।

छात्रों को सदैव आत्म निरीक्षण तथा आत्म विश्लेषण में संलग्न रहना चाहिए। उन्हें अपने अन्दर सद्‌गुण उत्पन्न करने में प्रयत्नशील रहना चाहिए ताकि वे चरित्रनिधि को सुरक्षित रख सकें। ज्ञान की क्रमबद्ध वृद्धि के साथ-साथ चरित्र की भी उन्नति होती रहनी चाहिए। शिक्षा के माध्यम से उन्हें अपने मन पर भी अंकुश लगाना चाहिए। जिस दिन वे राग तथा द्वेष के आवेग को नियन्त्रित कर लेंगे उसी दिन उन्हें भय तथा चिन्ता से मुक्ति मिल जाएगी, परन्तु आज के संसार में

इस प्रकार की शिक्षा लगभग दुर्लभ ही है जिसके द्वारा मनुष्य को आत्म संयम का अवसर प्राप्त हो सके। आधुनिक काल के शिक्षा विशेषज्ञ आत्म संयम की आवश्यकता को पूर्ण रूप से भूल ही गए हैं।

छात्रों को इस सत्ता में विश्वास रखना चाहिए कि आत्म की शक्ति अन्य समस्त भौतिक शक्तियों की अपेक्षा अधिक सबल है। साधना अनुपम है। साधना एक अद्वितीय तथा शक्तिशाली अस्त्र है। अनुशासन तथा आत्म संयम के आधीन रहकर पवित्र जीवन व्यतीत करने से ही वह महान शक्ति प्राप्त की जा सकती है जिसको "आत्म-शक्ति" की संज्ञा दी गई है।

यदि राग तथा द्वेष पर बाल्यकाल में अंकुश न लगाया जाए तो फिर यह असंभव ही है कि इन अबाध घोड़ों को प्रौढ़ या वृद्धावस्था में काबू में किया जा सके। इसका यह भी अर्थ नहीं कि बाल्यकाल में बच्चे अपना चित्त नासिका तथा श्वास पर केन्द्रित किए समाधि लगाए बैठे रहा करें। मेरा अभिप्राय केवल यह है कि बच्चों में खेल कूद, संगीत, अध्ययन, तथा संध्या पूजा के द्वारा सहिष्णुता का गुण विकसित किया जाए। इसका परिणाम यह होगा कि उनमें आत्मबल उत्पन्न हो जाएगा।

छात्रों को चाहिए कि वे अनुशासन को स्वीकार करें और अनुशासन में रहें। इसी मार्ग पर चलकर वे मानव सेवा के वृहद् क्षेत्र में नेतृत्व करने योग्य हो सकेंगे।

—बाबा

कुछ पुस्तक के सम्बन्ध में

बृहस्पतिवार, २८ अप्रैल १९७७ को भारत के राष्ट्रपति जी ने, श्री सत्य साईं महाविद्यालय के वैभवशाली छात्रनिवास का उद्‌घाटन किया। यह अवसर निस्संदेह समस्त छात्रों तथा उन व्यक्तियों के लिए हर्ष का अवसर था जो वास्तविक शिक्षा में रुचि रखते हैं।

यह पुराने छात्रनिवास के छात्रों का हार्दिक अनुग्रह ही था कि श्री सत्य साईं बाबा जी ने महाविद्यालय के प्रांगण में छात्रनिवास बनाने की बजाए वृन्दावन में छात्रनिवास बनाने की बात मानली ताकि छात्र उनके महान् व्यक्तित्व से लाभान्वित हो सकें। साईं बाबा के अस्तित्व का महत्व क्या है, उनकी उपस्थिति से कितने लाभ होते हैं, इसका आभास इस बात से होता है कि भिन्न-भिन्न सामाजिक वर्गों से आए छात्रों के दृष्टिकोण, उनके विचारों, लक्ष्यों तथा आदतों में सत्य साईं बाबा जी के साथ रहने से महान परिवर्तन आया। इसका प्रमाण वे वत्तांत हैं जो उनसे लाभान्वित होने वाले व्यक्तियों ने प्रस्तुत पुस्तक में दिए हैं।

इन वृत्तान्तों से ज्ञात होता है कि संसार के समस्त देशों के उन युवकों के लिए जो अज्ञान तथा निराशा के अन्धेरों में भटक रहे हैं, बाबा जी के शिक्षा सम्बंधी मानव पुनरुत्थान कार्यक्रम के अन्तर्गत यह महाविद्यालय तथा यह छात्रनिवास, आशा की किरण हैं। भगवान साईं बाबा का यह निरन्तर प्रयास है कि वे प्रत्येक व्यक्ति के मन में दैवी अनुभूति उत्पन्न करें ताकि मनुष्य को ज्ञान हो सके कि वह क्या है और

क्या बन सकता है ? इसका उद्देश्य यह भी है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी परम्परा से परिचित होकर अपनी सुप्त क्षमताओं को जागृत तथा विकसित करे और समाज कल्याण का कार्य करे। कुछ लोग नैतिकता के पतन का रोना रोते हैं। यदि वे गुरु साईं बाबा द्वारा जागृत किए इन हृदयों की पुकार सुन सकें, इनके प्रस्तुत लेख पढ़ सकें, तो उनमें साहस तथा विश्वास जाग उठेगा। इस पुस्तक का अध्ययन मानव को उचित समय पर याद दिलाएगा कि एक आध्यात्मिक नक्षत्र का उदय हो चुका है, धरती पर एक अवतार प्रकट हो चुका है जो समस्म मानव जाति को बुराइयों के गहरे दलदल से निकालने में व्यस्त है।

यह पुस्तक कुछ छात्रों के उस नैसर्गिक उत्साह का परिणाम है जो कुछ छात्रों को सत्य साईं बाबा से प्राप्त हुआ। इसी उत्साह के बल पर उन्होंने अपने छात्रनिवास के उद्घाटन के अवसर पर कर्तव्यप्रायणता, श्रद्धा तथा अनुशसान की लड़ी में पिरोए हुए आँसू भगवान के चरणारविन्दों में भेंट करने का निर्णय किया। प्रस्तुत पुस्तक जो श्रद्धा की एक पुश्पांजलि है इस निर्णय का साकार रूप है। उनका यह नया छात्रनिवास वह स्थान है जहाँ सरस्वती उनकी बुद्धि निर्मल करके उनका मानसिक मार्गदर्शन करती है, जहाँ कृष्ण जी उनपर प्रेम की वर्षा करते हैं और सत्य साईं बाबा उनको वास्तविकता दर्शाते हैं। उन्होंने इस पुस्तक को "हृदय वृन्दावन" का शीर्षक दिया है क्योंकि वृन्दावन छात्रों के हृदय की गहराई तक उतर चुका है और उनके हृदय में वृन्दावन के अतिरिक्त और किसी वस्तु के लिए स्थान शेष नहीं रह गया है। उनका हृदय भगवान की पवित्र क्रीड़ास्थली बन चुका है। हमारी प्रार्थना है कि भगवान उनके हृदय को अपने लीली क्षेत्र के रूप में स्वीकार करें।

—वार्डन छात्रावास

विषय-सूची

१. परमात्मा की खोज	अनूप झलानी	१
२. जीवन के लिए साई मार्ग	टी० एम० नित्यानन्द मैनन	८
३. मानव रूप में भगवान	अभिजीत रे	१७
४. सत्य साई बाबा के विभिन्न स्वरूप	प्रो० एस० भगवनतम	२४
५. अवतार की ओर	वाई सतीश चन्द्र	३३
६. रूपान्तर	रविन्द्र पी० शराफ़	३८
७. दर्शन—जिसमें मेरा विश्वास है	एन० शिवारमन	४६
८. आवारा कुत्तों से प्रकाश स्तंभ तक	सी० श्रीनिवास	५१
९. छात्रों का निवासस्थान सत्य साई भवन	डा० वी० के गोकक	५६
१०. साई वृन्दावन में मेरे जीवन पर प्रभाव	नवीन चन्द्र बी० पटेल	६३
११. साई प्रेम के महासागर में	के० पी० देवास	६८
१२. मेरे वैभवपूर्ण दिवस	पी० विजयाभासकर	७०
१३. भगवद् अस्तित्व का आनंद	सी० एम० प्रकाश	७३
१४. श्री सत्य साई सद्गुरु	एम० ननजन्दिया	७९
१५. दैवी सितार वादक	जे० श्यामसुन्दर राव	८६
१६. व्यक्तिगत जीवन में दर्शन	रुपक चंगका कोटी	८९
१७. गुणातीत के गुण	ए० वी० श्रीनिवासन	९३

१८.	बाबा तथा उनका प्रेम-सिद्धान्त	बी० वी० एस० सागर	९७
१९.	मौन स्वामी	के० राजीव	१०१
२०.	एक मात्र भगवान—साईं	शिव पंडित	१०५
२१.	स्वामी + भक्त = महाकृति	कमल साहनी	१११
२२.	मुझे भी पथ मिला	एम० रामाकृष्णा	११८
२३.	साईं प्रयोगशाला	के० चन्द्रशेखर	१२४
२४.	क्या मैं स्वभाग्यशाली नहीं हूँ ?	आर० रविशंकर	१२७
२५.	काश कि···	एन० कस्तूरी	१३२
२६.	भगवान के कार्य में युवकों का भाग	राकेश सेन	१३८
२७.	स्वामी—मेरे प्राण	के० प्रेमानन्द	१४३
२८.	कल की आशा—साईं	डी० सोमा शेखर	१४६
२९.	दैवी माता	रामा कृष्णा रेड्डी	१५२
३०.	साईं और मैं	एन० राधाकृष्णन	१५४
३१.	काश मैं भस्म होता	के० मुर्ली कृष्ण	१५६
३२.	भगवान की सेवा में रत युबक	एस० रघुनाथ	१५९
३३.	भगवान के प्रति भजन	डी० नरेन्द्र	१६५
३४.	विज्ञान तथा महाविज्ञान	प्रो० पी० एस० राव	१६७
३५.	वृन्दावन—एक पवित्र संगम	ए० वी० लक्ष्मी नरासिमम	१७३
३६.	वृन्दावन में दर्शन	सुदर्शन	१७७
३७.	श्री सत्य साईं विश्वविद्यालय	बी० श्रीनिवास मूर्ति	१८४

१–परमात्मा की खोज

*अनूप झलानी

परमात्मा के अस्तित्व का सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि मनुष्य को परमात्मा की आवश्यकता है। ज्ञात इतिहास से पूर्व युग का आदि मानव प्राकृतिक प्रकोपों से बचने के लिए आत्माओं की पूजा करता था। तत्पश्चात् सभ्यता के उदयमान होने पर मानव ने अपने बनाए हुए देवी देवताओं को पूजा। उस समय से लेकर आज तक मनुष्य का मन पुकार-पुकार कर कहता रहा है कि एक ऐसी शक्ति अवश्य है जो विश्व में होने वाली हर घटना तथा हर परिस्थिति पर नियन्त्रण रखती है, जिसके हाथ में समस्त ब्रह्मांड के भाग्य की बागडोर रहती है। प्रत्येक मनुष्य, बल्कि प्रत्येक जीव के मन की गहराइयों में यह विश्वास विराजमान है कि अस्तित्व की इस लीला के पीछे एक अजर-अमर शक्ति का हाथ है। स्वयं मनुष्य की यह आस्था इस बात का

---

*अनूप झलानी देहली निवासी हैं। उन्होंने साई महाविद्यालय से बी० काम० की डिग्री ली। अप्रैल ७६ में उन्होंने अपना यह तीन वर्षीय कोर्स पूर्ण किया और बंगलौर विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उन्होंने अन्तिम वर्ष की परीक्षा में कई विषयों में उच्चतम् अंक प्राप्त करने के कारण छः स्वर्णपदक प्राप्त किए। संस्कृत में भी उनको दक्षता प्राप्त है। अंग्रेजी के अच्छे वक्ता होने के अतिरिक्त वे एक अच्छे लेखक और अच्छे अभिनेता भी हैं। बंगलौर विश्वविद्यालय से वे अब एम० काम० कर रहे हैं।

पर्याप्त प्रमाण है कि सर्वशक्तिमान् परमपिता परमेश्वर अपना अस्तित्व रखता है।

नन्हे-नन्हे जीवों से पशु-पक्षी तथा वनमानस के रूप में परिवर्तित होकर मनुष्य के अपने प्रस्तुत रूप में प्रगट होने की कहानी बड़ी लम्बी है। यह अच्छा ही है कि मनुष्य का भावी उद्विकास किसी एक रेखा पर न रहकर भिन्न-भिन्न दिशाओं में होने को है। आज शारीरिक, मानसिक तथा कलात्मक गुणों को ही लक्ष्य समझ लिया गया है। यह भूलकर या अज्ञानतावश यह न समझकर कि यह मानव का अधिकार भी है तथा कर्त्तव्य भी, कि भगवान की ओर बढे। आज का मानव केवल "चिन्तन करने वाला पशु" बनकर रह गया है, बल्कि इससे भी निम्न स्तर पर पहुंच चुका है। बाह्य भौतिक संसार ही मनुष्य के अनुभवों का क्षेत्र रह गया है। यह प्रत्यक्ष संसार ही उसके लिए ऐसा सीमित स्थान है जहाँ वह कुछ प्रयास करता है, कठिनाइयों का अनुभव करता है तथा जीवन का दु:ख-सुख भोगता है—पश्यतिती पशुः।

भगवान ने इस संसार की सृष्टि इसलिए नहीं की कि मनुष्य सस्ती आनन्द प्राप्ति के पीछे भागे, न ही यह संसार मनुष्य की समस्त इच्छाओं की निरन्तर पूर्ति कर सकता है। जिस दिन इस सीमित साधन रखने वाले संसार में मनुष्य की समस्त इच्छाओं की पूर्ति हो जाएगी उस दिन इस समस्त रचना की भी समाप्ति हो जाएगी। इसका कारण जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही स्पष्ट भी है। प्रत्येक युग में दूरदृष्टि रखने वाले संसार के महान् व्यक्तियों ने अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर यही बात कही है कि कोई व्यक्ति उस समय तक पूर्ण प्रसन्नता तथा आनंद की अनुभूति प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह भगवान को न प्राप्त कर ले। जिस प्रकार एक शिशु

अपने खिलौनों से ऊबकर अपनी माता के लिए व्याकुल हो जाता है, या जिस प्रकार एक पक्षी अपनी ऊँची निरुद्देश्य उड़ान से थककर विश्राम के लिए किसी वृक्ष या पर्वत पर स्थान खोजता है, इसी प्रकार मनुष्य भी एक न एक दिन यह समझ लेता है कि ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त होने वाले आनन्द के अतिरिक्त उसके भीतर कुछ और भी है जो वास्तविक भी है और महत्त्वपूर्ण भी ! यह अनुभूति हर व्यक्ति को होनी ही चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को यह जानना ही चाहिए कि भौतिक तथा सांसारिक सुख से बहुत ऊपर एक श्रेष्ठ आनन्द और भी है जो भगवान की निरन्तर साधना से प्राप्त होता है। वह मनुष्य जो केवल पेट भरने के लिए जीता रहा है एक दिन समझ जाएगा कि एक और प्रकार की भूख भी होती है जिसकी संतुष्टि संसार के श्रेष्ठ व्यंजनों से भी नहीं हो सकती। वह व्यक्ति जो केवल इन्द्रियों से प्राप्त होने वाले आनन्द को ही जानता समझता है, एक दिन अवश्य जान जाएगा कि उसके अपने तुच्छ शरीर के भीतर एक ऐसा आनन्द भी है जो किसी भी प्रकार के भौतिक सुख से बढ़कर है। हम इस भूख को आत्मिक भूख का नाम दे सकते हैं और यह अमूल्य वस्तु केवल मनुष्य के भाग्य में है।

यदि मनुष्य अपना पेट, मस्तिष्क और बैंक की पुस्तिका भर लेने के पश्चात् अपनी आत्मा में थोड़ा-सा भी खालीपन अनुभव करता है तो यह थोड़ा-सा खालीपन भी उसके प्रत्येक मूल्यवान् अधिपत्य से हजार गुना श्रेष्ठ है। मनुष्य अपने रचयिता को भूल सकता है, उसके अस्तित्व से इन्कार कर सकता है—परन्तु सदा-सदा के लिए नहीं। अन्ततः भगवान की आवश्यकता, भोजन की आवश्यकता से भी कुछ अधिक मौलिक तथा मूल्यवान् सिद्ध होती है, परन्तु यह आवश्यकता मानव-मन की गहराइयों में बहुत नीचे निवास करती है बिल्कुल इसी प्रकार जैसे कोयले या अम्बर में कहीं हीरा छिपा रहता है। भगवान

को पाने की इच्छा वही इच्छा है जिसने संसार की हर वस्तु की सृष्टि की। यह इच्छा न तो पूर्ण रूप से दबायी जा सकती है, न सदा-सदा के लिए भुलाई जा सकती है। मनुष्य का वास्तविक अस्तित्व भगवान में लीन हो जाना ही है और उसका श्रेष्ठ स्तर वही है जहाँ वह स्वयं श्रेष्ठ बन जाए। मनुष्य अपनी आत्मा के राज्य को त्याग सकता है परन्तु इससे उसका आत्म-राज्य का सम्राट बनने का अधिकार छिन नहीं जाता। वह अपना सदा सुखी रहने का अधिकार छोड़ सकता है परन्तु किसी भी प्रकार इस बात से उसकी मौलिक आत्मा का हनन नहीं होता।

यदि जीवन को श्वास लेने की क्रिया समझ लिया जाए तो जीवन बड़ी सरल सी बात है। जिस दिन मनुष्य ने वस्त्र धारण किए उसने अपनी आत्मा को भी अनेक आवरणों से आवृत कर दिया। इस लिए जीवन का श्रेष्ठ लक्ष्य यही है कि मनुष्य अपनी आत्मा को खोज निकाले। हर व्यक्ति मौलिक रूप से अपने आप में सम्पूर्ण है परन्तु अपनी सृष्टि की रचना करते हुए भगवान ने प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी दृष्टि दी है जो केवल बाह्य संसार को ही देख सकती है। मनुष्य को ऐसी मूल प्रवृतियाँ तथा ऐसे उद्गार प्रदान किए गए हैं कि उनकी संतुष्टि के लिए मनुष्य भौतिक साधन अपनाने पर बाध्य है। यह सब सत्य हो सकता है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं निकलता कि पंचतत्त्व के इस संसार में आनन्द की खोज में मनुष्य को छोड़कर भगवान ने अपनी सृष्टि के साथ खिलवाड़ किया है। भगवान ने अपने रहस्य के भण्डारों की चाबी तो मनुष्य के हृदय में रख दी है परन्तु वह चुपचाप यह तमाशा देखता रहता है कि मनुष्य किस प्रकार अपने आप से बाहर पूर्णता प्राप्त करने के लिए मूर्खतापूर्ण प्रयास करता रहता है। जब मनुष्य रेडियो, टेलीविजन या किसी और यंत्र का आविष्कार करके प्रसन्न होता है तो भगवान उसके व्यर्थ प्रयास पर धीरे से हँस देता है।

ऐसा भी नहीं है कि भगवान केवल एक दर्शक है जिसे अपनी सृष्टि के साथ निर्दयतापूर्ण खिलवाड़ करने में आनन्द आता है। वह तो बड़ा दयालु है। भक्त-वत्सल भगवान है और अपने भक्तों का रक्षक है। वह हृदय से निकली प्रार्थना को सुनता है और अपने भक्तों को अपने ही जाल में फंसने से बचाता है। उन सामान्य मनुष्यों के लिए जो अपने जीवन में भोजन तथा निद्रा की सीमाओं से आगे नहीं बढ़ पाते, भगवान कुछ विपदाएं भेजते हैं परन्तु यह बस कहने मात्र को ही विपदाएं होती हैं क्योंकि ये बड़ी लाभकारी होती हैं—मनुष्य को भगवान तथा स्वयं अपनी ओर देखना सिखाती हैं। जिस दुःख से भगवान की याद आए वह दुःख तो वास्तव में सुख है। वह दुःख जिससे अन्य समस्त दुःखों की समाप्ति की प्रक्रिया आरम्भ हो दुःख नहीं होता। उसका तो मनुष्य को स्वागत करना चाहिए।

भगवान अपने साधक पर अपनी दया की वर्षा करता है ताकि वह अपनी बुद्धि को प्रखर कर सके और अपने भटकते मन पर नियंत्रण रख सके। योगी के लिए भगवान हर समय एक सहायक के रूप में प्रस्तुत रहता है और पूर्णता की ओर उसको बढ़ाता रहता है। ज्ञानी के लिये वह दक्षिणामूर्ति के समान है जो उसे आत्मज्ञान तथा मानसिक शान्ति प्रदान करता है। भक्त के लिये तो भगवान एक जीवित सत्य ही बन जाता है। वही उसका बन्धु होता है, वही उसका सखा! उसी की वह आराधना करता है और उसी के प्रति वह अपनी सेवाएं अर्पित करता है। वही उसका स्वामी होता है और वही उसके प्रेम का पात्र! सच्ची भक्ति दैवीलोक की नींव को हिला डालती है और जीवन की अवधि को निरन्तर भगवद्-मिलन की अवधि में परिवर्तित कर देती है।

अपने भक्तों की पुकार पर जब भगवान अवतार के रूप में धरती पर बसने वाले मनुष्यों के बीच आ जाता है तब तो उसके प्रेम

तथा दया की कोई सीमा ही नहीं रहती । जब हम यह भूल जाते हैं कि भगवान है और हर एक वस्तु पर छाया हुआ है, तब अवतार भगवान को हमारे पास भेजा जाता है। जिस प्रकार खेल में मग्न बालक को माता भोजन के लिए स्वयं पकड़ लाती है इसी प्रकार दयालु भगवान भी अपने बच्चों को उनके झूठे खेल-खिलौनों से छुड़ाने के लिए धरती पर उतर आते हैं। कौन अनुमान लगा सकता है उस दया का जो अनन्त से सिमट कर एक मानवीय शरीर में केन्द्रित हो जाती है ? कौन वर्णन कर सकता है उस प्रेम का जो निराकार को समय तथा स्थान के बन्धनों में बाँध देता है ? अवतार इस बात का सबसे बड़ा प्रमाण है कि परमपिता परमेश्वर न तो एक मूक दर्शक है न ही अपनी निरुद्देश्य दुनिया का तानाशाह, बल्कि सत्य, सुन्दरता तथा सद्गुणों का सागर है।

श्री सत्य साई बाबा एक ऐसे अवतार हैं जिनकी उपमा न भूतकाल में मिलेगी न भविष्य में। उनके व्यक्तित्व में प्रेम तथा दया का जो विशाल भंडार है वह न पहले किसी व्यक्ति में पाया गया न भविष्य में पाए जाने की आशा है। जब भगवान अपने सूक्ष्म अस्तित्व से ऊब गए तो सत्य साई के रूप में प्रकट हो गए। इनके रूप में दैवी दया प्रकट हुई है। भगवान ने जब अपने भक्तों को अपने अस्तित्व का साकार प्रमाण देना चाहा तो साई बाबा में अवतरित हो गए।

कोई अवतार प्रकट हो जाए तो एक प्रकार से भगवान की खोज की आवश्यकता नहीं रहती परन्तु दूसरे अर्थ में यह खोज इस बिन्दु से आरम्भ होती है, क्योंकि भगवान अपने भक्तों को अपनी प्राप्ति का मार्ग स्वयं ही दिखाता है। अवतार हमको याद दिलाता है कि भगवान मनुष्य के रूप में इसलिए प्रकट हुआ है ताकि मनुष्य भगवान में विलीन हो सके। यह भगवान की रुग्ण मानवता पर अपार दया और

उनका असीम प्रेम ही है कि उन्होंने मनुष्य को मन में छिपे हुए शत्रुओं पर प्रहार करने के लिए सेवा, साधना तथा चरित्र निर्माण के अस्त्र प्रदान किए हैं। अब यह मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह भगवान श्री साई बाबा को अपने मन में बसा ले तथा उनके चरण कमल की धूलि प्राप्त करने का श्रेय प्राप्त करे। अपनी तुच्छ भावनाओं को साई के चरणों में त्याग कर देने का अर्थ है ऐसा जीवन जिसमें भगवान के नाम में अपने को खो देना है और श्री सत्य साई बाबा के दर्शाए आदर्शों पर चलना है।

जीवन केवल तभी सार्थक होगा जब मनुष्य हर वस्तु में उनकी लीला को निहारे, उनके निकट आकर उनमें विलीन हो जाए, अपने को उनका एक अटूट अंग समझे उनके वैभव में आनन्दित हो और अपनी आत्मा की गहराइयों से उनके गुण गाए।

यह दोहराना आवश्यक है कि मनुष्य के लिए मुक्ति प्राप्त करन का यह अद्वितीय अवसर है। शायद यह बात बार-बार भी कहनी पड़े क्योंकि ब्रह्मांड के रंगमंच के निर्देशक ने जीवन के नाटक में स्वयं भाग लेना स्वीकार कर लिया है। सृजनहार स्वयं अपनी सृष्टि से बँध गया है, जीवनदाता स्वयं जीवन का अर्थ बताने धरती पर चला आया है और अपने खोजियों के लिए एक अनमोल पारितोषिक बनकर भगवान स्वयं उनके पास चले आए हैं।



२–जीवन के लिए साई-मार्ग

*टी० एम० नित्यानन्द मैनन

पचास वर्ष पहले जब तानाशाही तथा निराशा का राज्य था पवित्र चित्रावती के किनारे एक अत्यन्त दैवी तथा आकर्षक व्यक्ति ने जन्म लिया और उस व्यक्ति के जन्म लेने से चित्रावती की पवित्रता और भी बढ़ गई। इस व्यक्ति ने, जो प्रेम का सागर था, जो परमात्मा के सर्वश्रेष्ठ होने का प्रचार करता था, लोगों को अपने चरणामृत से कृतार्थ करने हेतु अपनी ओर बुलाना आरम्भ कर दिया। इस व्यक्ति के गेरुवे वस्त्र संसार-त्याग का प्रतीत नहीं थे बल्कि उनसे यह सिद्ध होता था कि वह व्यक्ति एक प्रकार से समस्त ब्रह्मांड का स्वामी है।

अपनी सृष्टि-लीला को देखकर उस व्यक्ति ने कहा—"जब मुझको जानने पहचानने वाला कोई भी यहाँ नहीं था मैंने एक शब्द से आनन्द प्राप्ति हेतु इस संसार की रचना की थी।"

---

*श्री नित्यानन्द मैनन का सम्बन्ध बी० काम० के दूसरे समूह (बैच) से है। बी० काम० तथा एम० काम० की परीक्षाओं में यह तीव्र-बुद्धि छात्र दस सर्वश्रेष्ठ छाक्षों में से एक था। इनका सम्बन्ध कैरल से है। एम० फिल० करने के पश्चात् अब यह कामर्स में पी० एच० डी० करने में संलग्न है। एक अच्छे लेखक तथा वक्ता होने के अतिरिक्त ये अच्छे नाटककार भी हैं।

मनुष्य, जो कि सर्वश्रेष्ठ जीव है, बुराई तथा तुच्छता की गहराइयों में पहुंच चुका है। मनुष्य की दयनीय दशा को देखकर उस महान् व्यक्ति ने स्नेहपूर्ण स्वर में कहा—"इस जीवन में मेरा उद्देश्य है मानव को धर्म के मार्ग पर चलाकर अपने चरणों तक लाना।"

इस ऐतिहासिक घटना को पचास वर्ष बीत गए हैं। इस अवधि में मनुष्य ने देख लिया है कि आत्मा के क्षेत्र में एक क्रान्ति आई है। लाखों व्यक्ति प्रेम के सागर भगवान श्री सत्य साई बाबा के बताए दैवी मार्ग पर चलकर उन तक पहुंच गए हैं।

अपना उद्देश्य बताते हुए उन्होंने कहा—"मैं कोई नया धर्म लेकर नहीं आया हूँ। मैं तो वैदिक जीवन पद्धति की पुर्नस्थापना करने आया हूँ। मैं सिद्ध करने के लिए आया हूँ कि आत्मा भौतिक पक्ष से श्रेष्ठ है। मैं इसलिए भी आया हूँ ताकि मनुष्य को आत्मा से परिचित कराके, जीना सिखाऊँ।"

साई-मार्ग संसार त्याग कर जंगलों में तपस्या करने का रास्ता नहीं है, न ही साई बाबा साधुओं के समान जीवन बिताने के लिए कहते हैं। वे तो मनुष्य को यह दिखाते-सिखाते हैं कि सांसारिक तथा आत्मिक जीवन में किस प्रकार सामंजस्य उत्पन्न किया जा सकता है और यह कि संसार में रहते हुए भी मनुष्य संसार में खो जाने से बच सकता है। वे संसार-त्याग का नहीं बल्कि संसार में ठीक ढंग से जीवित रहने का मार्ग दर्शाते हैं।

साई मार्ग का सार यह है कि समाज में भगवान तथा मानव के लिए प्रेम हो। सभी मनुष्य परमात्मा को पिता मानकर आपस में भाई-भाई बनकर रहें, भलाई के मार्ग पर चलकर विचार, शब्द तथा कर्म में सामंजस्य बनाए रखें और सुख तथा आंतरिक शान्ति का आनन्द उठा सकें।

एक सुखी व्यक्ति के जीवन में सन्तोष होता है। जीवन का उद्देश्य है सुख, और सुख की खोज समस्त प्राणियों में मनुष्य को ही अधिक रहती है। चाहे भौतिक क्षेत्र हो या आत्मा का साम्राज्य, मनुष्य के समस्त कार्यों, प्रयत्नों तथा आकांक्षाओं का लक्ष्य सुख ही रहता है परन्तु यहाँ पहुँचकर एक प्रश्न पैदा होता है और वह यह कि क्या अपने समस्त प्रयासों के बावजूद मनुष्य सुख प्राप्ति में सफल हुआ है ? क्या इस संसार में कोई ऐसा व्यक्ति है जो पूर्णत: सुखी हो ? दुर्भाग्य की बात है कि इन प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर है "नहीं"।

मनुष्य आज भी प्रसन्नता की खोज में लगा है। यह इस बात का प्रमाण है कि वह अभी तक अप्रसन्न है। यदि मनुष्य को सुख की प्राप्ति हो जाती तो उसकी सुख की खोज भी समाप्त हो जाती।

क्या इसका यह अर्थ है कि सुख मनुष्य के भाग्य में है ही नहीं ?

क्या मानव-जीवन अपनी मूल आवश्यकता की पूर्ति में असफल है ?

उत्तर फिर 'न' में है !

सुखी रहना मनुष्य का अधिकार है। यह उसका वास्तविक स्वभाव है। मनुष्य का सच्चा अस्तित्व यह है कि वह भौतिक सुख से ऊपर उठ कर हर वस्तु में सच्चिदानन्द तथा प्रेम का अनुभव करे। जब मनुष्य सांसारिक तथा ऐन्द्रिय सुख को अपनी आत्मा के चिरन्तन सुख से पृथक् कर लेता है तभी उसका वास्तविक स्वभाव सामने आता है।

सुख पूर्ण भी हो सकता है, अपूर्ण भी। ऐसे संसार में जहाँ हर वस्तु अपूर्ण है समस्त इन्द्रियों द्वारा प्राप्त सुख अस्थायी होता है। यदि कोई संसार में सुःख की खोज करता है तो सुख उसको थोड़ा-थोड़ा करके प्राप्त होता है। सुख उसके लिए दो दु:खों के बीच मध्यान्तर समान

होता है। दु:ख तथा विपदा की अवधि के पश्चात् कुछ सुख का आना अनिवार्य है। ऐसा तब तक होता रहता है जब तक मनुष्य संसार तथा अपने मन के जाल में फंसा रहता है, सांसारिक इच्छाओं में त्रस्त रहता है और इन्द्रियों तथा बुद्धि के बल पर जीवित रहता है।

परन्तु कभी न कभी मनुष्य आवश्यकता से अधिक संसार में फंसे रहने को निरर्थक समझने ही लगता है। वह समझ जाता है कि सांसारिक सुख एक श्राप के अतिरिक्त और कुछ नहीं क्योंकि यह उसे किसी भी लक्ष्य तक नहीं ले जाता। तब वह अपने भीतर झांकने लगता है। वह अपनी आत्मा को टटोलने लगता है। इस अवस्था में उसका सामना समस्त ब्रह्मांड में व्यापक दैवी शक्ति से होता है — यह श्रेय केवल मनुष्य को ही प्राप्त है।

अमर आत्मा की कहानी में यह मानव-जीवन अनगिनत घटनाओं में से एक है परन्तु शरीर के रूप में आत्मा का ढ़ल जाना महत्वपूर्ण है और यह क्षमता केवल मनुष्य में ही पाई जाती है कि वह आत्मा को समझे तथा उससे आनन्द प्राप्त कर सके।

जब मन सांसारिक झंझटों से हटकर आत्मा के साथ संबंधित हो जाता है तो परिणाम में मनुष्य को प्राप्त होता है आंतरिक सौहार्द तथा सुख! इस प्रकार सुख एक ऐसी आन्तरिक अनुभूति है जो भौतिक इच्छाओं की समाप्ति के परिणामस्वरूप प्राप्त होती है और जब समस्त इच्छाएं मन के भीतर विराजमान भगवान में लीन हो जाती हैं तो पूर्ण सुख की प्राप्ति हो जाती है।

सुख की खोज में मनुष्य अपने आप को बुरी तरह फंसा लेता है। आज के संसार में जबकि भौतिकवाद की बाढ़ अपने पूरे वेग के साथ आई हुई है त्याग तथा एकांत का जीवन व्यतीत करना लगभग असंभव है।

अप्रत्यक्ष रूप से ही मानव की सहायता नहीं करता बल्कि मनुष्य को जीवन का सही मार्ग दिखाने के लिए मनुष्य रूप में भी इस धरती पर उतर आता है। सत्य साई बाबा इसका प्रमाण हैं। वे कहते हैं "मेरा जीवन मेरा संदेश है।" वास्तव में मानव जीवन उनके संदेश के सांचे में ढलना चाहिए।

भगवान साई बाबा उनको भी जीवन का साई-मार्ग दिखाते हैं जो निराश हो चुके हैं या भयभीत हैं और उनको भी जिनके मन में शंका है। वे उन्हें इस दु:खदायी संसार के भवसागर को पार करने में सहायता प्रदान करते हैं। जो उनके चरण-कमल की शरण लेते हैं वे उनके कल्याण की चिन्ता करते हैं, उनके सखा बन जाते हैं। मनुष्य के लिए कितने सौभाग्य की बात है कि भगवान स्वयं मनुष्य का हाथ पकड़ कर अपने चरणों की ओर खींचता है जहाँ पूर्ण आनन्द है, पूर्ण सुख है। शहद की भाँति मीठे अपने भगवद् भजन में वे अपने भक्तों को ऐसा तल्लीन कर देते हैं कि भक्त जीवन के आनन्दोल्लास से नाचने लगते हैं। वह सत-चित-आनन्द स्वरूप हैं। वे अपने आपको दर्शाते भी हैं और अपने मित्रों में बांटते भी हैं। वे अपने भक्तों को अपनी समानता की ऊँचाई तक खींच लेते हैं। उनके मन से पशुता दूर करके वे उन्हें सच्चा मानव बना देते हैं और मार्ग पर डाल देते हैं जिस पर वे पूर्णता की ओर अग्रसर हो जाते हैं।

वह प्रेम गंगा जो भगवान सत्य साई के अस्तित्व से प्रवाहित होती है, न केवल अपने भक्तों को आनन्द-विभोर कर देती है बल्कि जीवन की विषमताओं से लड़ने के लिए उनको साहस, विश्वास तथा शक्ति भी प्रदान करती है और वे अपने दयावान् स्वामी के चरणों की ओर दौड़ने लगते हैं।

भगवान साई बाबा का प्रेम जाति, रंग तथा धर्म से बहुत ऊपर है। उनके साम्राज्य में केवल मानवता और प्रेम का शासन चलता है। उनका प्रेम हर किसी के लिए है चाहे वह पापी हो या साधु, मजदूर हो कि विद्वान्, दार्शनिक हो कि कवि ! वे जेलों में बंदियों से मिलने जाते हैं तो उनके हृदय के घावों पर प्रेम का फाया रखते हैं। जब वे अन्ध-विद्यालयों में जाते हैं तो अभागों को सान्त्वना देते हैं और उनको प्रेरणा देते हैं कि सुख तथा प्रेम के स्रोत वे अपने अन्दर खोजें। साईं बाबा का प्रेम सब के लिए है, तुम्हारे लिए भी मेरे लिए भी।

भगवान अत्यन्त सहनशील हैं। उनकी दृष्टि मनुष्य के अन्दर तक पहुंचती है और किसी के पापों तथा कुकर्मों को जानते समझते हुए भी उसको साई मार्ग पर चलने के लिए दृढ़ रखते हैं। जिनको उनके पापों के कारण संसार ने ठुकरा दिया है साई बाबा के हाथ आशा, आनन्द तथा मार्गदर्शन देने के लिए उनकी ओर बढ़ते हैं। वे पाप की निन्दा करते हैं परन्तु पापी को क्षमा कर देते हैं। वे एक दृढ़ कूटनीतिज्ञ के रूप में संसार वालों के सम्मुख पापियों का पक्ष लेते हैं। उनके व्यवहार से निराश को आशा मिल जाती है, पापी पवित्र बन जाते हैं और दीन-दु:खी सुख प्राप्त कर लेते हैं।

मानव के भाग्य के सर्वश्रेष्ठ निर्माता तथा शासक अपने प्रिय भक्तों के लिए तो कर्म के अटल सिद्धान्त की भी अवहेलना कर जाते हैं। वे मनुष्य की त्रुटियों को पूरा करके उसको चिरन्तर सान्त्वना प्रदान कर देते हैं।

मानव-जाति को सुख तथा आशा प्रदान करने हेतु भगवान स्वयं प्रयत्न करते हैं। उनके इस दयापूर्ण प्रयत्न का सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि वे दैवी रूप से मानव रूप में धरती पर आ गए हैं

ताकि मानव को दैवी स्तर पर ऊंचा उठाने में सहायक बनें। इस प्रक्रिया के दो पक्ष हैं। पहले तो भगवान स्वयं को अपने भक्त के लिए प्रस्तुत करते हैं। वे कहते हैं —"आओ, परीक्षा करो, अनुभव करो।" फिर परीक्षण, जाँच-पड़ताल तथा अनुभूति द्वारा अपने को प्रस्तुत करते हैं। वे व्यक्ति को पूरी छूट देते हैं कि वह जो मन चाहे करे यहाँ तक कि वह शंकारहित होकर संतुष्ट हो जाता है और साई बाबा को अपना स्वामी स्वीकार कर लेता है। व्यक्ति पूर्णरूपेण उनके सम्मुख आत्मसमर्पण कर देता है और उनसे प्रार्थना करता है कि वे उसे अपना लें। भगवान जिसे इस प्रकार स्वीकार कर लें, शेष जीवन में उसके लिए सुख ही सुख तथा आनन्द ही आनन्द है। जीवन का अर्थ उसके लिए केवल जीवित रहना ही नहीं रह जाता बल्कि जीवन के लिए साई-मार्ग बन जाता है।



३—मानव रूप में भगवान

*अभिजीत रे

संसार की माया तथा ऐन्द्रिय लिप्सा की दलदल में फंसे एक व्यक्ति के लिए भगवान एक बहुत दूर की सम्भावना है। अपने सामान्य अनुभवों की सहायता से वह भगवान के बारे में कुछ भी नहीं जान पाता। एक साधक के लिए भगवान का अस्तित्व वास्तविक होता है परन्तु उसकी दृष्टि में भी भगवान एक दूर स्थित लक्ष्य होता है जिस तक पहुँचने का मार्ग उसे बहुत लम्बा तथा थका देने वाला लगता है। एक योगी की दृष्टि में भगवान दूर कहीं आकाश में बैठा लगता है—एक ऐसा भगवान जिसकी आराधना की जाए, जिसको प्रसन्न रखने का प्रयास किया जाए ताकि योगी अपने कठिन योगाभ्यास का उचित बदला पा सके। परन्तु एक भक्त के लिए भगवान का रूप इन सबसे अलग है। उसके लिए भगवान बहुत निकट की वस्तु है। भगवान को वह एक प्रेयसी के रूप में, किसी की भी अपेक्षा अधिक चाहता है और साथ ही साथ भगवान को अपने अन्दर पाता है।

भक्त की दृष्टि में परमात्मा कोई ऐसा स्वामी नहीं जो अप्रसन्न होकर दण्ड और प्रसन्न होकर पुरस्कार देता रहे। न ही वह कोई ऐसी वस्तु है जिसको कहीं दूर ऊँचाई पर रखा जाए और उससे डर-डर कर

---

* श्री अभिजीत रे एक परिश्रमी छात्र हैं। उनका सम्बन्ध कलकत्ते से है। अपनी बी० एस० सी० की परीक्षा में वे सर्वश्रेष्ठ दस छात्रों में से एक थे। अब वे बंगलौर विश्वविद्यालय से एम० एस० सी० कर रहे हैं।

उसकी आराधना की जाए। वह तो प्रेम दया तथा सुन्दर साकार है। भक्त तो उसको प्रियसी समान समझता है, उससे प्यार करता है।

यही कारण है कि भक्त भगवान को मनुष्य के रूप में खोजता है, मानवीय अनुभव तथा मानवी भावनाओं के क्षेत्र में उसे देखना चाहता है। वह परमात्मा में मानव-गुण देखना चाहता है। वह इस इच्छा से उत्पन्न होने वाली वेदना से तड़पता है कि परमात्मा से मिल जाए, उसे प्राप्त कर ले, अनन्त को सीमित कर ले। ज्ञानी इस बात पर आपत्ति कर सकता है; वह कह सकता है कि परमात्मा तो निराकार, गुणातीत, सर्वज्ञानी तथा सर्वव्यापी है और इस प्रकार परमात्मा को सीमित करना उचित नहीं है, परन्तु भक्त उसका उत्तर देता है—"महाशय, मैं वेदान्त की सब ऊंच-नीच जानता हूँ और उससे संतुष्ट नहीं हूँ। मेरा मन तो परमात्मा को देखने के लिए, उसे भासने के लिए व्याकुल है। मैं चातक पक्षी के समान हूँ जो स्वांति नक्षत्र के जल बिन्दु के लिए तरसता है। मैं स्वयं शरीर रूपी पिंजड़े में बन्द हूँ। मैं भगवान को भी साकार देखना चाहता हूँ। मैं मनुष्य हूँ और मुझे आशा नहीं कि मैं परमात्मा को मानव स्तर पर उतारे बिना उसके मात्र दैवी रूप को देख सकूँ।"

भक्त की यही मानसिक वेदना है; यही अकांक्षा है, यही हार्दिक इच्छा है। इसी पिपासा को तृप्त करने के लिए भगवान युग-युगान्तर से मानवीय रूप में अवतरित होते हैं। वह मानवीय वस्त्र धारण कर लेते हैं, मानवीय सीमाओं में घिर जाते हैं और कभी-कभी मानवीय असफलताओं का शिकार भी बन जाते हैं। ऐसा होना ही चाहिए क्योंकि इस प्रक्रिया का केवल एक ही पक्ष नहीं है। जिस प्रकार भक्त भगवान से मिलने को व्याकुल होता है इसी प्रकार भगवान भक्त से मिलना चाहता है। इसीलिए उसकी ओर से भी कुछ प्रतिक्रिया होती है। वह

भी भक्त की बुद्धि की पकड़ के क्षेत्र में इसी प्रकार आना चाहता है जिस प्रकार भक्त उसके क्षेत्र में प्रवेश करने की इच्छा रखता है। इस प्रक्रिया में कभी-२ तो भगवान अपने भक्तों का सेवक भी बन जाता है।

वह अपने भक्त की कल्पना के आगे झुक जाता है। वह शबरी के झूठे बेर खा लेता है और जटायु का अन्तिम संस्कार करता है। वह अर्जुन का रथवान बन जाता है, उसके घोड़ों को यमुना में नहलाता है और यहाँ तक कि द्रौपदी की खड़ाऊँ अपने हाथ में उठा लेता है।

कभी-कभी भगवान इतना साधारण मानवीय रूप धारण कर लेता है कि भक्त को उसकी उपस्थिति का आभास भी नहीं हो पाता। नन्द तथा यशोदा यही समझने की गलती करते रहे कि गोपाल उनका बेटा है। अर्जुन उस समय तक कृष्ण को अपना सखा समझते रहे जब तक कि उन्होने उनका दैवी रूप नहीं देख लिया। इस प्रकार वह भगवान जो समस्त ब्रह्मांड का सर्वोच्च शासक है, भूत, वर्तमान तथा भविष्य का स्वामी है; अवगमन व गोचर है, स्पर्शनीय बनकर भक्त की पहुँच में आ जाता है।

भक्त डरता काँपता साई बाबा के निवास "प्रशान्ति निलयम्" के रजत-द्वार पर मस्तक झुकाए खड़ा रहता है। यहाँ तक कि द्वार खुल जाता है और जिसे देखने के लिए भक्त जन्म-जन्मांतर से इच्छुक था वह साक्षात् सामने होता है। भक्त मन में सोचने लगता है—"अरे! यही तो दिलों को हरने वाला हरि है, यही तो चितचोर है।" भक्त पुकार उठता है, "यह आपकी अपार दया है कि आप मेरे लिए धरती पर उतर आए। मैं गोलोक की करोड़ों मील की यात्रा स्वयं कैसे कर सकता था? इतने दिनों तक आपके एक बार दर्शन पाने के लिए मैं पत्थरों तथा कंकड़ों में भटकता रहा, इच्छाग्नि में जलता रहा। अब आपके

चरण-कमल सम्मुख हैं। मैं उन पर गिर कर उनको अपने अश्रुओं से धो सकता हूँ। भगवान मैं कितना भाग्यशाली हूँ! अब मुझे आत्म-ज्ञान की भी आवश्यकता नहीं। आपके दर्शन, स्पर्शण तथा संभाषण मेरे लिए वह सर्वोच्च वस्तु है जिसके लिए मनुष्य बाकी समस्त वस्तुओं की अपेक्षा अधिक इच्छा कर सकता है।''

भक्त के मन में यह विचार उमड़ रहे होते हैं कि लाल वस्त्र पहने साई बाबा की दैवी आकृति उसके निकट आ जाती है। बड़े भोलेपन के साथ, जैसे कुछ जानते ही न हों, वे भक्त से पूछते हैं कि उसका नाम क्या है तथा वह कहाँ से आया है। भक्त में उत्तर देने का साहस नहीं हो पाता। वह उस जाज्वल्यमान् आकृति की अद्भुत् आभा में खो जाता है---वे घुँघराले बाल, वह कमल-मुख पर पान की लालिमा से खिलते ओष्ठ, वह हृदय को पिघला देने वाली मुस्कान, नम्रता तथा प्रेम से भरे कमल समान नयन भक्त को ऐसी कोमलता में घेर लेते हैं जिसका जोड़ संसार में कहीं भी नहीं मिल सकता। इस अवसर पर भक्त ही नहीं कठोर हृदय अपराधी भी पिघल जाते हैं। ऐसा लगता है जैसे स्वर्गीय गंगा या पवित्र मंदाकिनी बह रही है और असंख्य हृदयों से असंख्य पाप धुलते चले जा रहे हैं।

ब्रह्माण्ड के स्वामी को कभी वृन्दावन के छात्रों के साथ जाते देखो। वे उनके साथ चलते फिरते हैं, खेलते खाते हैं और उनसे मनोरंजक बातें भी करते हैं और मजाक भी। अपने सामने रखी किसी स्वादिष्ट व्यंजन की प्लेट से एकाध चम्मच खाकर वे रुक जातें हैं और किसी छात्र को अपनी ओर बुलाते हैं। छात्र अपने भाग्य पर गौरव करता उनके पास पहुँचता है और उनका झूठा भोजन पाने की आशा में हाथ फैलाता है—परन्तु साई बाबा एक शरारत-पूर्ण मुस्कान के साथ थाली भी अपने आप [illegible] लेते हैं।

वे यह सब कुछ करते हैं परन्तु वास्तव में सर्वोच्च स्वामी होते हुए भी वे अपना यह पक्ष कभी नहीं दर्शाते। परिणामस्वरूप जो उनके सम्मुख होता है वह यह भूल जाता है कि उसके सामने ब्रह्मांड के स्वामी उपस्थित हैं। ऐसे अवसर पर मुझे यह बात याद आ जाती है कि ब्रह्मा ने वृन्दावन के ग्वालों के पशु लुप्त कर दिए और कृष्ण ने वैसे ही पशु उत्पन्न कर दिए। एक वर्ष तक किसी को कोई अन्तर ही नहीं लगा। ब्रह्मा देखते थे वह दैवी बालक अन्य बालकों के समान अपने साथियों के साथ खेलता-कूदता था। ब्रह्मा आश्चर्यचकित थे कि उस छोटे से बालक ने वह चमत्कार कैसे कर दिया था। तब ब्रह्मा एक दिन एक दृश्य देखते हैं कि उस नीले रंग के बालक के चारों ओर असंख्य विष्णु और असंख्य ब्रह्मा चक्कर काट रहे हैं और हर ब्रह्मा के साथ एक पूर्ण ब्रह्मांड है। इस दृश्य को देखकर ब्रह्मा स्तब्ध रह जाते हैं परन्तु दृश्य लुप्त हो जाता है और फिर वही बालक खेतों में घूमता दिखाई देता है जिसके हाथ में रोटी का टुकड़ा है और जो अपने साथियों को ढूँढ रहा है। परमात्मा एक ग्वाले के रूप में? अविश्वसनीय!

एक वर्ष पहले की एक घटना की चर्चा करके मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ। परीक्षाएँ निकट थीं। साई बाबा ने हम से कहा कि यदि वे वृन्दावन में उपस्थित होंगे तो हम ठीक से अध्ययन नहीं कर पाएँगे। इसलिए उन्होंने पुट्टापर्ती जाने का निश्चय कर लिया। छात्रों ने उनके पैर पकड़ कर याचना की परन्तु वे नहीं रुके। उन्होंने बताया कि यह आभास कि छात्र उनके कारण अपना अध्ययन नहीं कर पाते, उनके मन को दुःख पहुंचाता है। सोमवार का दिन था। स्वामी जी साढ़े आठ बजे चल पड़ने की तैयारी कर रहे थे। प्रार्थनाएँ तो विफल हो चुकी थीं इसलिए छात्र उनके आस-पास बड़ी उदास मुद्रा में खड़े थे। स्वामी जी नीचे आए और अपनी सफेद कार में बैठकर चल दिए।

भारी हृदय लिए हम छात्र निवास में लौट आए। हमारे मन अपने स्वामी की याद से इतने भरे हुए थे कि हम पुस्तकों को पढ़कर समझ ही न सके कि उनमें क्या लिखा है। कोई पन्द्रह मिनट ही बीते होंगे कि किसी ने चिल्लाकर कहा, "स्वामी जी वापस आ गए हैं" और वह उनकी कार के पीछे दौड़ने लगा। बहुत से छात्र बाहर आ गए। मैं भी बाहर आ गया। जो कुछ मैंने देखा मैं उस पर विश्वास न कर सका। सफेद कार पोर्टिको की ओर बढ़ी और स्वामी जी उससे उतर कर ऊपर चले गए। जो कुछ हो रहा था उस पर हम में से बहुतों को विश्वास नहीं हो रहा था। स्वामी जी रुके तथा छात्रों से बोले, "तुम लोग इतना शोर कर रहे थे कि मैं चाबियां भूल गया था।"

स्वामी जी और कुंजियाँ भूल जाएँ! हम स्तब्ध रह गए। हमारे अश्रु हमारे मन की बात कह रहे थे। किसी के मन में शायद अभी भी शंका थी कि कुंजियाँ लेकर स्वामी जी चले जाएँगे इसलिए बड़ी चतुरता से उसने पूछा, "स्वामी जी,! क्या हम सामान रखना आरम्भ करें?" "नहीं" स्वामी जी ने बनावटी क्रोध से कहा, "मुझे शाम को जाना है।" फिर एक सुन्दर मुस्कान उनके चेहरे पर बिखर गई। छात्र मिलकर चिल्लाने लगे, "स्वामी, स्वामी!" स्वामी जी ने ठहरने का निश्चय कर लिया। उन्होंने हमको बाद में बतलाया, "देखो, तुम्हारी पवित्र इच्छा ने मुझे वापस बुला लिया। अब यदि तुम चाहते हो कि मैं यहाँ रहूँ तो तुम लोगों को ठीक से अध्ययन करना होगा।" शायद आप कहें यह भी कोई बात हुई—बड़ी साधारण सी घटना है परन्तु उनको चाहने के अतिरिक्त आध्यात्मिकता में और रखा ही क्या है। उनमें लीन होकर रहना ही आत्मिक जीवन है। ऐसा केवल भगवान के साकार रूप में आने से ही संभव हो सका है। अब हम उस भगवान के बिना रह नहीं सकते।

उनकी दयापूर्ण मुस्कान, उनकी आकृति का वैभव, उनका कोमल प्रेम और सबसे अधिक उनका बच्चों जैसा खिलवाड़ यह सब कुछ हमें इस योग्य बनाता है कि हम अपने हृदयों को भगवान के हृदय से जोड़ लें, अपने को सुख की ऊँचाई तक पहुंचा सकें।

मैंने अपना आशय शब्दों में व्यक्त करने का असफल प्रयास किया है। मैं भली-भाँति जानता हूँ कि जो मैं कहना चाहता हूँ वह शब्दातीत है। मैं केवल अपने हृदय में उन बातों की अनुभूति कर सकता हूँ। "महाराज मैं वेदान्त की सब ऊँच-नीच जानता हुं और उनसे संतुष्ट नहीं हूँ। मेरा मन तो परमात्मा को देखने के लिए, उसे भासने के लिए व्याकुल है। मैं चातक पक्षी के समान हूँ जो स्वांति नक्षत्र के जल बिन्दू के लिए तरसता है। मैं स्वयं शरीर रूपी पिजड़े में बन्द हूँ। मैं भगवान को भी साकार देखना चाहता हूँ। मैं मनुष्य हूं और मुझे आशा नहीं कि मैं परमात्मा को मानव स्तर पर उतरे बिना उसके मात्र दैवी रूप को देख सकूँ!" वे मधुरता साकार हैं तथा उनकी मधुरता इस बात से और भी बढ़ गई है कि उन्होंने अपने दैवत्व पर मानवीय आवरण डाल रखा है।



४–सत्य साई बाबा के विभिन्न स्वरूप

*प्रो० एस० भगवन्तम

सत्य साई बाबा कौन हैं ? इस प्रश्न का कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिलता। उनके लाखों स्वरूप हैं। हर व्यक्ति उस पक्ष के अनुसार इस प्रश्न का उत्तर देता है जो उसने व्यक्तिगत रूप से अनुभव किया है। अनेक वृत्तान्तों में से, जो साई बाबा के संबंध में लिखे गए, एक वृत्तान्त यहाँ दिया जा रहा है। "प्राचीन भारत के एक दूरगामी कोने में एक ऐसा महान् व्यक्ति रहता है जिसके आश्चर्यजनक जीवन के संबंध में जानकर मनुष्य को विश्वास भी नहीं होता। यही अविश्वसनीय पक्ष इनके अवतार होने का लक्षण है। बाबा जी इस बात का जीता-जागता प्रमाण हैं कि स्वतन्त्र रूप से विकसित विवेक समस्त मानव-जीवन का लक्ष्य है। यद्यपि वे देश-देशान्तर में भी भली भाँति प्रसिद्ध हैं फिर भी वे विशेष रूप से भारत के हैं और इस शताब्दी में रहते हुए भी अतीत की विभूतियों की अपेक्षा महान् हैं।"

सत्य साई बाबा के संबंध में कही गई उपर्युक्त बातें अपर्याप्त हैं। यह तो उन अनेक पक्षों में से एक पक्ष है जो किसी ने दूर या

---

*एस० भगवन्तम्, डी० एस० सी० उसमानिया विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति और इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइंस के निदेशक आजकल 'कास्टेड' के अध्यक्ष हैं। वे रक्षा मंत्रालय, भारत के विज्ञान सलाहकार भी रहे हैं।

निकट से देखा है अन्यथा साई बाबा का चमत्कारी व्यक्तित्व वर्णातीत है।

किसी भी धर्म या जाति का व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, थोड़े से प्रयत्न से प्रशान्ति निलयम् गाँव में जाकर उनसे स्वतन्त्रता पूर्वक मिल सकता है। प्रतिदिन बाबा जी के भक्त उनसे मिलकर व्यक्तिगत रूप से आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति प्राप्त करते हैं। यदि कोई व्यक्ति उनसे उदंडता तथा अहम् की भावना से रहित होकर मिले तो यह दुर्लभ सौभाग्य प्राप्त कर सकता है। कुछ चुने हुए आगन्तुकों को यह सुअवसर भी प्राप्त हो जाता है कि वे बाबा जी से उनके निजी कक्ष में मिल सकें। इस प्रकार की भेंट साधारणत: किसी पहली भेंट के अनुभव की पराकाष्ठा होती है और बहुत से भक्तों के जीवन को बदल कर रख देती है। उनके निजी कक्ष में जाकर बहुत से लोगों की शंका दृढ़ आस्था में परिवर्तित हो चुकी है, बहुत से दु:खियों को आशातीत सान्त्वना प्राप्त हो चुकी है और अनेकों को जीवन में पहली बार दैवी प्रेम तथा दैवी स्पर्श का अनुभव प्राप्त हो चुका है। बहुत से घमण्डी उनके कक्ष में शेर की भांति गए तथा गाय की भाँति बाहर निकले। यह कहा जाता है कि "जब तक भगवान स्वयं सहायता न करे आध्यात्मिक रहस्य भक्त की बुद्धि की पकड़ में नहीं आते।" बाबा जी ने अनेकों को यह रहस्य समझा दिया है। संसार के कोने-२ से आए असंख्य व्यक्तियों को वे यह रहस्य नित्य-प्रति समझाते हैं।

साई बाबा के व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि वे अपने प्रवचनों में गीता की शिक्षा की ओर बहुधा संकेत करते हैं और प्रत्येक धर्म के अनुयायियों से उस शिक्षा को मानने का आग्रह करते हैं। गीता की बात करते हुए वे यह बात स्पष्ट रूप से कहते हैं कि गीता की शिक्षा का केवल ज्ञान प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं

है। वे कहते हैं कि भगवान की निकटता प्राप्त करने के लिए गीता की शिक्षा पर पूर्णरूपेण अथवा आंशिक अमल करना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार यदि भारतीय परम्परा तथा महान् ग्रंथ गीता से अपरिचित व्यक्ति प्रशान्ति निलयम् में आते हैं तो उनको गीता की शिक्षा आंशिक रूप से प्राप्त करने से भी लाभ होता है। संसार के भिन्न-२ देशों तथा भिन्न-२ विचारधाराएं रखने वाले विद्वानों ने स्वीकार किया है कि प्रत्येक धर्म के अनुयायियों के लिये गीता के श्लोक माननीय हैं। उदाहरणार्थ आल्डस हक्स्ले के शब्दों में—"गीता अमर दर्शन संबंधी महाग्रंथों में सबसे अधिक स्पष्ट ग्रंथ है। इसलिए यह न केवल भारत के लिये बल्कि विश्व के लिए हर युग में महत्वपूर्ण है।"

राधाकृष्णन् द्वारा गीता पर लिखे एक लेख से, मैं दो अंश प्रस्तुत कर रहा हूँ जिनमें उन व्यक्तियों की मानसिक स्थिति का सुन्दर वर्णन किया गया है जो अपनी आत्मा की खोज में लगे रहते हैं तथा अमर सत्य की एक झलक पाने के लिये व्याकुल रहते हैं।

वे उस ओर संकेत करते हुए, जब अर्जुन झिझक तथा निराशा की दशा में युद्ध करने से इन्कार करके बैठ जाते हैं, कहते हैं कि यह एक उदाहरण है एक साधारणत: होने वाली घटना का और अर्जुन प्रतीक है अन्धकार से प्रकाश की ओर जाने का। इस अवसर पर महान् दार्शनिक राधाकृष्णन् जी व्याख्या करते हैं :—

> "जीवन की चिन्ताएं व्यक्ति को विपदाओं की चक्की में पीस डालती हैं। प्रत्येक व्यक्ति पर दु:ख का समय आता ही है क्योंकि प्रकृति को कोई जल्दी नहीं होती। जब वह सब कुछ करके हार जाता है, जब वह निराशा के घोर अंधकार में घिर जाता है, तब वह क्षण आता है कि वह दैवी प्रकाश की एक

झलक पाने के लिये अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार हो जाता है। जब वह शंका, नास्तिकता, जीवन से घृणा तथा निराशा के अन्धकार में घिर जाता है तो बस भगवान ही उसे बचा सकता है।"

डा० राधाकृष्णन् अध्याय के अन्त में अर्जुन की झिझक तथा निराशा की चर्चा करते हुए निम्नलिखित शब्दों में टीका करते हैं :—

"हम में से अधिकतर बिना अनिवार्य प्रश्न पूछे अपना जीवन व्यतीत करते रहते हैं। ऐसा तो कम ही होता है कि जब सपनों के महल गिर पड़ें और दुःख, तथा पश्चात्ताप की पीड़ा से घबराकर मनुष्य चीख उठे 'हमने' जन्म क्यों लिया ? जीवन लीला का अर्थ क्या है ? हम यहाँ से कहाँ जाएंगे ?"

भगवद्-दर्शन से पहले साधारणत: मानव-मन की यही दशा होती है। राधाकृष्णन् जी के लेख के दो अंश मैंने इसलिये चुने हैं कि इनमें उस मानसिक अवस्था की चर्चा की गई है जो उन व्यक्तियों की भी होती है जो साई बाबा से मिलने प्रशान्ति निलयम् आते हैं। नाम-मात्र के बुद्धि जीव साई बाबा के पास तभी आते हैं जब वे निराशा में घिरे हों। इन लोगों का अनुभव भी लगभग ऐसा ही होता है जैसा कि इन दो अंशों में बताया गया है। साधारणत: ऐसी मनोस्थिति का परिणाम भगवान के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण होता है। यदि किसी के मन में अब भी यह अहम् पूर्ण भ्रांति रह जाती है कि उसका धन या उसकी बुद्धि उसकी समस्या का समाधान कर सकती है तो यह भावना आत्मसमर्पण में बाधा ही सिद्ध होती है। बाबा जी बहुधा हृदय को छू जाने वाला यह वर्णन करते हैं कि भगवान अपने उन भक्तों की सहायता के लिए आते हैं जो उनमें पूर्ण आस्था रखते हैं। बाबा जी के व्यक्तित्व का यह पक्ष भी अनेक भक्त भली-भाँति देखते जानते हैं।

वर्तमान समय में बाबा जी के जिस स्वरूप की सबसे अधिक चर्चा हुई है वह है उनकी चमत्कार दिखाने की क्षमता ! यद्यपि इस पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है परन्तु इस पक्ष को समझना या इसकी व्याख्या करना संभव नहीं। किसी अवसर पर वह किसी रोगी को स्वस्थ कर देते हैं तो वहां प्रस्तुत व्यक्तियों का उनके देवत्व में विश्वास और भी दृढ़ हो जाता है। अपने तैंतालिसवें जन्मदिवस पर एक पहिएदार कुर्सी पर बिठाकर एक अपंग सत्तरवर्षीय अमेरिकन स्त्री को उनके सम्मुख लाया गया। उन्होंने उस स्त्री को देखा और आज्ञा दी कि वह उठ खड़ी हो और उनके साथ चले और वह स्त्री उठकर चलने भी लगी। बाबा जी की सेवा में लाए जाने से दो वर्ष पूर्व से उसकी स्थिति ऐसी दयनीय थी कि चलना तो दूर की बात है, वह बिना सहारे अपने पांव पर खड़ी भी नहीं हो सकती थी। यह चमत्कार हजारों ने देखा और आश्चर्यचकित रह गए।

साई बाबा चाहे प्रशान्ति निलयम् में हों या कहीं और, ऐसी रहस्यपूर्ण घटनाएं सामान्यतया प्रतिदिन ही होती हैं जो दर्शकों को स्तब्ध कर देती हैं।

हमें एक बात याद रखनी चाहिए कि विज्ञान का अध्ययन करने से कोई भगवान से दूर नहीं हो जाता। बहुत से अन्य व्यक्ति जिनका विज्ञान से कोई संबंध नहीं, नास्तिक हैं। इनमें शिक्षित व्यक्ति भी सम्मिलित हैं और अशिक्षित भी। विज्ञान के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों का ज्ञान रखने वाले विद्वान् भी आपको नास्तिक मिलेंगे। वैज्ञानिक गूढ़ प्रश्न पूछता है और उनके तर्कपूर्ण उत्तर भी चाहता है। इसलिए बहुत से व्यक्ति वैज्ञानिक को घमण्डी कहने-समझने लगते हैं। वास्तव में विज्ञान किसी को भगवान से दूर नहीं करता क्योंकि विज्ञान स्वयं निरंकुश तथा निर्सिद्धान्त नहीं है। कई वर्ष पहले जब मैं साई बाबा

से प्रथम बार मिला था तो उन्होंने वैज्ञानिकों को "भटक हुए व्यक्ति" कहा था और उनकी विचारधारा का मजाक उड़ाया था। उन्होंने मुझसे पूछा था "अच्छा अपनी बात बताओ। क्या तुम प्राचीन ग्रंथों में विश्वास रखते हो?" उनके इस प्रश्न से मुझे धक्का-सा लगा था। हमारे परिवार में तो वैदिक शिक्षा तथा संस्कृत का ज्ञान पारस्परिक रूप से चला आया है इसलिए मैंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि मैं धर्म तथा संस्कृति से अनभिज्ञ नहीं हूँ। इस संदर्भ में मैंने उनको वह घटना भी सुनाई जो अमरीकी वैज्ञानिक जूलियस राबर्ट ओपन हैमर (Julius Robert Oppenheimer) के साथ घटी थी। इस व्यक्ति ने तीस वर्ष पहले अणु बम के विस्फोट का परीक्षण किया था। इस घटना का वर्णन राबर्ट जंग की पुस्तक "एक हजार सूर्यों से अधिक उज्ज्वल" Brighter than the 1000 Suns से ली गई कुछ पक्तियों द्वारा भली-भाँति किया जा सकता है :—

"लोग विस्फोट की असाधारण शक्ति से स्तब्ध रह गये। ओपन हैमर कन्ट्रोल-रूम में कल-पुर्जों से जूझ रहा था कि भगवद्‌गीता के कुछ श्लोक उसके मस्तिष्क में उभर आए—

दिव्य सूर्य सहस्त्रस्त्र भवेद् युगपद उत्तिष्ठाः।
यदि मा सदृश सा स्याद् भासस्य।स्य महात्मनः॥

यदि एक हजार सूर्यों का प्रकाश आकाश में बिखर जाए तो वह भगवद् प्रकाश के समान होगा···और जब अणु बम का विशाल धुंआ दूर आकाश में ऊपर उठा तो ओपन हैमर को भगवद् गीता की अन्य पंक्ति स्मरण हो आई—"मैं मृत्यु हूँ जो संसारों का विनाश कर डालती हूँ।" यह बात श्री कृष्ण ने कही थी जो भगवान थे परन्तु ओपन हैमर तो एक साधारण मनुष्य था जिसके हाथ में एक महान विनाशकारी अस्त्र आ गया था।

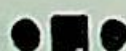
अपनी सफलता की पराकाष्ठा पर पहुँचकर उस महान् वैज्ञानिक ने भगवदगीता के जो शब्द कहे उनकी ओर संकेत करते हुए मैंने बाबा जी से कहा कि यदि कोई सच्चा ज्ञानी है तो वह अवश्य ही प्राचीन ग्रंथों तथा उपनिषदों से परिचित होगा। केवल वे ही इनके सम्बन्ध में बेतुकी बातें करते हैं जिनका ज्ञान अधूरा होता है। उस समय हम चित्रावती नदी के किनारे रेत पर बैठे थे। पूनम का चन्द्रमा नभ में चमक रहा था। हमारे आस पास लगभग पचास व्यक्ति और बैठे थे। बाबा जी मुझसे बोले, "तुमने गीता की बात छेड़ी है। क्या तुम गीता की एक प्रति चाहते हो ?" यह कहकर उन्होंने अपनी मुट्ठी में रेत भर लिया। रेत गीता की एक मुद्रित प्रति में बदल गया और वह प्रति उन्होंने मुझे दे दी। अपनी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए मैने उनसे पूछा कि वह प्रति कहाँ मुद्रित हुई थी। उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया "साई प्रेस में।" उत्तर रोचक भी था और इसने रहस्य को और भी गूढ़ बना दिया। कुछ समय पश्चात मैंने उस पुस्तक के पन्ने उलट-पुलट कर प्रेस का नाम देखना चाहा परन्तु वह तो किसी प्रेस में मुद्रित ही नहीं हुई थी। मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। मेरा मस्तिष्क चकरा रहा था क्योंकि यह बात तो भौतिक शास्त्र के उन सिद्धान्तों के विपरीत थी जिनके पक्ष में मैं जब भी था और अब भी हूँ। मैं तो भौतिक सिद्धान्तों को अकाट्रीय समझता हूँ परन्तु मैं यह देखकर बहुत बार चकित हुआ कि साईं बाबा ने मेरे सम्मुख ही भौतिक शास्त्र के सिद्धान्तों से ऊपर उठकर चमत्कार दिखाए। मैंने भौतिक शास्त्र स्वयं पढ़ा तथा दूसरों को भी बताया कि इसके सिद्धांत अटूट हैं। स्वाभाविक है कि बाबा जी द्वारा उनके टूटने पर मेरे मन में द्विधा उत्पन्न हुई होगी। हां अब मेरा यह विश्वास बन चुका है कि ये सिद्धान्त बस उसी समय तक अटूट हैं जब तक इनका सम्बन्ध सामान्य मनुष्यों से रहता है या जब तक कि इनमें विश्वास बना रहता है।

बाबा जी कहते हैं कि सद् शिक्षा वही नहीं जो हमको यह बताती समझाती है कि हमारे आस-पास फैली प्रकृति में क्या-२ दिखाई देता है बल्कि वास्तविक शिक्षा उसे कहा जाना चाहिये जो हमारी बुद्धि तथा आत्मा को भी प्रबल बनाये। वे युवकों को यह भी समझाते हैं कि शिक्षा का अर्थ केवल डिग्रियां लेकर नौकरी की भिक्षा माँगना नहीं है। उनका इस प्रकार की बातों से उनके व्यक्तित्व का एक और पक्ष सामने आता है। अपने इस पक्ष के प्रदर्शन के प्रमाण में वे भारत के भिन्न-भिन्न कोनों में युवक युवतियों के लिये हर स्तर के शिक्षा संस्थान स्थापित कर रहे हैं तथा उनके प्रबन्ध की देख रेख कर रहे हैं। इस बात का महत्त्व तब ज्ञात होता है जब आप उन छात्रों से बात-चीत करें जो इस प्रकार के संस्थानों में शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं या कर चुके हैं और यह ऐसी बात है कि जब प्रत्यक्ष रूप से हमारे सामने आती है तो विश्वास करना ही पड़ता है।

साई बाबा के जीवन का एक और महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे उन लोगों के हृदय में महान् परिवर्तन उत्पन्न कर देते हैं जो उनके सम्पर्क में आते हैं। इनमें हर प्रकार के, हर अवस्था के स्त्री पुरुष होते हैं। वे उनसे निस्वार्थ समाज सेवा की चर्चा करते हैं और वे इस अद्वितीय व्यक्तित्व से प्रभावित होकर एकदम बदल जाते हैं। प्रशान्ति निलयम् में आप हृष्ट-पुष्ट धनाड्य व्यक्तियों को झाड़ू लगाते, परिश्रम करते तथा दीन दुःखियों की निष्काम सेवा करते हुए देख सकते हैं। सारे वातावरण में सेवा भाव व्याप्त लगता है। बहुत से व्यक्ति तो सेवा करने में होड़ लगाते हैं और सेवा को अपनी साधना का अंग समझते हैं। पक्के शराबी उनके पास आकर ऐसे बदले कि फिर माद्री को छुआ तक नहीं। स्वयं उन व्यक्तियों या उनके संबंधियों से बात करो तो पता लगेगा कि वे इस चमत्कारी परिवर्तन के कारण बाबा जी के

कितने आभारी अनुभव करत हैं। वे युवक जो सड़क पर लगे बिजली के बल्बों को तोड़ना तथा सार्वजनिक सम्पत्ति को नष्ट करना अपना सामान्य अधिकार समझते हैं, सत्य साई बाबा के सम्पर्क में आकर सफाई का काम करने लगते हैं, आश्रम की गायें तक चराने लगते हैं। बहुत से लोगों में यह परिवर्तन स्थायी हो जाता है। इस प्रकार के परिवर्तन का महत्व कितना है यह उनसे पूछो जिनको जीवन में यह अमूल्य निधि प्राप्त हुई है। मैं समझता हूँ कि लोगों के हृदय तथा विचारधारा में परिवर्तन लाना वास्तव में एक महान् चमत्कार है क्योंकि संसार में बहुत से नेता इस प्रयास में लगे हैं परन्तु उन्हें सफलता प्राप्त नहीं होती।

जिस प्रकार का जीवन सत्य साई बाबा प्रातः से संध्या तक व्यतीत करते हैं और जिस नित्यक्रम को वे प्रतिदिन निभाते हैं, अपने अन्दर असंख्य पक्ष रखता है। जिन व्यक्तियों को उनके निकट रहने, उनको प्रतिदिन देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे भली भाँति जानते हैं कि बाबा जी अपने विचार, कथन तथा कर्म में ऐसा संतुलन रखते हैं जो उनकी अमानुषी शक्ति का प्रतीक है और उस कथन को प्रमाणित करता हैं जो बाबा जी कहते हैं "मेरा जीवन मेरा संदेश है।"



५–अवतार की ओर

*वाई० सतीश चन्द्र

अभी सूर्योदय नहीं हुआ था परन्तु अन्धेरा भी नहीं था। एक पहाड़ी चट्टान की ढलान पर एक युवक कुछ इस प्रकार पहुंच गया कि उसके गिरने का भय था। युवक को पता था कि उसमें इतनी क्षमता नहीं है कि अपने को लुढ़कने से रोक ले फिर भी वह इस प्रयत्न में लगा रहा कि दिशा तथा मार्ग न खो जाएँ।

एक स्थान पर मार्ग में बाईं ओर एक गहरी खाई और दूसरी ओर एक बड़ा-सा पत्थर आ गया। दोनों ओर तुरन्त मृत्यु की संभावना थी।

युवक लड़खड़ाता हुआ नीचे की ओर भागता जा रहा था कि कुछ पत्थर उसके पैर के नीचे से फिसल पड़े। उसकी लड़खड़ाहट और बढ़ गई। अब मृत्यु अधिक निकट आ गई थी।

ऐसे में एक अनहोनी बात हुई। युवक गिरा अवश्य, परन्तु मरा नहीं। उसके खरौंच तक नहीं आई क्योंकि एक दयावान् शक्ति ने उसे बचा लिया था। जब वह गिर रहा था एक उज्ज्वल दैवी प्रकाश ने उसे अपने घेरे में ले लिया। युवक ने अनुभव किया मानव सुरक्षा तथा स्नेह की तरंगें उठ रही हैं।

---

*सतीश चन्द्र कालेज के पहले बी० काम० बैच के छात्र थे। वे विश्वविद्यालय में अपनी अन्तिम परीक्षा में सर्वोच्च दस छात्रों में रहे। अब चार्टर्ड एकाउन्टैन्सी की परीक्षा देने के लिए वे कड़ा परिश्रम कर रहे हैं। एक कुशाग्र बुद्धि छात्र होने के अतिरिक्त वे संगीत, विशेषत: बाँसुरी वादन में [illegible] रखते हैं।

मुझे कभी-कभी यह सब कुछ याद आ जाता है जो फरवरी १९६९ में एक दिन आश्चर्यजनक रूप से हुआ था। मैं पहाड़ी से गिर कर सत्य साई बाबा के कर कमलों में पहुँच गया था। इसके लिए अपने रक्षक का मैं आज भी आभारी हूँ।

मेरे भगवान सत्य साई का एक नियम है जो हम सबको उनकी ओर आकर्षित करता है। हो सकता है आप उनसे हजारों मील दूर हों, हो सकता है आपने उनके बारे में सुना भी न हो परन्तु आप इस अवतार के स्नेह-सूत्र में अवश्य बँधे हुए हैं। यह सिद्धांत कुछ इस प्रकार कार्यशील है कि यदि आप भगवान से प्यार करते हैं तो अवश्य ही उस समय इस संसार में जन्म लेंगे जबकि अवतार भी इस धरती पर शोभायमान हो। भगवान तक पहुँचने की मेरी यात्रा बड़ी लम्बी भी रही है और उलझी हुई भी। यह यात्रा युग-युग चलती रही है और शारीरिक से अधिक चमत्कार से भरपूर क्रमबद्ध आध्यात्मिक विकास से गुज़री हैं। मेरी इस यात्रा का लक्ष्य यही भगवान थे और इस यात्रा का मुझ से प्रारम्भ कराने वाले भी स्वयं यही भगवान थे।

यह यात्रा, जो प्रत्येक जीव को करनी पड़ती है, आत्मा के शारीरिक रूप में भगवान के सामने आने पर समाप्त नहीं हो जाती बल्कि उस समय समाप्त होती है जब जीव अवतार के हृदय तक, उसकी वास्तविकता तक पहुंच जाता है। इस प्रकार अवतार की ओर मेरी यात्रा अभी भी जारी है।

अपने सौभाग्यपूर्ण जीवन के पिछले बीस वर्षों पर दृष्टि डालता हूँ तो मुझे आत्मग्लानि होती है कि मैं इनको श्रेष्ठ ढंग से नहीं बिता सका। मैं अपने जीवन को इसलिए सौभाग्यपूर्ण समझता हूँ क्योंकि इस जीवन के कई वर्षों तक मुझे अवतार साई बाबा के साथ रहने का

सुअवसर मिला है। काश ! मैं बीते जीवन के उन मधुर क्षणों में फिर से जी सकता। परन्तु ऐसा संभव नहीं है कि बीते हुए दिन फिर से लौट आएँ। हाँ एक आशा है और वह यह कि बीते जीवन में मुझमें जो त्रुटियाँ रही हैं वे फिर से न दोहराई जाएँ।

मूल रूप से यह मानव-स्वभाव की बात है। निस्संदेह मानव को विवेक तथा बुद्धि प्रदान की गई है परन्तु कभी विवेक और बुद्धि मनुष्य का साथ छोड़ देती है और फिर दुःख का काल आरम्भ हो जाता है। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ है। ऐसा लगता है कि अवतार की ओर मेरी यात्रा निरुद्देश्य रही है। या यूँ समझो कि मैं गलतियाँ कर-कर के सीखने की प्रक्रिया से गुज़रता रहा हूँ।

शायद भगवान ने मुझे प्रथम बार धूल के एक कण के रूप में पैदा किया हो। तब से अब तक उसकी ओर स्पष्ट मार्ग पर चलने की बजाए, अधिकतर मैं टेढ़े-मेढ़े तथा भटकन भरे मार्ग पर चलता हुआ उसकी ओर बढ़ता रहा हूँ। यों तो यह भटकन भी एक वरदान है, उनके प्रेम का प्रतीक है परन्तु फिर भी यात्रा करने और भटकने में बड़ा अन्तर होता है।

मेरी यह यात्रा मेरे लिए एक विशाल संकट रही है, मुझमें त्रुटियाँ भी रही हैं। मैं यह सोचकर काँप उठता हूँ कि यदि भगवान मेरी ओर अपनी कृपा दृष्टि न करते, मुझे धरती के स्वर्ग वृन्दावन तक न खींच लाते तो मेरी दशा कितनी दयनीय होती।

वृन्दावन ऐसा स्थान है जहाँ आकर आध्यात्मिक यात्रा की निरुद्देश्य भटकन समाप्त हो जाती है। आप सीधे अवतार की ओर बढ़ने लगते हैं। यहाँ आकर भगवान द्वारा दी गई समस्त मानवीय क्षमताएँ उचित ढंग से कार्यशील हो जाती हैं। सारा वातावरण एक

गम्भीर अलौकिक शन्ति से परिपूर्ण रहता है। यहाँ की सुन्दर धरती पर अवतार के चरण-चिह्न दिखाई देते हैं और यहाँ की हरियाली में उनकी सुगंध रची रहती है। यहाँ का कण-कण दया का प्रतीक है। यहाँ आकर मनुष्य में कर्तव्य-परायणता जाग उठती है।

यही कारण है कि वृन्दावन के छात्र विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में श्रेष्ठ रहते हैं। यदि वे यहाँ न आते तो शायद लापरवाई के कारण सामान्य छात्र रहते। यही कारण है कि वे छात्र जो संगीत में थोड़ी बहुत रुचि रखते हैं, यहाँ आकर गायन तथा वादन में दक्ष हो जाते हैं। यह छोटे-छोटे चमत्कार जो हर छात्र के लिए होते हैं असंख्य हैं। बड़े-२ चमत्कारों के बारे में तो वृन्दावन से बाहर रहने वालों को पता भी नहीं चलता।

मुझे कुछ ऐसी घटनाओं को देखने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। शिक्षा ग्रहण करने की अवधि के बीच वृन्दावन ने मुझे कलात्मक तथा सौंदर्यात्मक दृष्टि प्रदान की है परन्तु इससे भी बढ़कर मेरे जीवन को एक लक्ष्य दिया है और वह है भगवान सत्य साई बाबा का निरन्तर स्मरण ! यह अमूल्य वस्तु मुझे जीवन में और कहीं नहीं मिली।

भगवद पथ पर चलने वाले पथिकों (राहियों) को वृन्दावन में ऐसा अमृत मिलता है जो उनकी आध्यात्मिक-पिपासा को तृप्त कर देता है। यहाँ आकर पथिक को थोड़ा विश्राम मिल जाता है और दूसरी ओर उसकी यात्रा भी जारी रहती है। यदि कोई बुद्धिमान है तो वह सदा-सदा के लिए ही यहाँ रुक जाएगा क्योंकि उसकी मंजिल भी तो यहीं अवतार के चरणों में है। वृन्दावन वास्तव में कल्पक्षेत्र है जहाँ की पवित्र भूमि वह सब कुछ प्रदान करती है जिसकी इच्छा पवित्र हृदय करते हैं।

मेरा भगवान पथ पर भटकते रहना वृन्दावन में आकर समाप्त हो चुका है। मैं अब कह सकता हूँ कि मैंने स्वयं भगवान की सहायता

से ठीक ढंग से भगवान की ओर बढ़ते रहना सीख लिया है। पहले मैं अपनी ग़लतियों से कुछ सीखने का प्रयास किया करता था। वह पुरानी आदत अभी समाप्त नहीं हुई है और अब भी कभी-२ भूल हो ही जाती है। फिर भी मुझे विश्वास है कि अपूर्ण ढंग से भगवान को पाने का मेरा प्रयास यहाँ रहकर पूर्णरूप से समाप्त हो जाएगा।

यह विश्वास मेरे अन्दर प्रिय भगवान सत्य साई की प्रेरणा से ही उत्पन्न हुआ है। वह शरीर और वह जीवन जो उन्होंने मुझे प्रदान किया है, एक नाव के समान है। मैं इस नाव में उनकी ओर बढ़ रहा हूँ। वह मेरी नाव के मांझी हैं। उनका प्रेम एक सरिता है, उनका प्रेम एक प्रवाह है, उनका प्रेम सूर्य का प्रकाश है और मैं उनके प्रेम को पाने के लिए उनकी ओर बढ़ रहा हूँ।



६—रूपान्तर

रविन्द्र पी० शराफ़

पिछले दो सौ वर्षों में विज्ञान के क्षेत्र में आश्चर्यजनक उन्नति हुई है। मनुष्य ब्रह्मांड तथा अपने बारे में जो कुछ जानता था वह आज के ज्ञान के अनुपात में बहुत ही थोड़ा था। सृष्टि की इकाई परमाणु है, इस खोज से अनुसंधान के नए द्वार खुले और विज्ञान में दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होने लगी। इस आश्चर्यजनक प्रक्रिया की पराकाष्ठा वह ऐतिहासिक घटना थी जब मनुष्य ने चन्द्रमा पर पग रखा। परन्तु बहुत कुछ करने पर भी विज्ञान मनुष्य को शान्ति नहीं दे सका जबकि शान्ति मनुष्य के लिए सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

मनुष्य ने अन्तरिक्ष में हज़ारों मील की यात्रा कर डाली परन्तु वह शान्ति प्राप्त नहीं कर सका। यदि मनुष्य ने एक इंच भी अपनी आत्मा के अन्दर यात्रा कर ली होती तो उसे दैवी-प्रेम के स्रोत से शान्ति का शीतल जल प्राप्त हो जाता। इससे उसकी सुख तथा आनन्द की प्यास बुझ जाती और जीवन की जटिल पहेली का उत्तर मिल जाता। उसे वह सब कुछ मिल जाता जो समस्त सांसारिक वस्तुएँ मिलकर भी नहीं दे सकतीं।

प्रयास करते हुए भी शान्ति के न मिलने का कारण प्रेम की कमी है। एक परिवार के सदस्यों में प्रेम नहीं, एक देश के रहने वालों में प्रेम नहीं, विश्व में प्रेम नहीं। युवक कहते हैं कि उनको माता-पिता से पर्याप्त प्रेम नहीं मिला, वे नौकरों की गोद में पले बढ़े। इसका

परिणाम यह निकला कि आज एक बालक को अपनी माता की कोई परवाह नहीं परन्तु उसकी आया मर जाती है तो एक लड़का उस पर आँसू बहाता है परन्तु अपनी माँ की मृत्यु पर सिसकता भी नहीं, माता-पिता की अपनी शिकायतें हैं। प्रहार तथा प्रतिप्रहार का यह चक्कर कुछ न कुछ इस प्रकार चल पड़ा है कि समाज में घृणा तथा क्रोध का वातावरण बन गया है। युवकों की दशा वास्तव में दयनीय है। प्रेम तथा आदर्श की खोज में वे जिधर भी जाते हैं उनको लालसा, ईर्ष्या तथा घृणा ही दृष्टिगोचर होती है।

स्थिति जब ऐसी है तो स्वाभाविक रूप से युवक सांसारिक आकर्षणों के पीछे भागते हैं और जीवन के कड़वे पक्ष में मधुरता खोजने का प्रयास करते हैं। उन्हें यह सब कुछ बड़ा सुखद प्रतीत होता है परन्तु इसका अन्त अत्यन्त दयनीय तथा दुःखदायी होता है। उनमें ऐसी निराशा उत्पन्न हो जाती है जिसका वर्णन करना भी कठिन है। नष्ट आशाओं तथा असीम दुःख के अन्धकार में यदि उन्हें कहीं ज़रा सा प्रकाश दिखाई देता है तो स्वाभाविक रूप से वे उसकी ओर दौड़ पड़ते हैं।

समस्त युवकों की भाँति मैं भी प्रेम तथा आशा की उस किरण की खोज में था जो मुझे जीवन का ठीक मार्ग दर्शाए। अपने जीवन में मैंने यह खोज निरन्तर जारी रखी परन्तु हुआ यह कि जिस व्यक्ति या वस्तु से मैंने प्रेम किया उसमें दुःखदायी अपूर्णता का अनुभव किया परन्तु अपनी इस खोज में मैंने भगवान को पा ही लिया या यों कहिए कि भगवान ने मुझे खोज लिया। मुझे प्रेम, दया, आकर्षण तथा वैभव का अनन्त स्रोत मिल गया मैंने अपने जीवन की बागडोर उनके हाथों में दे दी और मेरा विश्वास है कि वह इसको उचित लक्ष्य की ओर ले जायेंगे। अब जबकि मैंने उन्हें अपना आराध्य तथा अपना जीवन-लक्ष्य बना लिया है मैं कह सकता हूँ

"जीवन गणित की भाँति है
मित्र बढ़ाओ
शत्रु घटाओ
जीवन में आनन्द को गुणा करो
और—दु खों को विभाजित !"

सुख तथा शान्ति के इस स्वर्ग में पहुँचकर मैंने अनुभव किया है कि हर वस्तु के प्रति मेरा दृष्टिकोण बदल गया है। जो वस्तुएँ कभी मेरे लिए बड़ी आवश्यक थीं अब बहुत पीछे छूट गई हैं। जीवन की सुन्दरताओं की नई मान्यताएँ प्राप्त हो गई हैं। मैं यहाँ दो उदाहरण देकर इस बात को स्पष्ट करूँगा।

मुझे नीले आकाश से, खिलते हुए फूलों से, बहती नदियों तथा बर्फ से ढके पहाड़ों से सदा प्रेम रहा है। मेरी दृष्टि में हिमालय की बर्फीली चोटियों के पीछे से उदय होता या महासागर में अस्त होता सूर्य अत्यन्त सुन्दर लगता था परन्तु जब मैंने भगवान सत्य साई को देखा तो मुझे लगा कि वे सूर्यस्त और सूर्योदय से अधिक सुन्दर हैं।

वे मुझे प्रेम, दया, आकर्षण तथा वैभव का साकार प्रतीत हुए। मुझे याद है कि मैंने एक साथी से कहा था कि भगवान की मुस्कान शान्तिवर्धक है, उनका चेहरा मनोहर है, उनकी वाणी उत्साहजनक तथा उनकी सलाह प्रकाशमय है। मैंने ऐसा क्यों कहा था उसका कारण उनके एक पत्र के एक अंश से ज्ञात होगा। यह पत्र उन्होंने छात्रों को लिखा था—"तुम सब मेरी ओर आओ। तुम अपने को मुझ में देखोगे क्योंकि मैं स्वयं को तुम में देखता हूँ। तुम सब मेरे ही रूप हो। मेरा देखना प्रेम करना है। मैं इससे भिन्न नहीं हो सकता।" क्या हृदयस्पर्शी संदेश है? ऐसा स्नेहपूर्ण पत्र पाकर किस का हृदय आनन्द

विभोर न हो जाएगा ? इस प्रकार के पत्रों द्वारा वे हमको बताते जताते रहते हैं कि हमारे अन्दर दैवत्व निहित है। क्या मैं यह ठीक नहीं कहता कि वे प्रेम साकार हैं ?

गणित में मुझे बचपन से ही रुचि रही है। जब मैं किंडरगार्टन में था तो मेरे लिए यह समझना भी बड़ा कठिन था कि १ + १ दो क्यों होते हैं—तीन क्यों नहीं होते। आगे बढ़ा तो मुझे क, ख, ग की समस्याएँ सुलझानी पड़ीं। उससे भी अगली कक्षाओं में क, ख, ग, एक्स, वाई, ज़ेड में बदल गए और फिर मुझे हल करनी पड़ीं समीकरण की समस्याएं ! मुझे बड़ा अजीब सा लगता था कि कई पन्ने तथा कई घण्टे नष्ट करने के पश्चात् ज्ञात होता था कि एक्स तो ०·०००१ के बराबर है और वाई ०·००००१ के बराबर और ज़ेड उससे भी कम। मैं समीकरण करते-करते ऊब गया। उस समय मुझे पता नहीं था कि प्रेम का भी एक समीकरण (Equation) होता है। यह पक्ष मुझे भगवान सत्य साई ने दर्शाया— "मेरी ओर एक क़दम बढ़ो, मैं तुम्हारी ओर दस क़दम बढ़ूँगा। मेरे लिए एक आँसू बहाओ, मैं तुम्हारे सैकड़ों दुःख दूर कर दूँगा।" क्या अद्भुत समीकरण है जहाँ एक, दस और सौ के बराबर है ! सत्य साई के जीवन में यह समीकरण केवल कल्पना या सिद्धान्त में नहीं बल्कि दिन प्रति-दिन के क्रियात्मक-जीवन में व्यापक है। क्या यह सर्वश्रेष्ठ प्रेम नहीं है ? मुझे स्वयं एक हृदयस्पर्शी अनुभव हुआ है और मुझे ज्ञात हो गया है कि भगवान सत्य साई के शरीर का एक-एक जीवाणु प्रेम से बना है। कभी-२ वे छात्रों के साथ कठोरता का भी व्यवहार करते हैं परन्तु उस कठोरता में भी स्नेह निहित होता है। वे हमारे माता-पिता भी हैं इसलिए उनको हमारी त्रुटियाँ दूर करने का भी सदा ध्यान रहता है।

गतवर्ष रामनवमी के दिन सत्य साई बाबा पुट्टापार्थी से दोपहर के [illegible] लौटे। [illegible] भी था इसलिए उनको अपने

बीच देखकर हमारी प्रसन्नता की सीमा न रही। जैसा कि वे सामान्यत: करते हैं उन्होंने सब छात्रों को अपने बंगले पर बुलाया और वहाँ पर हमको एक अद्भुत अनुभव हुआ। उन्होंने मुझे कुछ बोलने की आज्ञा दी और जब मैंने अपनी बात समाप्त कर दी तो उन्होंने रामायण पर अपने प्रवचन देना आरम्भ कर दिया। अचानक उन्होंने विषय बदल दिया और जो कुछ हमारे सम्मुख आया था वह ऐसे ही था जैसे अंगारों या काँटों पर चलना। उन्होंने हमको बुरा-भला कहना आरम्भ कर दिया। यह सोचकर लज्जा से हमारी गर्दनें झुक गईं कि हमने एक ऐसे व्यक्ति का दिल दुखाया जो हमसे इतना प्रेम करता है। अन्त में जब उनकी आरती की जानी थी तो उन्होंने ऐसा करने की आज्ञा भी नहीं दी। मैं प्रथम बार साईं का रुद्र पक्ष देख रहा था। अत्यन्त दु:खी तथा निराश होकर सभी छात्र छात्रावास को लौट गए। मुझे याद है कि मैंने रो-रोकर प्रार्थना की थी कि वे हम सब को क्षमा कर दें और एक बार फिर से अपने प्रेम की वर्षा हम पर करें। फिर एक चमत्कार हुआ। वह सपना था या मैं पूर्णरूप से सचेत था? भगवान साईं मुझे और एक अन्य छात्र को अपने साथ कहीं यात्रा पर ले गए परन्तु तीन दिन तक बोलना तो दूर की बात, उन्होंने हमारी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। चौथे दिन किसी समारोह से लौटकर वे आए तो अपने कक्ष में जाने की बजाए हमारे सामने आकर रुक गए। मुझ से और सहन न हो सका। अनुशासन की सारी सीमाएँ लाँघ कर मैं उनके चरणों में गिर पड़ा और अपने आँसुओं से उनको धोने लगा। कुछ ही क्षण पश्चात् उन्होंने मुझको बाँह पकड़ कर उठा लिया और फिर कभी कोई ऐसा कार्य न करने को कहा जिससे उनका मन दुखे। तब उन्होंने मुझे और दूसरे छात्र को थोड़ी-सी मिठाई दी और अन्दर चले गए। मैं जाग गया। पक्षी चहचहा रहे थे और मेरा मन शान्त था। दो दिन पश्चात् जब वे मद्रास जाने लगे तो उन्होंने सब छात्रों को बुलाकर 'नमस्कार'

का अवसर दिया और सब को थोड़ा-थोड़ा मिष्ठान दिया। इसी के साथ-साथ उन्होंने सब को क्षमा भी कर दिया। इस घटना से अनुमान लगाया जा सकता है कि छात्र उनके पुष्परूपी व्यक्तित्व की ओर मधु-मक्खियों की भांति इसीलिए खिंचते हैं क्योंकि उनके प्रति भगवान साई के मन में अपार प्रेम है।

जब मैं स्कूल में पढ़ता था तो जीवविज्ञान में भी मेरी गहरी रुचि थी। अपने रंग-बिरंगे पंखों और अपने अद्भुत जीवनक्रम के कारण तितली मुझे बहुत अच्छी लगती थी। जब तितली का बच्चा केटरपिलर के रूप में छोटा-सा रेंगने वाला कीड़ा जैसा दिखाई देता था तो बड़ा भद्दा लगता था परन्तु कायाकल्प होकर वह सुन्दर-सी तितली बन जाता था। मुझको यह परिवर्तन देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ करता था। ऐसा ही आश्चर्य मुझे आज उस कायाकल्प को देखकर होता है जो भगवान साई बाबा के द्वारा होता है। इस कायाकल्प के सामने तितली का कायाकल्प फीका पड़ जाता है। वृन्दावन का हर छात्र यह अनुभव रखता है कि भगवान के प्रभाव में आकर वह कैसे पूर्णत: परिवर्तित हो गया। मैं पहले क्या और अब क्या हूँ, इसमें इतना ही अन्तर है जितना उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों में। पहले मेरा व्यक्तित्व बँटा हुआ था। घर पर मुझे एक आदर्श बेटा और एक आदर्श बड़ा भाई माना जाता था परन्तु घर के बाहर मैं क्या था यह भगवान ही भली-भाँति जानते हैं। यदि मैं अपनी जीवनी लिखूँ तो यह पुस्तक हाथों-हाथ बिके और पाठकों को पता लगे कि मुझे बदलने में भगवान साई का कितना अधिक हाथ है।

लोग अक्सर यह पूछते हैं कि भगवान यह सब कुछ क्यों करते हैं। मेरे विचार से उत्तर सरल है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में आप चाहें आपको घृणा, ईर्ष्या, लालसा तथा एक दूसरे के प्रति दुर्भावना

मिलेगी। एक छात्र दूसरे छात्र से इसलिए घृणा करता है कि वह उससे अधिक अंक लेता है। एक अध्यापक दूसरे अध्यापक से इसलिए ईर्ष्या रखता है कि प्रधानाचार्य उसको अपने निकट समझता है। एक क्लर्क दूसरे से इसलिए नाराज़ है कि उसकी अपेक्षा वह अधिक सर्वप्रिय है। एक देश दूसरे देश को मिनटों में नष्ट कर देने के इरादे से भयंकर अस्त्र इकट्ठे किए बैठा है। इस प्रकार मानव में छिपे दानव की कहानी काफी लम्बी है। यद्यपि हम अपने को सर्वश्रेष्ठ जीव मानते हैं परन्तु हम अपने अन्दर के पशु को दबाने में सफल नहीं हो सके हैं। आज जबकि घृणा जग के कण-कण में समा चुकी है और यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि प्रलय निकट है।

संसार को विनाश से बचाने का एक ही रास्ता है और वह है एक ऐसे समाज की रचना जिसका आधार प्रेम हो, भगवान साई बस यही कार्य कर रहे हैं। वे आज युवकों को ऐसा प्रशिक्षण दे रहे हैं कि प्रेम भरा हृदय अपने सीने में लेकर वे कल के अच्छे भारतीय नागरिक बन सकें और एक नए समाज की रचना कर सकें। विवेकानन्द जी ने एक बार कहा था :—

"भारत उसी समय तक अमर है जब तक कि वह भगवान की खोज में दृढ़ रहे।"

आज हमारी वह खोज समाप्त हो चुकी है। आज भगवान हमारे बीच ही विद्यमान हैं। यह वही भगवान हैं जिनकी महिमा गाथाओं तथा कविताओं में गाई जाती रही है। यह वही भगवान हैं जिनकी कल्पना हर कलाकार करता रहा है और हर व्यक्ति अनादिकाल से जिनकी आराधना करता रहा है। आओ हम भी यह जानकर अमर हो जाएँ कि वह आज हमारे साथ हैं। आओ हम उनका हाथ पकड़कर

उनके बताए रास्ते पर चलें और सच्चिदानन्द प्राप्ति की चिरन्तम् पिपासा की तृप्ति कर लें। आओ हम उनसे विनती करें की अपने कार्य में वह हमारी सहायता स्वीकार करें। आओ हम उनके चरण-कमल में पूर्णतः आत्मसमर्पण कर दें तथा उनके चरणों में प्राप्त होने वाले आनन्द से सदा-सदा लाभान्वित होते रहें ताकि हम जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति पा लें।

***

७–दर्शन—जिसमें मेरा विश्वास है

*एन० शिवारमन

समस्त दर्शन का सार केवल दो वाक्यों में है "मन क्या है ? पदार्थ क्या है ? इसकी चिन्ता न करो।"

भगवान साई बाबा का दर्शन इस प्रकार का दर्शन नहीं है। उनका दर्शन निराशावादी नहीं बल्कि जीवन तथा प्रकाश का दर्शन है। हमारे दर्शन के चार मुख्य अंग हैं :—

"धर्म केवल एक है और वह है प्रेम का धर्म।
जाति केवल एक है और वह है मानव जाति।
भाषा केवल एक है और वह है हृदय की भाषा।
भगवान केवल एक है और वह सर्वव्यापी है।"

आज की समस्या है मनुष्य को धर्म की अनुभूति कराना, न कि धर्म को उसके अन्दर ठूंसना। धर्म कुछ क्रियाओं और विश्वासों का नाम नहीं। वास्तविक धर्म वह है जो हमारे चिन्तन को सत्य प्रदान करे, हमारे कर्मों में न्याय उत्पन्न करे तथा विश्वव्यापी प्रेम की भावना को जन्म दे। यह धर्म उत्पन्न होता है स्वार्थ, दासत्व तथा संकीर्णता से मुक्त होने पर और यही धर्म हमको तुच्छ इच्छाओं से परिपूर्ण कारागार से मुक्ति दिलाता है।

---

*अप्रैल १९७७ में बी० काम० करके एन० शिवारमन वृन्दावन में रह रहे हैं। वे एक परिश्रमी तथा ईमानदार छात्र हैं। इनका संबंध आपसे से है।

प्रेम धर्म का आधार है क्योंकि प्रेम से ही जीवन को लक्ष्य और क्रम को नेतृत्व प्राप्त होता है। प्रेम ही साहस तथा ईमानदारी के लिए प्रेरणा प्रदान करता है। मानसिक ईमानदारी का केवल यही अर्थ नहीं कि मनुष्य की बुद्धि उचित मार्ग पर चले बल्कि यह भी है कि मनुष्य यह समझता रहे कि उसकी बुद्धि कुछ सीमाओं के पार कभी नहीं जा सकती। बुद्धि जीवन के लिए एक विचारधारा हो सकती है परन्तु अस्तित्व का आधार नहीं बन सकती बल्कि यदि कोई केवल अपनी बुद्धि के बल पर ही जीना चाहे तो मूर्खताएं स्वाभाविक हैं। जहाज़ के कप्तान को नक्षत्रों पर भरोसा करना ही पड़ता है। बुद्धि यदि ग़लत बिन्दु से अपनी यात्रा का प्रारंभ करे तो परिणाम में उलझन के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता। किसी ने आधुनिक युग की दयनीय दशा के सम्बन्ध में ठीक ही कहा है :—

''हमारे युग का दुःखदायी पक्ष यह है कि हम भगवान की सृष्टि को ठीक ढंग से समझ नहीं सके हैं।''

यह नासमझी की ही बात है कि एक नास्तिक धर्म और भगवान के अस्तित्व से इन्कार करे परन्तु जैसा कि भगवान साई बाबा ने कहा है ''नास्तिक केवल धर्म तथा भगवान को ही नहीं झुठलाता, वह जीवन तथा प्रेम को भी झुठलाता है। भगवान के अस्तित्व से इन्कार करके व्यक्ति अपने अस्तित्व की महिमा दर्शाना चाहता है। इस प्रकार नास्तिकता स्वार्थ का प्रतीक है और उस प्रेम का विरोध जो कि भगवान का मूल स्वभाव है।''

धर्म का उद्देश्य भाषण देना नहीं है। हमारे देश में धर्म के मामले में निकम्मापन उत्पन्न हो चुका है क्योंकि यहाँ बहुत से लोगों ने धर्म को व्यवसाय बना लिया है। ऐसे व्यक्तियों का थोथापन दिखाने के

एक हास्यपद कहावत है—"यदि केवल दाढ़ी से काम चल जाता तो बकरे बड़े अच्छे धर्म प्रचारक होते।" धर्म प्रवचन देने की चीज़ नहीं। धर्म तो कर्म का दूसरा नाम है। यह मानसिक उत्तेजना का नहीं बल्कि हार्दिक सत्य का नाम है।

धर्म को "जीवन के लिए अफ़ीम" भी कहा गया है परन्तु सच्चा धर्म कमज़ोरी से नहीं बल्कि शक्ति से उत्पन्न होता है। धर्म नाम है उस हार्दिक तथा मानसिक शक्ति का जो भला बनने, भला देखने, भला करने की प्रेरणा बनती है। यह समझना मिथ्या है कि धर्म का सम्बन्ध केवल वृद्धावस्था से है। वास्तव में धर्म जीवन के हर क्षण से सम्बन्ध रखता है। किसी कवि ने कहा था :—

"मनुष्य में भिन्नता न खोजो ! मनुष्य चाहे तुर्क हो या यहूदी, जिस हृदय में प्रेम, दया और नम्रता का वास है वहीं भगवान वास करते हैं।"

समाज में जाति का कोई महत्व नहीं होना चाहिए। जातिवाद के बदले मनुष्य के मन में वह भावना होनी चाहिए जो भगवान के शब्दों में "विश्व के भ्रातृ-भाव तथा भगवान के पैतृत्व" से उत्पन्न होती है।

हमारे दर्शन का तीसरा पक्ष है "भाषा केवल एक है और वह है हृदय की भाषा।" भाषा को विचार व्यक्त करने का माध्यम कहा जाता है। बहुत सी भाषाएं हैं जो पूर्ण रूप से विचार व्यक्त करने की क्षमता रखती हैं। कुछ विद्वानों ने यह विचार भी व्यक्त किया है कि सारे विश्व के लिए एक ही भाषा हो। परन्तु हृदय की भाषा का क्या अर्थ है ?

भगवान साई का कहना है कि हृदय की भाषा नम्र, सुखद तथा आरामदायक होती है। यह भाषा निस्वार्थ प्रेम का प्रतीक तथा घायल हृदयों के लिए मरहम होती है। भाषा भारी शब्दों तथा आकर्षक विशेषणों के प्रयोग से नहीं बल्कि दया तथा प्रेम की भावना से अच्छी बनती है।...क्या लाभ है इससे कि हमारे मस्तिष्क तो सभ्यता के आकाश में हों परन्तु हमारे हृदय आदिमानव की गुफाओं में विचरण कर रहे हों ?

दर्शन का चौथा अंग बताता है कि भगवान एक है तथा वह सर्वव्यापी है। इस जीवित भगवान ने भगवान के बारे में जो कल्पना हमको दी है वह यह है कि भगवान प्रत्येक व्यक्ति के भीतर विद्यमान है। जैसा कि टैगोर ने कहा था—"यह भजन, गाना और माला जपना छोड़ो द्वार बन्द किए तुम मन्दिर के अन्धेरे कोने में बैठे किसको आराधना कर रहे हो ? अपनी आँखें खोलकर देखो। तुम्हारा भगवान तुम्हारे सम्मुख है। मुक्ति ! भक्ति कहाँ मिलती है ? हमारे रचयिता ने सहर्ष अपने को हमसे जोड़ लिया है। पूजा के फूल तथा धूप-बत्ती छोड़कर अपने पूजा कक्ष से बाहर आओ। क्या हुआ यदि तुम्हारे वस्त्र मैले तथा जीर्ण हो जाएँ। परिश्रम करो और देखो कि भगवान तुम्हारे साथ खड़े हैं।"

भगवान को हम क्या समझते हैं यह इस बात पर निर्भर है कि भगवान के बारे में हमारे विचार क्या हैं। यदि हम भगवान को ऐसा सम्राट् समझें जिसके दरबार तक पहुँचना भी कठिन है तो हमारी पूजा दंडवत् के अतिरिक्त और क्या हो सकती है ? यदि हम भगवान को ऐसा कठोर न्यायाधीश मानें जो हमारी ग़लतियों पर हमको भारी दंड देगा, तो हमारी आराधना केवल भय होगी परंतु यदि हम भगवान

को अपनी माँ, अपने जीवन, अपनी आत्मा, अपने अस्तित्व के रूप में देखें तो हमारी भक्ति का आधार प्रेम होगा।

वह भगवान जिसके साथ हम रहते हैं न तो कठोर दंड देने वाला भगवान है और न ही हमारी पहुंच से बाहर है। वह तो प्रेम का भगवान है और प्रेम भी ऐसा जिसकी न कोई सीमा है न शर्त, जो न बदले में कुछ चाहता है न ही अस्थायी है। वह एक ऐसा व्यक्तित्व है जिसने हमारे मानसिक आडम्बर को प्रेमपूर्ण हार्दिक दर्शन में परिवर्तित कर दिया है।

अब और कौन सी कहानी कहने को शेष रह गई ? हम तो केवल उन्हीं की कहानी जानते सुनते हैं और सुनते रहेंगे यहाँ तक कि कोई भी अन्य कहानी न रह जाए। मैं कौन-सी कहानी सुनाऊँ ? वे तो चाहते हैं कि हम सारी अन्य कहानियाँ भूल जाएं।



८–आवारा कुत्तों से प्रकाश स्तम्भ तक

* सी० श्रीनिवास

जैसे-२ समय बीसवीं शताब्दी के अन्त की ओर बढ़ता जा रहा है मानव-जीवन की समस्याएँ जटिल होती जा रही हैं। मनुष्य अधिकाँश रूप से अपनी समस्याओं का समाधान नहीं कर पा रहा है। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि मनुष्य के जीवन में कहीं न कहीं कुछ त्रुटि रह गई है। यह बात अकसर कही जा रही है कि परिस्थिति बड़ी अस्त-व्यस्त तथा उलझनपूर्ण हो गई है परन्तु हम यह नहीं समझते कि संसार तो वैसा का वैसा ही है, यह तो हमारा मस्तिष्क है जो अस्त-व्यस्त तथा उलझनपूर्ण हो गया है। दु:ख-सुख, उलझन तथा निर्मलता, समस्याएँ और उनका समाधान—यह सब कुछ वास्तव में मानव-मन में ही छिपा होता है। नीला चश्मा पहने व्यक्ति को हर वस्तु नीली ही दिखाई देगी। इसी प्रकार अशान्त तथा अस्त-व्यस्त मन को हर वस्तु अशान्त तथा अस्त-व्यस्त ही प्रतीत होगी। बाह्य संसार हमारे भीतर का प्रतिबिम्ब ही तो होता है।

---

* आपने बी० कॉम० के अध्ययन के तीनों वर्षों में अपने को लगातार एक अच्छा छात्र सिद्ध करने के पश्चात् इन्होंने अन्तिम परीक्षा में विश्व-विद्यालय में द्वितीय स्थान प्राप्त किया। वे अब बंगलौर विश्वविद्यालय से एम० कॉम० कर रहे हैं। उनका संबंध हैदराबाद से है। एक अच्छे छात्र होने के अतिरिक्त वे एक अच्छे खिलाड़ी और अच्छे वक्ता भी हैं।

समय की गति के साथ-२ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के आने तक विश्व की यह दुःखद परिस्थिति और बिगड़ती ही जा रही है। बीते हुए समय के सम्बन्ध में तो कुछ नहीं किया जा सकता परन्तु उज्ज्वल भविष्य के लिए तो आज के युवक अवश्य सोच सकते हैं क्योंकि विश्व का भावी रूप तो उन्हीं को बनाना है। दूसरी ओर आज की युवा पीढ़ी को देखकर यह अनुमान होता है कि परिस्थिति का सुधरना तो दूर की बात है यदि दशा और न बिगड़ी तो भगवान की बड़ी कृपा होगी।

छात्र जो देश की युवा पीढ़ी का अधिकतर अंश हैं, भौतिक संसार की भ्रांतियों तथा क्षणिक आनन्द का शिकार बन चुके हैं। शिक्षा बस यह रह गई है कि साल भर छात्रों के मस्तिष्क में कुछ ठूँसा जाता रहे और वे परीक्षा कक्ष में उसे उगल दें। इस प्रक्रिया को शिक्षा कैसे कहा जाए? परन्तु ऐसी शिक्षा भी युवकगण के लिए आकर्षक नहीं रही है। उनकी प्राथमिक रुचि तो कुछ और ही है। फिर भी बीते दिनों के लिए पछताने से क्या लाभ? जो दूध बिखर गया वह तो बिखरा ही रहेगा। हाँ, कल की बात सोचनी चाहिए क्योंकि हम जो कुछ आज कर रहे हैं उसी से हमारा भविष्य बनेगा।

"आवारा कुत्तों से प्रकाश स्तम्भ तक" का विचार छात्रों के मामले में ठीक ही है। यह "आवारा कुत्तों" वाली बात बड़ी अजीब सी लगती है परन्तु इससे ठीक ही पता लगता है कि आज के छात्र किस दशा में हैं। "प्रकाश स्तम्भ" इस बात की ओर संकेत करता है कि वे क्या हो सकते हैं। "आवारा कुत्ता" कहलाना शायद छात्रों को बुरा भी लगे और अपमानजनक भी परन्तु "मैं स्वयं एक आवारा कुत्ता था", यह कहने से वे कम बुरा मनाएँ।

"आवारा कुत्तों से प्रकाश स्तम्भ तक" की यात्रा उस स्थान से आरम्भ होती है जहाँ आज का सजीला, लम्बे बालों वाला आधुनिक

छात्र खड़ा है। जिसके जीवन के मूल्यवान् दिन सिनेमा और होटलों में बीते हैं और यह रूपान्तर की कहानी उस स्थान पर पहुँचकर समाप्त होती है जहाँ व्यवस्थित बालों वाला छात्र सीधे सादे वस्त्र धारण किए खड़ा है और जीवन के प्रति जिसका दृष्टिकोण पहले छात्र से एकदम भिन्न है। यह बाहर से अन्दर की ओर यात्रा कर रहा है और इस कायाकल्प का आधार है अपने को समझना पहचानना ! चिन्तन मनन इसका आधार होता है। यह स्थान है वृन्दावन के सुन्दर वातावरण में स्थित सत्य साई छात्रावास। यह एक ऐसा स्थान है जहाँ भीड़, यातायात तथा रेडियो संगीत का पागल कर देने वाला कोलाहल नहीं बल्कि इसके बदले पक्षियों का मधुर संगीत और भजन का स्वर सुनाई देता है। ऐसे वातावरण में आधुनिक छात्र प्रवेश करता है और व्यक्तिगत अनुभव प्राप्त करके कुछ का कुछ हो जाता है।

मैं एक बड़े शहर के एक पब्लिक स्कूल से इस स्थान पर आया था। यहाँ के शान्त और सुखद वातावरण में आकर मेरी प्रथम प्रतिक्रिया क्रोध तथा नापसंदी की थी। दिनचर्या की पहली समस्या थी सवेरे पाँच बजे उठकर ओमकार तथा सुप्रभातम् करना। ये बातें मेरे लिए नई तो थी परन्तु कष्टदायी थीं और फिर ठण्डे पानी से स्नान ! बारह वर्ष की पब्लिक स्कूल की शिक्षा मुझ में यह शक्ति उत्पन्न नहीं कर पाई थी कि मैं जाड़ों में ठण्डे पानी से स्नान कर सकता। आधे घण्टे पश्चात् जो गर्म-गर्म कॉफी आती थी उसका मैं हार्दिक स्वागत करता था। इसके पश्चात् जो भी दिन भर होता रहता था उसमें मुझे विशेष रुचि नहीं थी।

दिन महीनों में परिवर्तित होते गए और मुझे यहाँ रहने में बड़ा आनन्द आने लगा। यहाँ से चले जाने की तीव्र इच्छा शान्त हो गई और उसका स्थान शान्ति तथा अपनेपन की भावना ने ले लिया। इस वातावरण में मैं अच्छे से और अच्छा होता गया। प्रेम से भरे वृन्दावन के वातावरण ने मेरी मानसिक स्थिति को शान्त तथा सुखद बना दिया।

फिर भी मुझे अनुमान नहीं था कि सत्य साई छात्रावास में मेरे भाग्य में ठण्डे पानी से स्नान के अतिरिक्त बहुत कुछ था।

एक दिन शाम के समय एक इटली में बनी कार वृन्दावन में आई और सीधी बंगले के पोर्टीको में जाकर रुकी। जब से मैं यहाँ आया था मैंने पहले ऐसी कार कभी नहीं देखी थी। अनजाने ही मैं अन्य छात्रों के साथ उसकी ओर दौड़ पड़ा। सत्य साई बाबा उससे उतर कर बंगले में चले गए। इससे पहले मैंने भगवान साई को न देखा था न उनके बारे में अधिक सुना था। होस्टल में प्रवेश लेने से पहले उनके बारे में मेरी जानकारी कुछ यों ही सी थी। अब यह जानना मेरे लिए अद्‌भुत् अनुभव था कि मैं एक ऐसे छात्रावास का सदस्य हूँ जिसका समस्त प्रबन्ध साई बाबा के संरक्षण में होता है। परन्तु समय सबसे बड़ा गुरु है। जैसा कि सैकड़ों अन्य छात्रों के साथ हुआ होगा मेरे जीवन का भी एक महान् अध्याय आरम्भ हो गया। बड़े रहस्यपूर्ण ढग से कायाकल्प आरम्भ हो चुका था। मुझे सत्य साई से प्रथम दृष्टि में ही प्रेम हो गया था और मैं सोच भी नहीं सकता था कि उनका प्रेम भविष्य में मुझे पब्लिक स्कूल के एक क्रोधी तथा आधुनिक युवक से एक विनम्र तथा आज्ञाकारी छात्र बना देगा।

मुझे वृन्दावन आए आज पाँच वर्ष बीत चुके हैं। मेरे पिछले जीवन में हर परीक्षा मेरे लिए एक कठिन समस्या होती थी क्योंकि मेरा ज्ञान सीमित होता था परन्तु यहाँ आकर मुझे तृतीय श्रेणी का मुँह कभी नहीं देखना पड़ा। सत्य साई छात्रावास के अनेक छात्रों की भाँति मेरा नाम परीक्षा-सूची में अच्छे स्थान पर देखकर मेरे माता-पिता तथा मित्रों को काफ़ी आश्चर्य हुआ क्योंकि उन्होंने तो यह आशा ही छोड़ दी थी कि मैं भी कोई परीक्षा पास कर सकता हूँ।

परीक्षाओं तथा महाविद्यालय के अन्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त मेरा जीवन भगवान साई के आकर्षक व्यक्तित्व के आसपास घूमने लगा उनकी निकटता, उनकी वाणी तथा उनके मौन ने मुझ में एक महान् परिवर्तन ला दिया। परिवर्तन की प्रक्रिया अब भी जारी है। मैं युवक था, मुझे जीवन की यात्रा बड़ी लम्बी दिखाई देती थी परन्तु भगवान ने मेरे जीवन को सार्थक तथा सुखपूर्ण बना दिया। छात्र जब उनसे मिलते हैं तो चिन्तन की आदत उनमें उत्पन्न हो जाती है और उनके शक्तिशाली प्रेम तथा दया से चरित्र में परिवर्तन होने लगता है। उज्ज्वल कल की आशा में स्वामी जी युवकों को पहले अन्दर से फिर बाहर से परिवर्तित करने के शुभ कार्य में संलग्न हैं।

परिवर्तन की इस प्रक्रिया का वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता, यह तो अनुभव करने की चीज़ है, फिर भी श्री सत्य साई छात्रावास के छात्रों के कायाकल्प की उपेक्षा नहीं की जा सकती। चाहे तुच्छ सही परन्तु हम एक उज्ज्वल भविष्य का प्रारम्भ हैं। हृदय परिवर्तन की इस बात को केवल साई छात्रावास तक सीमित करना मूर्खता ही होगी क्योंकि हर भक्त अपने जीवन में बाबा जी के प्रेम की कहानियाँ सुना-२ कर, दूसरों को भी प्रभावित करता है।

यदि जीवन को एक लम्बी सड़क मान लें, तो भगवान हमको रास्ता दिखाने के लिए दिन में सूर्य तथा रात्रि में चन्द्रमा के समान शोभायमान हैं। यह उनकी दया ही है कि वे हमें इस सड़क पर आवारा कुत्तों की भाँति निरुद्देश्य, गन्दा तथा अपमानजनक जीवन नहीं बिताने देते। वे चाहते हैं कि हम जीवन मार्ग पर लगे प्रकाश स्तम्भों के समान बनें और थके हुए यात्रियों को उनका मार्ग दिखाने में सहायक हों। यथाशक्ति प्रकाश फैलाकर हम एक दिन जल बुझेंगे परन्तु हमको यह संतोष होगा कि जीवन में केवल लेने के अतिरिक्त हमने किसी को कुछ दिया भी था।

★★★

९—छात्रों का निवास-स्थान—सत्य साई भवन

*डा० वी० के० गोकाक

यह सितम्बर १९७१ की बात है कि मुझे चार वर्ष के लिए सत्य साई भगवान के साथ रहने का सुअवसर मिला। शिमला का जीवन तो मुझे ऐसे लगा जैसे कि मैं अन्धकार में भटक रहा हूँ। मैं उस जीवन से पीछा छुड़ाना चाहता था। मैंने भगवान साई से एक पत्र में प्रार्थना की कि वे मुझे अपने पास बुला लें और यह उनकी अत्यन्त कृपा थी कि उन्होंने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली। भगवान की छत्र-छाया में अपनी पत्नी सहित रहने का यह अच्छा अवसर मिल गया और हम उनके तेजस्वी व्यक्तित्व के निकट लगभग पाँच वर्ष तक रहे। उन्होंने हमको जो विशेषरूप से स्नेह दिया उससे हमको अपने भाग्य पर गर्व होने लगा। जहाँ-जहाँ उन्होंने मुझ में त्रुटियाँ देखीं, ठीक कर दीं। संसार से जो मेरा मन ऊब गया था अब उनके साथ रहकर यह स्थिति बदल गई और मेरा मन सन्तुलित हो गया।

जब यह प्रक्रिया पूर्ण होने को थी तो मुझे पता लगा कि भगवान के संग रहने की मेरी अवधि अपने आप ही समाप्त हो गई है। भगवान का पचासवाँ जन्म-दिवस मनाने के लिए संसार के कोने-कोने से उनके भक्त आए हुए थे। पूरणचन्द ऑडीटोरियम से मंच पर वे भक्तों से पुष्प-

---

* डा० गोकाक ने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से एम० ए० किया और फिर डी० लिट०। वे पहले सैन्ट्रल इन्सटीट्यूट आफ इंग्लिश, हैदराबाद के निदेशक रहे और तदोपरान्त बंगलौर विश्वविद्यालय के उप-कुलपति। वे शिमला में उच्च अध्ययन संस्थान के निदेशक भी रहे हैं।

मालाएँ स्वीकार कर रहे थे। जब मैं उनके पास माला लेकर पहुँचा तो उन्होंने मुस्कराकर कहा "तुम को जन्म-दिवस की बधाई।" मैं स्तब्ध रह गया। दुनिया भर के भक्त इकट्ठे थे और भगवान एक भक्त को कह रहे थे "तुमको जन्म-दिवस की बधाई।" मेरा जन्म-दिन तो अभी दूर था। मैं बड़ी कठिनाई से अपने ऊपर नियन्त्रण पा सका और मैंने कहा "आपको जन्म-दिवस पर बधाई, श्रीमान जी!" वे मुस्करा दिये, कुछ बोले नहीं।

जैसे-जैसे मैंने भगवान के कहे गए शब्दों पर मनन किया मुझे आभास होता गया कि मेरे जीवन में कोई नया अध्याय आरम्भ होने वाला है। वह अध्याय वृन्दावन में ही आरम्भ होगा या कहीं और इसका मुझे कुछ पता नहीं था और कई सारी छोटी-मोटी घटनाएं हुई और मुझे ज्ञात हो गया कि अब भगवान से अलग होना है अतः मैं नगर में अपने घर रहने चला गया। मैं यह विस्तार से इसलिए लिख रहा हूँ क्योंकि मुझे अपने पर गर्व है कि मैं छात्रावास में भगवान की कृपादृष्टि का पात्र रहा और उनके बहुत निकट रहा।

छात्रावास का नवनिर्मित भवन बड़ा वैभवशाली है। इसका प्रवेश-द्वार तथा इसके गुम्बद बड़े प्रभावशाली हैं। इसमें चार सौ छात्र निवास कर सकते हैं। जून १९६९ में *पी० यू० सी० का बड़ा हाल, सामान्य सभाओं के लिए भी प्रयोग में लाया जाता था। पन्द्रह-बीस छात्र जो कि भगवान के भक्तों के बेटे थे प्रवेश-द्वार के निकट रहते थे। जब छात्र अधिक हो जाते थे तो पी० यू० सी० हाल का भी रहने के लिए प्रयोग कर लिया जाता था।

यद्यपि अब छात्रों की संख्या बहुत बढ़ गई है परन्तु बाबा जी का व्यवहार कुछ ऐसा है कि हर छात्र को ऐसा लगता है जैसे कि बाबा

* Pre-University Class

जी उसके मित्र तथा पथ-प्रदर्शक हैं। छात्र उनसे प्रेम भी करते हैं और उनका आदर सत्कार भी। जब मैं वृन्दावन पहुँचा था लगभग तभी से एक स्थान पर एकत्रित होकर संध्या-सभा की प्रथा का आरम्भ हुआ था। आरम्भ में छात्र मिलकर भजन गाया करते थे। उसके पश्चात् साई बाबा प्रश्न आमन्त्रित किया करते थे। अधिकतर प्रश्न अधिक अवस्था वाले भक्त या अध्यापक करते थे। किसी प्रश्न को लेकर ही बाबा जी उस दिन प्रवचन देते थे। प्रवचन में वह अवसर के अनुसार बड़ी मूल्यवान बातें बताया करते थे। कभी-कभी कोई गायक बाबा जी से मिलने आ जाता तो उसका गायन भी हो जाता था।

शाम के अतिरिक्त छात्रों को सवेरे कालेज जाने से पहले तथा दोपहर के पश्चात् भी एक घण्टे के लिए साई बाबा के पास एकत्रित होने की अनुमति प्राप्त थी। इस अवधि में छात्र हँसी-मज़ाक करते, अवाँछनीय बातों पर आलोचना करते तथा छात्रों की कमज़ोरियों को इस प्रकार सबके सम्मुख प्रस्तुत करते कि बुरा मनाए बिना छात्र अपनी त्रुटियों को दूर कर लेते थे। यह बड़ी शिक्षाप्रद प्रक्रिया होती थी। वार्षिक परीक्षा से चार पाँच महीने पहले यह सिलसिला बन्द कर दिया जाता था। बाबा जी इस अवधि में वृन्दावन आते भी नहीं थे क्योंकि वह समझते थे कि उनके कारण छात्र अपने अध्ययन की ओर से लापरवाह हो जाएँगे। वे छात्रों को यह बात स्पष्ट रूप से बता देते थे कि यदि वे प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण न हुए तो सत्य साई महाविद्यालय में उनको नहीं लिया जाएगा। इसी प्रकार की प्रेरणाओं का परिणाम है कि यहाँ के छात्र विश्वविद्यालय में उच्च स्थान प्राप्त करते हैं।

मैं कह चुका हूँ कि बाबा जी हर छात्र से व्यक्तिगत रूप से सम्बन्ध रखते थे। एक छात्र धूम्रपान का अभ्यस्त था। यद्यपि वह छुपकर ऐसा करता था परन्तु बाबा जी कैसे इस बात से अनभिज्ञ रह सकते

थे ? बाबा जी ने एक बार सबके सामने उसकी इस आदत की चर्चा की परन्तु उसने मानने से इन्कार कर दिया। बाबा जी ने तब सब कुछ बता दिया कि वह किस समय, कहाँ, कैसे धूम्रपान करता है। छात्र स्तब्ध रह गया और उसे स्वीकार करना ही पड़ा। वह बाबा जी के पैरों पर गिर पड़ा और धूम्रपान करने तथा झूठ बोलने के लिए क्षमा-याचना करने लगा। उसने वायदा किया कि भविष्य में न तो वह धूम्रपान करेगा और न ही झूठ बोलेगा।

मद्रास के एक रेलवे अधिकारी का बेटा भी वृन्दावन में छात्र था। एक बार राजामुन्दरी में होने वाले सत्य साई सम्मेलन में भाग लेने के लिए छात्रों के लिए रेल की एक विशेष बोगी का प्रबन्ध किया जाना था। किसी ने सुझाव दिया कि इस सम्बन्ध में रेलवे अधिकारी के बेटे से सहायता ली जाए। वह अपने पिता को फोन पर बात करके बोगी का प्रबन्ध करा सकता था। बाबा जी ने उसको बुलवाया। बहुत से अध्यापक तथा छात्र मौजूद थे। वह छात्र आ गया परन्तु अपने मन में यह समझ बैठा कि किसी ग़लती पर डांटने के लिए उसको बुलाया गया है। अत: उसने किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए मुँह ही नहीं खोला। वह कई महीने से डरा-डरा सा रहता था और उस समय भी वह प्रस्तुत-गण के घेरे के एक किनारे पर सहमा-सा खड़ा था। बाबा जी समझ गए। उन्होंने उस समय उससे बोगी सुरक्षित कराने की बात बताई और वापस भेज दिया परन्तु बाद में उससे नम्रता से बात की। शीघ्र ही बाबा जी के प्रति उसका भय दूर हो गया और वह उनको अपना मित्र तथा पथ-प्रदर्शक समझने लगा।

सत्य साई बाबा ने अपने बचपन में कई नाटकों में अभिनय भी किया था। अब भी वे नाटक लिखते हैं। मुझे यह देखकर बड़ा आनन्द आया कि कालेज के वार्षिक उत्सव के लिए बाबा जी ने स्वयं नाटक के लिए

छात्र चुने, उनके वस्त्रों का निर्धारण किया और हर शाम को नाटक की रिहर्सल कराई। अंग्रेज़ी, कन्नड़ तथा तेलगू के कई नाटक-नाटिकाओं के लिए भी बाबा जी ने बड़ा परिश्रम किया। नाटक के बीच भी वे पर्दे के पीछे जा-जाकर कलाकारों को निर्देश देते रहते थे।

जब बाबा जी प्रशान्ति निलयम् में रहते तब भी हर सप्ताह पत्र भेजते और ये पत्र वृन्दावन में छात्रों के सम्मुख भजन सभा में सुनाए जाते। छात्रों को ऐसा लगता था मानो बाबा जी उनसे एक क्षण के लिए भी दूर नहीं हैं।

वर्ष में एक-दो बार छात्रावास में बड़े पैमाने पर प्रीतिभोज का प्रबन्ध भी किया जाता था। छात्रावास को खूब सजाया जाता और कुछ छात्र स्वयं नाना प्रकार के व्यंजन तैयार करते। ऐसे अवसरों पर आमंत्रित होना हमारे लिए बड़े हर्ष की बात थी। इसके बदले में बाबा जी अपनी ओर से छात्रों की बड़ी-बड़ी दावतें दिया करते थे।

बाबा जी किस प्रकार हर बात से शिक्षा देने का ध्यान रखते थे इसका पता निम्नलिखित घटना से लग सकता है। एक छात्र ने एक बार कुछ ग़लती की और भगवान को प्रशान्ति निलयम् में जो पत्र भेजा उसमें भी कुछ अनुचित बात लिखी। भगवान साई प्रायः कहते हैं, "छात्रों से बहुत संभलकर व्यवहार करना पड़ता है। यदि आप उनके साथ औपचारिकता का व्यवहार करेंगे तो वे आपसे डरते रहेंगे और आपसे अपने मन की बात नहीं कहेंगे। यदि आप उनसे खुल जायेंगे तो वे आपके सिर पर चढ़ जाएँगे। संतुलन तो उनके जीवन में होता ही नहीं।" छात्र की ग़लती को उन्होंने छात्रों को सीख देने का एक अच्छा अवसर समझा। वे दो तीन महीने तक वृन्दावन आए ही नहीं और न ही उन्होंने किसी छात्र को आज्ञा दी कि प्रशान्ति निलयम् आकर उनके

दर्शन कर सके, हाँ दशहरे पर दर्शन करने की अनुमति उन्हें प्राप्त हो गई। इसके बावजूद वे छात्रों से मिलने से बचे और छात्र बड़े दुःखी हो गए। सारे छात्र दुख की मूर्ति दिखाई देते थे।

दशहरे से एक-दो दिन पहले भगवान ने मुझे अलग बुलाकर कहा, "छात्र अब पश्चाताप की अग्नि में काफी जल लिए। जब मैं उनके सामने दर्शन देने आऊँ तो उनको बरामदे में एकत्रित होने और क्षमा माँगने के लिए तैयार कर देना।"

मैंने अन्य छात्रों से बात की और उनको ऐसा ही करने की सलाह दी परन्तु वे इतने भयभीत थे कि क्षमा किये जाने की आशा भी छोड़ बैठे थे। उन्हें डर था कि यदि बिना आज्ञा लिए वे बरामदे में स्वामी जी के सामने पहुँच गए तो स्वामी जी और भी नाराज़ हो जाएँगे। मैंने उनको समझाया कि ऐसा नहीं होगा और इसी के साथ-साथ मैंने हर प्रकार की ज़िम्मेवारी अपने ऊपर ले ली। अपने मन में डरते-झिझकते सब छात्र स्वामी के मुलाक़ात के कमरे के बाहर आकर खड़े हो गए।

जब स्वामी जी दर्शन देकर लौटे तो सबने एक स्वर में कहा "स्वामी जी हमें खेद है" और धड़कते हुए दिलों के साथ प्रतीक्षा करने लगे कि देखें क्या होता है। स्वामी जी ने छात्रों की ओर मुड़कर देखा और बोले "क्या है, यह सब क्या है?" उन्होंने एक-दो क्षण छात्रों को देखा और उन्हें ऐसे स्वर में सेवादल के साथ मिलकर काम करने का आदेश दे दिया, मानो कुछ हुआ ही न था। छात्रों की प्रसन्नता उस समय देखने की चीज़ थी। उनके चेहरों से ऐसा लगता था कि एक लम्बे सूखे के पश्चात् उनको शीतल वर्षा का आनन्द मिल गया हो।

छात्रावास का वह जीवन जिसका केन्द्र भगवान साई बन चुके हैं, स्वयं का एक इतिहास रखता है। इस जीवन के अपने दु:ख हैं, अपने सुख हैं, अपने आनन्द हैं और अपना उल्लास है। मैं अब उस जीवन से दूर हो चुका हूँ, परन्तु उस जीवन की याद से अब भी मैं आनन्द-विभोर हो उठता हूँ और अब भी मेरे हृदय पर उस जीवन का पवित्र प्रभाव है। कैलीफ़ोर्निया, अमेरीका की श्रीमती कॉवेन ने छात्रावास के रूप में जो उपहार दिया है वह एक ऐसा स्थान है जिस पर गर्व किया जा सकता है।

●

१०--साई वृन्दावन का मेरे जीवन पर प्रभाव

*नवीन चन्द्र बी० पटेल

१९६८ में योगान्डा, पूर्वी अफ्रीका से माध्यमिक शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् मैं उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु इंग्लैंड जाना चाहता था। मेरा पासपोर्ट भी तैयार था और मुझको इंग्लैंड के एक महाविद्यालय में प्रवेश भी मिल चुका था परन्तु मेरे भाग्य में तो एक मोड़ आना था।

मई-जून १९६८ में भगवान सत्य साई योगान्डा पधारे थे। मुझे वहाँ उनसे बात-चीत करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और उन्होंने मुझ से मेरी भावी योजना के बारे में पूछा था। मैंने तुरन्त उत्तर दिया था कि मैं इंग्लैंड जा रहा हूँ। "अगले वर्ष मैं वृन्दावन (बंगलौर) में एक नया कालेज आरम्भ कर रहा हूँ। वहाँ आ जाना। तुमको प्रवेश मिल जायेगा।" भगवान के यह शब्द मेरे जीवन का एक मोड़ सिद्ध हुए। मैंने सोचा था यदि 'कोई' मेरे भविष्य के बारे में इतना सोच रहा है तो इसके पीछे अवश्य ही कोई रहस्य होना चाहिए। मैंने इंग्लैंड जाने की बजाय भगवान के चरणाविन्दों में रहने का निश्चय कर लिया।

---

*कालेज में प्रवेश लेने वाले प्रथम विदेशी छात्रों में से यह एक है। ये योगान्डा से भारत आए थे और अब इंग्लैंड में जा बसे हैं। एक बहुत अच्छे छात्र होने के अतिरिक्त यह एक अच्छे फोटोग्राफर और साउंड इंजीनियर (ध्वनि अभियन्ता) भी हैं। कालेज के हर उत्सव में उन्होंने बहुत काम किया।

भगवान के व्यक्तित्व का पहला प्रभाव मेरे मन पर यह पड़ा कि उनका प्रेम सबके लिए बराबर था। उनके यहाँ यह भेद-भाव बिल्कुल नहीं था कि उनके प्रेम का पात्र किस जाति का है, किस धर्म को मानता है या किस देश का रहने वाला है। योगान्डा में स्वयंसेवकों से बातें करते हुए उन्होंने कहा था, "सामने जो भिन्न-२ रंग का प्रकाश देने वाले ये बल्ब जगमगा रहे हैं इनका बाह्य रूप यद्यपि अलग-२ है परन्तु उनके अन्दर एक ही प्रकार का करन्ट प्रवाहित है। हमारे शरीर भी इन्हीं बल्बों के समान हैं और भगवान उनमें करन्ट की भाँति है। चाहे कोई अफ्रीकन हो या अमेरीकन, योरुप से सम्बन्ध रखता हो या एशिया से, चाहे काला हो या गोरा, एक ही भगवान सबके भीतर निवास करता है।"

प्यार के लिए कारण की आवश्यकता नहीं,
प्यार समय की सीमाओं में कैद नहीं,
प्यार जन्म-मरण से मुक्त है।

भगवान साई युवकों, विशेषकर कालेज के छात्रों की ओर बहुत ध्यान देते हैं। भगवान प्रायः कहा करते हैं "वृक्ष जब छोटा हो तो मन-चाही दिशा में मोड़ा जा सकता है परन्तु बड़ा हो जाने पर वह कठोर हो जाता है और उस समय उसको मोड़ने का प्रयत्न किया जाए तो उसके टूटने की संभावना अधिक रहती है।"

इस प्रकार युवक छात्रों के चरित्र तथा उनकी आदतों में परिवर्तन लाया जा सकता है। ज्यादा आयु हो जाने पर व्यक्ति अपने विचारों तथा अपनी आदतों को ठीक समझने लगता है और उनको बदल नहीं पाता। आज के छात्र कल के नागरिक होते हैं। यदि उनमें अच्छा परि-वर्तन लाया जा सके तो एक अच्छे राष्ट्र के उदय की पूरी-२ संभावना है।

यह मेरा सौभाग्य था कि मुझे छात्रावास में रहने का अवसर प्राप्त हुआ। छात्रावास के सदस्यों के लिए भगवान ने स्वयं ही एक कार्यक्रम तैयार किया था। सब सवेरे पौने पाँच बजे उठते और ओंकार तथा सुप्रभातम में सम्मिलित होते। सायंकाल में भजनों का कार्यक्रम चलता। नित्यप्रति की प्रातःकाल की प्रार्थना के अतिरिक्त रविवार को नगर में घूमकर 'नगर संकीर्त्तन' का कार्यक्रम भी चलता था।

भगवान ने हमें बहुत सी अच्छी बातें सिखाईं परन्तु वे विशेष रूप से कर्म पर बल देते थे। वे कहते थे किसी दूसरे में प्रचार करने से पूर्व स्वयं उन बातों का अभ्यास करो। वे कभी-२ यह भी कहा करते थे :—

"अपना दिन प्रेम के साथ आरम्भ करो,
अपना दिन प्रेम से परिपूर्ण करो।
और दिन का अन्त भी प्रेम पर करो,
यही भगवान तक पहुँचने का रास्ता है।"

भगवान स्वयं अपना दिन कैसे व्यतीत करते हैं? प्रातःकाल वे अपने भक्तों से बात-चीत करके उनकी समस्याओं का समाधान करते हैं। दीन-दुखियों की सहायता करते हैं तथा उनको प्रेम-धन बाँटते हैं। अपने दिन भर के व्यवहार में वे प्रेम की मूर्ति दिखाई देते हैं और इस प्रकार दूसरों को सिखाते हैं कि वे भी दया, शिष्टाचार तथा प्रेम के मार्ग पर चलकर भगवान की प्राप्ति करें।

यद्यपि मेरे माता-पिता योगान्डा में थे परन्तु मुझे घर की याद व्याकुल नहीं करती थी। साई बाबा ही मेरे माता-पिता सिद्ध हुए और वास्तव में वे हैं भी दैवी माता-पिता! उन्होंने जितना प्रेम मुझ पर बरसाया शायद एक हजार माताएँ मिलकर इतना प्रेम अपने बालक को दे सकें।

जिस प्रकार योग्यता के अंकन के लिए वर्ष के अन्त में परीक्षा होती है इसी प्रकार स्वामी जी भी छात्रों की जाँच-परख करते थे। अन्तर केवल इतना है कि किसी को पता नहीं लग पाता कि स्वामी जी कब और कितनी कड़ी परीक्षा ले डालें। वे अचानक किसी छात्र से कृपादृष्टि हटा लेते हैं और उससे बातचीत बन्द कर देते हैं। छात्र उनके प्रेम-अमृत से वंचित होकर ऐसा अनुभव करता है जैसे कि जीवन में ही उसकी मृत्यु हो गई हो परन्तु जैसे कि एक माँ अपने बच्चे की उपेक्षा सदा-२ के लिए नहीं कर सकती इसी प्रकार यह 'साई माता' भी उस उपेक्षित छात्र को फिर अपने प्रेम-पाश में ले लेती है। ऐसी परीक्षा से मुझे भी कई बार गुज़रना पड़ा। वास्तव में परीक्षा की इस दुःखदायी अवधि में व्यक्ति का अहं चूर-चूर हो जाता है।

हर अच्छी वस्तु का अन्त होना ही होता है। मुझे भी अपनी शिक्षा पूरी करने के पश्चात् वापस जाना पड़ा और इस अवसर पर मैं उलझन में पड़ गया। अपने दैवी माता-पिता से अलग होने का विचार मेरे लिए अत्यन्त कष्टदायक था। दूसरी ओर एक और बात थी और वह यह कि स्वामी जी के कथनानुसार छात्रों को उनसे शिक्षा लेकर संसार के अंधकार को मिटाने के लिए प्रकाश बनकर इधर-उधर फैलना था। उनका संदेश संसार के कोने-कोने में ले जाना था। इस विचार को लेकर मैं शारीरिक रूप से इंग्लैंड चला आया परन्तु उनके दर्शनों के लिए मेरी आत्मा व्याकुल रही। मेरी स्थिति ऐसी ही थी जैसे कि कृष्ण जी से बिछुड़ने पर गोपियों की।

इंग्लैंड में मुझे काम मिल गया। मैंने वहाँ देखा कि पाश्चात्य देशों में हर प्रकार की भौतिक सुख सुलभ है परन्तु धर्म की बहुत कमी है। यहाँ की धरती खुशहाल है परन्तु यहाँ भगवान सत्य साई बाबा नहीं हैं। उचित मार्ग-दर्शन न मिलने के कारण स्वच्छंद, उद्दण्ड तथा

नैतिक स्तर से गिरे हुए हैं। वे अपने माता-पिता का आदर करते हैं न अपने गुरुओं का। वे पूर्णरूप से सांसारिक-विलास में खोए हुए हैं। सत्य साई कालेज में परिस्थिति इसके विपरीत है।

यदि मुझे अवसर मिले तो मैं एक बार फिर शारीरिक रूप से स्वामी जी के निकट आना चाहूँगा ताकि उस आनन्द से अपने मन की झोली भर सकूं जो भगवान के चरणारविन्दों में प्राप्त होता है।



११—साई प्रेम के सागर में

*के० पी० देवदास

धूल में अटे तथा ज़ंग लगे वे बीते दिन !
मैं अब भी उनका स्मरण करता हूँ
वे दिन जब समुद्र तट पर छोटे-२ कंकड़
मेरे छोटे-छोटे पाँवों के नीचे कड़कड़ाते थे ।
और—एक दिन
छोटा-सा उदास सूर्य पश्चिम में अस्त हो गया
चन्द्रमा के शीतल प्रकाश में
मैं छोटी-सी नाव में बैठा
विशाल समुद्र के प्रति एक अजनबी-सा हो गया ।
कोई ध्रुव तारा न था कि मुझे राह दर्शाता
मेरे पास कुछ नहीं था कि कोई रूपरेखा बनाता
बस वह सुन्दर-सा चन्द्रमा !
तूफ़ानों की गर्जन के बीच
मैंने भय के भंवर देखे ।
ऊँची-ऊँची लहरें मेरी नैया पर विजय पाने लगीं
मेरा दम घुटने लगा
में बिल्कुल अकेला था ।

---

*देवदास जी कानपुर निवासी हैं। वे साई कालेज में बी० एस सी० करने हेतु आए थे और बी० एस सी० करने के पश्चात् अब बंगलौर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम० ए० कर रहे हैं।

कौन था कि मुझे सहायता देता ?
चन्द्रमा भी कब तक साथ देता ?
और—उस भयानक अन्धकार में
मेरी पतवार भी खो गई।
"माँ" मेरा स्वर अन्धकार को वेध गया।
और तब, हे मेरे चन्द्रमा ! तेरा अद्‌भुत प्रकाश उभरा
मैं आनन्द विभोर होकर नाचने गाने लगा
मुझे नहीं ज्ञात था सत्य क्या है ?
प्रकाश कहाँ है ?
बस अन्धकार में गेरुवे वस्त्र उज्ज्वल हो उठे
तारे मेरी "माँ" को ईर्ष्या से निहारने लगे।
उसके सिर पर मुकुट था—
प्रेम, दया तथा बुद्धिमत्ता का।
"बेटा" माँ का स्वर उभरा।
मैंने अपने हाथों से अपनी नैया को उस ओर बढ़ाया !
"माँ मुझे किधर ले जाओगी ?"
मैंने पूछा—और मौन तम से स्वर उभरा
"आओ !" और उसने अपना शीतल कोमल हाथ बढ़ा दिया !
मैं दु:ख-सुख तथा तूफ़ानों से लड़ता
उस असीम आनन्द की ओर बढ़ता गया।
मेरे सपने साकार हो गए।
मेरे मन में प्रार्थना जागृत हुई—
"माँ तूने ही मुझे जन्मा था तू ही अपने में मुझे विलीन करले।"

१२–मेरे वैभवपूर्ण दिवस

*पी० विजयभास्कर

मैंने युवावस्था के जो दिन वृन्दावन में व्यतीत किये व बड़े आनन्द-दायक तथा वैभवपूर्ण थे। आज जबकि वासनाओं तथा इच्छाओं के दलदल में फँसे युवक नगरों के कोलाहल भरे वातावरण में निरुद्देश्य तथा अस्त-व्यस्त जीवन व्यतीत करते हैं, वृन्दावन में कौन-सी ऐसी बात है जो जीवन को एकदम भिन्न बना देती है? इसका उत्तर है लाल वस्त्र धारण किये वह सुन्दर व्यक्तित्व !

वृन्दावन का वह नील-नयन बालक एक बार फिर से हमारी हृदय-बंसी बजाने आ गया है तो वृन्दावन के बाल-गोपाल क्यों न उसकी ओर आकर्षित हों ?

वह स्वप्न की भाँति पुराने दिन बीत चुके। अतीत का भय दूर हो चुका। उनके तेजस्वी व्यक्तित्व को देखकर, उनके अगाध सत्य को पाकर, उनकी सुन्दरता की रंगभरी शाम में खोकर हम उनके अलौकिक संगीत की धुन पर प्रसन्नता से नाच उठते हैं। हमारे सामने जीवन

---

*ये बी० काम० के उन प्रतिभाशाली छात्रों में से हैं जो हर परीक्षा में उच्चतम् स्थान प्राप्त करने वालों में सम्मिलित रहते हैं। इनकी जन्म-भूमि गुन्टूर, आन्ध्र प्रदेश है। ये डेरी फ़ार्मिंग में विशेष रुचि रखते हैं इसीलिए ये महाविद्यालय में पाले जाने वाले पशुओं तथा डेरी विभाग की देख-रेख में तल्लीन रहते हैं।

के नए-२ क्षेत्र दृष्टिगोचर हो जाते हैं। सत्य साई के चरणारविन्दों में बिताए जवानी के दिन वास्तव में एक वरदान होते हैं।

हमारे लिये सत्य साई एक प्रेमी माँ, सिद्धान्तवादी पिता, अद्वितीय गुरु, हृदयेश्वर तथा भगवान हैं। हृदयों का परिवर्तन उनके मनहर लाल वस्त्रों से जुड़ा हुआ है। व्यक्ति का जीवन इस महान् परिवर्तन से गुज़र कर सार्थक हो जाता है।

हृदय परिवर्तन का पहला चरण यह होता है कि छात्र यह अनुभव करने लगता है कि सत्य साई उसके जीवन का उद्देश्य हैं। यह उनके चरणारविन्दों की ओर जाने वाले मार्ग का प्रारम्भ होता है।

दूसरे चरण में हमारे मन को पिछली दुर्भावनाओं से पवित्र करके हमको राग-द्वेष से मुक्ति दिलाई जाती है। परिणामस्वरूप हमारा दृष्टिकोण पूर्णरूपेण बदल जाता है।

तीसरे चरण में हम अपने आप को स्वामी जी के अथाह प्रेमसागर में डूबा हुआ पाते हैं। इससे पूर्व कि हमको पता लगे कि क्या हो रहा है, हम प्रेम जल में तर-बतर हो जाते हैं। जीवन में पहली बार निःस्वार्थ, पवित्र दैवी प्रेम का अनुभव प्राप्त होता है। प्रत्येक छात्र उनके साथ प्रेम-सूत्र में बँध जाता है।

कहानी यहीं समाप्त नहीं हो जाती। हृदय-क्रान्ति की प्रक्रिया अनन्त है। जीवन के हर क्षण हमारा हृदय परिवर्तित होता रहता है, हम अच्छे और अच्छे बनते जाते हैं और उनके चरणों की ओर बढ़ते जाते हैं। गति धीमी हो सकती है परन्तु लक्ष्य तक पहुंचने में कोई संदेह नहीं होता।

भगवान की आशाओं पर पूरा उतरने के संबंध में कभी हमको सफलता का स्वाद मिलता है तो कभी निराशा का महत्व बढ़ता

है। असफलता की दशा में उनकी दयालु हाथ हमको सँभालता है "यदि सौ बार भी असफल होते हो तो एक बार और प्रयास करो।"

हर असफलता भी इस मार्ग पर सफलता की ओर एक चरण सिद्ध होती है। विवेकानन्द जी ने एक बार कहा था "यदि असफलताएँ न होती तो जीवन में कविता कहां से आती ?"

काम लेने के संबंध में भगवान कठोर हैं। गुलाब की पंखुड़ी की तरह कोमल होने के साथ-२ वे हीरे की भाँति कठोर भी हैं। यदि वे हमें कुछ सिखाना चाहते हैं तो हमारी ओर से आँख फेर लेते हैं। कितना कठिन होता है वह समय ? उनकी आँख हमको नहीं देखती, उनके चरण हमारी ओर नहीं उठने और हम उनके चरणों से दूर हो जाते हैं। हमारा जीवन नीरस तथा दु:खी हो जाता है परन्तु उनका मौन उनकी वाणी से अधिक कह जाता है। फिर दु:ख के दिन बीत जाते हैं और भगवान अपने गुलाब जैसे ओठों पर मधुर तथा चंचल मुस्कान लिए हमारी ओर चले आते हैं। कितना महत्त्वपूर्ण है वह दिन !

परिवर्तन की इस प्रक्रिया से निकलकर उद्दण्ड, बेसहारा तथा निरुद्देश्य युवक समस्त संसार के लिए अमूल्य आदर्श बन जाते हैं।

भगवान कहा करते हैं :—"एक मूल्यवान् हीरे को निर्दयतापूर्ण काटा-छाँटा जाता है। सोने को तपा-तपा कर कूटा जाता है।" किस-लिए ? इसीलिए कि उसका मूल्य और भी बढ़ जाए।

इसी प्रकार छात्रों के रूप में बढ़ती स्वर्ण लताओं को धर्म, प्रेम तथा शान्ति के स्तम्भों पर चढ़ने योग्य बनाया जाता है। इस प्रकार भगवान उनको उस ऊँचाई तक ले जाते हैं जहाँ पहुंचकर वे संसार को सुख तथा शान्ति दे सकें।

युवावस्था के वे दिन कितने वैभवपूर्ण होते हैं जब युवक हृदय-क्रान्ति की इस प्रक्रिया से होकर गुजरते हैं

१३--भगवद्-अस्तित्व का आनन्द

*सी० एस० प्रकाश

शाम की रंगीनी हलके अन्धेरे में बदलने लगी है। सूर्य अपनी सुनहली किरणों के साथ पश्चिमी क्षितिज में अस्त हो चुका है। साई वृन्दा-वन में वट वृक्षों के साए गहरे हो गए हैं। सहसा सहस्त्रों भक्तों में मौन की एक लहर दौड़ जाती है। वे साई राम शैड में एकत्रित हैं। दूर से लाल वस्त्र पहने एक मोहक आकृति प्रकट होकर मन्द गति से पथ पर आगे बढ़ रही है- श्री सत्य साई बाबा दर्शन देने पधारे हैं। प्रस्तुत लोगों के हृदय से हर प्रकार की सांसारिक चिन्ता लुप्त हो गई है क्योंकि मानवीय रूप में भगवान उनके बीच आ चुका है और उनकी शंकाएँ मिटाकर उनको आनन्द विभोर करने के लिए तत्पर हैं।

भगवान और भक्तों के बीच तुरन्त ही सीधा सम्पर्क स्थापित हो जाता है। प्रत्येक मन शान्त है और प्रत्येक आँख हजारों सूर्यों जैसी तेजवान् आकृति पर जमी हैं। उनके हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहे हैं··· भगवान बड़ी प्रभावशाली गति से भक्तों के बीच बढ़ रहे हैं और धूलि पर उनके पद-चिह्नों की छाप नहीं पड़ रही है।

वे एक अपंग स्त्री के पास आकर रुक जाते हैं। स्त्री पहियों वाली कुर्सी में बैठी है। भगवान कुछ सन्तवना तथा उत्साहवर्धक शब्द बोलते

---

*प्रकाश जी का संबंध कोयम्बटूर, तमिलनाडु से है। इन्होंने कालेज से बी० एससी० पास किया। इस समय ये कारों के पुर्जे बनाने का प्रशि-क्षण ले रहे हैं।

हैं। सहसा उनका दायाँ हाथ एक अद्भुत ढ़ंग से गोलाकार गति में घूमने लगता है—और लो उस स्त्री को मुट्ठी भर विभूति भगवान से मिल गई। वे उसे आशीर्वाद देकर आगे बढ़ गए हैं। आँसुओं तथा कृतज्ञता से भरी दो आँखें उनको आगे बढ़ते देख रही हैं—स्त्री को जीवन में एक बार फिर से प्रसन्नता प्राप्त हो गई हैं······ ।

भगवान भीड़ में इधर उधर घूम रहे हैं। लोग उन्हें पत्र दे रहे हैं और भगवान उनको अशीर्वाद ! यहाँ-वहाँ वे किसी से एकाध बात करने के लिए ठहर जाते हैं या फिर कोई पद-नमस्कार करने हेतु उन्हें रोक लेता है। वे रुक-रुक कर, बड़े रहस्यपूर्ण ढंग से अपनी उंगलियाँ घुमाकर सबको आशीर्वाद दे रहे हैं। भक्त उन्हें श्रद्धा और आनन्द से निहार रहे हैं क्योंकि उनके दर्शनों ने उनके अनेक पाप धो डाले हैं। उनके शब्द भक्तों के हृदय को आनन्द से परिपूर्ण कर देते हैं और उनके चरण-स्पर्श से भक्तों के जीवन में प्रसन्नता, पवित्रता तथा समृद्धि आ जाती है।

इस मनहर दृश्य को देखकर हृदय उल्लास से भर जाता हैं। हज़ारों व्यक्तियों को इतना प्रसन्न देखकर देखने वालों का मन गद्‌गद् हो उठता है। यह एक ऐसा रहस्य है जिसकी न तो शब्दों में व्याख्या की जा सकती है और न ही चमत्कारों पर अनुसंधान करने वाले अपने आराम-दायक कार्यालयों में बैठकर इसका विश्लेषण कर सकते हैं। यह तो हृदय द्वारा अनुभूति की जाने वाली बात है और हृदय वह वस्तु है जो आध्यात्मिक क्षेत्र में बुद्धि से कहीं आगे चलकर लक्ष्य तक पहुँच जाता है।

मुझे सात वर्ष पहले का वह दिन याद आता हैं जब मैंने वृन्दावन की पावन धरती पर अपना पहला पग रखा था। उस समय मुझे कोई

अनुमान नहीं था कि मेरे भाग्य में क्या है। वृन्दावन उस समय अपने वर्तमान रूप से थोड़ा-सा भिन्न भी था। भगवान साई के बंगले के रास्ते के दोनों ओर पीले तथा लाल रंग के गुलमोहर के वृक्ष अपनी सुन्दर छटा दिखा रहे थे। सूर्योदय की बेला में पक्षी चहचहा रहे थे और मन्द पवन चल रही थी। मुझे ऐसा लगा था मानो मेरे अन्दर शान्ति तथा आनन्द भरता जा रहा है। यह स्थान नगर के कोलाहल से कितना भिन्न था। यह मेरा भावी निवास-स्थान था, मेरा वास्तविक निवास-स्थान था।

हमारे बीच में उस समय केवल २४ छात्र थे। आज छात्रों की संख्या दस गुनी है और मेरा विचार है कि भविष्य में सौ गुनी हो जाएगी। टीन की छत वाला एक-मंज़िला छात्रनिवास अब एक तीन मंजिले भव्य भवन में परिवर्तित हो चुका है जो अपने सुन्दर आकार तथा गुम्बजों के कारण भगवान का मन्दिर प्रतीत होता है। वृन्दावन में जहाँ बाह्य परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है वहाँ छात्रों के हृदय भी आँतरिक परिवर्तन के कारण बहुत बदल चुके हैं। भगवान की निरन्तर दया तथा उनके प्रेम ने हमारी आदतों, हमारे विचारों तथा हमारे जीवन प्रणाली पर गहरा प्रभाव डाला है।

सामान्यत: छात्र अपनी शिक्षा पूरी करके छात्रावासों से चले जाते हैं परन्तु यह भगवान की अपार कृपा ही है कि वे छात्रों के लिए कुछ काम जुटाने का प्रयास भी करते हैं ताकि शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् भी छात्रों को वृन्दावन होस्टल के आश्रमरूपी जीवन का आनन्द प्राप्त हो सके। भगवान के निकट रहकर उनके चरणों में जो आनन्द मिलता है उसे मैं शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं कर सकता।

भगवान अब द्वार की ओर वापस चल पड़े हैं। उनके दर्शन से प्रस्तुतकर्ता को जो आनन्द प्राप्त हुआ था वह अब थोड़ी-सी उदासी में

परिवर्तित होने लगा है क्योंकि अब भगवान उनकी दृष्टि से ओझल हो जाएँगे परन्तु उनको यह भी तसल्ली है कि भगवान उनके हृदय से तो दूर नहीं होंगे। अज्ञानतावश कुछ व्यक्ति ऐसा समझ लेते हैं कि वे दूर हो गए, अन्यथा भगवान सदा हमारे आसपास ही रहते हैं।

बंगले के बाहर कालेज के छात्र एक लम्बी पंक्ति में खड़े भगवान की प्रतीक्षा कर रहे हैं। प्रातःकाल से ही उनको इस घड़ी की प्रतीक्षा थी क्योंकि अब वे बरामदे में भगवान के चरणों में बैठकर भगवान की उपस्थिति तथा बातों से लाभान्वित हो सकेंगे।

भारत तथा अन्य देशों से आए भिन्न-भिन्न प्रकार के छात्र यहाँ एकत्रित हैं। भिन्न-२ जातियों तथा भिन्न-२ सामाजिक पृष्टभूमि से उनका सम्बन्ध है। कोई धनी बाप का बेटा है तो कोई निर्धन का, कोई वैज्ञानिक का बेटा है तो कोई व्यापारी का, परन्तु यहाँ आकर वे ये सारी कृत्रिम सीमाएँ तोड़ चुके हैं। वे यहाँ जिस प्रकार रहते हैं उसे देखकर ज्ञात है कि सब मनुष्य भाई-भाई हैं और भगवान सबके पिता समान हैं।

जीवन में उनकी आशाएँ क्या हैं? वे किन बातों में विश्वास रखते हैं?

अन्य कालेजों के छात्रों की भाँति वे सिनेमा, शराब, सिग्रेट आदि की ओर आकर्षित नहीं होते। उनको पता लग गया है कि केन्द्रीय-सुख के अतिरिक्त जीवन का एक और भी अर्थ है। गलत आदतों तथा दुर्विचारों का स्थान गम्भीरता तथा दृढ़ता ने ले लिया है। वे जानते हैं कि मानव-जीवन का लक्ष्य है भगवान को प्रसन्न करना, उनकी दया प्राप्त करना तथा उन्हीं में विलीन हो जाना। वे यह भी जानते हैं कि इस लक्ष्य की प्राप्ति भगवान की शिक्षा को मानने, उनके बताए भक्ति तथा प्रेम के मार्ग पर चलने तथा मानव जाति की [illegible] करने

से होगी। रास्ते भिन्न-२ हैं परन्तु किसी रास्ते पर चलें भगवान के चरणारविन्दों पर दृष्टि रखना भी उतना ही आवश्यक है ।

भगवान बंगले के द्वार में प्रवेश कर चुके हैं। वे छात्रों को हॉल में बैठने के लिए कहते हैं। भगवान एक कुर्सी पर विराजमान हैं और छात्र, अध्यापक तथा दूसरे व्यक्ति फर्श पर बैठे हैं। हाल खचाखच भरा हुआ है। सबकी आशापूर्ण दृष्टि भगवान पर है। सहसा भगवान एक छात्र को कुछ बोलने के लिए कहते हैं। हम बहुत प्रसन्न हैं क्योंकि वह भगवान जिन्होंने वेद, उपनिषद् तथा भगवद्गीता तथा अन्य धार्मिक ग्रंथ समय-समय पर संसार में भेजे, हमारे सम्मुख हैं, हमसे बातचीत कर रहे हैं। आत्मा का वह सागर हमारे सामने साक्षात् प्रस्तुत है, जिसकी हम बूंदें हैं।

वह छात्र खड़ा हो जाता है और भगवान के बारे में कुछ बोलता है। मुझे भगवान साई को देखकर सागर में तैरते हिमशिखर Iceberg की याद आ जाती है जिसका केवल दसवाँ अंश दृष्टिगोचर होता है। शेष ९/१० भाग पानी में डूबा रहता है। इसी प्रकार साई बाबा की शक्ति तथा उनके वैभव का एक अंशमात्र ही हम अपनी मानवीय-दृष्टि से देख पाते हैं। भगवान की महिमा ऐसी अपार है कि यदि समस्त मानव जाति सहस्रों वर्षों तक उसका वर्णन करती रहे तो केवल छोर तक पहुँचे।

कभी सब मिलकर भजन गाते हैं और भगवान स्वयं थालम बजाते हैं, कभी वे भगवद्गीता के किसी अंश को लेकर अपनी मधुर वाणी में प्रवचन देते हैं। ऐसे अवसरों पर वे हमारी शंकाएँ दूर करके हमको भगवद्-मार्ग दर्शाते हैं। वे चरवाहे की भाँति हमको हंकाते हैं और हम लक्ष्य पर पहुँचने का पूर्ण विश्वास लिए भेड़ों की भाँति चलते हैं। वो

हमें भारत की आध्यात्मिक निधि से कथाएँ भी सुनाते हैं तथा यह भी बताते हैं कि चरित्र के निम्नस्तर से ऊपर उठकर हम भक्ति तथा नैतिकता के बल पर आध्यात्मिक सत्य तक पहुँच सकते हैं उनके शब्दों का हमारे हृदय पर कितना गहरा प्रभाव पड़ता है इसका वर्णन नहीं हो सकता। थोड़ी-सी अवधि में ही भगवान छात्रों को "आवारा कुत्तों से प्रकाश स्तम्भ" बना देते हैं। यह परिवर्तन किस प्रकार होता है यह तो केवल उनके साथ रहकर अनुभव करने की ही बात है।



१४-श्री सत्य साई सदगुरु

*एम० ननजुनदिया

श्री सत्य साई बाबा जो आकाश की भाँति विस्तृत तथा महासागर की भाँति अगाध हैं शब्दों के दायरे में नहीं आ सकते। ऐसे मामले में यदि कोई मनुष्य अपने अनुभवों को सोच-समझकर हलका करके भी बताए तो दूसरे उसे अतिशयोक्ति ही समझते हैं फिर भी बताने वाले को इस अमृत का आनन्द तो मिलता ही है। मैं उनके बहुमुखी व्यक्तित्व से केवल एक पक्ष अपने प्रस्तुत लेख के लिए चुन रहा हूँ और वह पक्ष है—साई बाबा सदगुरु के रूप में।

गुरु अपने शिष्यों के अज्ञान को दूर करता है। हमारे धार्मिक ग्रन्थों में गुरु को ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश कहा गया है। साई बाबा ने इन तीनों पक्षों को मिला कर एक कर दिया है। वे कहते हैं कि गुरु सदाचार का बीज बोता है (ब्रह्मा), उसको उन्नत करता है (विष्णु) तथा दुर्भावना तथा दुरविचार की उस घात को नष्ट करता है जो सदाचार के पौधे की बढ़ोत्तरी में बाधा बनती है (महेश)।

सदगुरु केवल बुद्धि तथा ज्ञान देकर अज्ञानता को ही दूर नहीं करता बल्कि अपने शिष्यों की बाह्य रक्षा तथा आन्तरिक उन्नति का भी ध्यान करता है। साथ ही साथ वह माता का सा प्रेम भी शिष्यों को देता है। वह एक ऐसा व्यक्ति होता है जो मार्ग भी जानता है और

---

*श्री ननजुनदिया श्री सत्य साई महाविद्यालय में वाणिज्य के प्रवक्ता तथा सत्य साई कला महाविद्यालय के प्रधानाचार्य हैं।

मार्ग की कठिनाइयाँ भी। लक्ष्य का भी उसे ज्ञान होता है। अपने शिष्य की त्रुटियों तथा शक्तियों से भी वह भली-भाँति परिचित होता है। वह अपने शिष्यों को लक्ष्य तक ले जाने का उत्तरदायित्व स्वीकार करता है। वास्तव में सदगुरु स्वयं ब्रह्मा होता है।

ब्रह्माविद ब्रह्मा भवति

सत्य साई बाबा ऐसे ही महान् सदगुरु हैं। मैं प्रस्तुत लेख में यह बताने में असमर्थ हूँ कि कितने हजार व्यक्ति उनको अपना दैवी माता-पिता समझते हैं।

पहला भजन जो उन्होंने गाया और दूसरों को गाने के लिए कहा वह था :—

मनसा भज रे गुरु चरणम्।
दुष्कर भव सागर तरणम्।

एक अन्य प्रवचन के आरम्भ में उन्होने कहा था :—

नाह्म मनुष्य: न च देवा यक्ष
न ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य, शूद्र
न ब्रह्मचारी, गृही, वनस्था
अहम् सत्यबोधक: सत्यं, शिवं, सुन्दरम्।

इन सबसे ज्ञात होता है कि वे अपने सदगुरु होने की घोषणा कर चुके हैं।

स्वामी जी सदगुरु के रूप में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखते हैं :—

१— अपना जीवन उन्होंने अपना संदेश बना लिया है।
२—बोलकर, लिखकर तथा संदेश देकर दूसरों को शिक्षा देते हैं।
३—दूसरों को अन्तर्प्रेरणा देते हैं।

स्वामी जी अपने सम्बन्ध में कहते हैं "मैं खोजबीन तथा नापतोल से परे हूँ। केवल वही मेरी झलक देख सकते हैं जो मेरे प्रेम को समझते हैं और उसका अनुभव रखते हैं।" हेमादपन्त अपनी पुस्तक "साई सत चरिता" में लिखते हैं—"मैं अपने परम मित्र के जीवन या अपने मन के सम्बन्ध में ज्ञान नहीं रखता तो मैं उस महान् अवतार के सम्बन्ध में क्या लिख सकता हूँ जिसकी महिमा वेदों में भी पूर्णरूपेण वर्णन न की जा सकी।"

"यथोवाचानिर्माणार्थः अप्राप्य मनसा सः"

मुझ जैसा तुच्छ व्यक्ति स्वामी जी के जीवन का वर्णन नहीं कर सकता। मेरा जो प्रयास है वह उनको जाँचने या आँकने का नहीं बल्कि वर्णन से लाभान्वित होने तथा आनन्द प्राप्त करने हेतु है।

स्वामी जी का जीवन विश्वव्यापी प्रेम, वैराग्य, निरन्तर कर्म, आनन्द, प्रसन्नता, त्याग, सेवा, सहनशीलता, सहानुभूति, आत्म-संयम तथा अन्य अनन्त गुणों का प्रतीक है। वे सदा प्रसन्नचित्त रहते हैं। मानसिक स्थिरता को ही 'योग' कहा जाता है। जब से उन्होंने अपने आपको सत्य साई बाबा घोषित किया है वे प्रत्येक स्थान पर वर्ष के प्रत्येक दिन अपने जागरण की अवस्था में हजारों व्यक्तियों की दुःख-भरी कहानियाँ सुनते हैं और फिर भी प्रसन्न चित्त रहते हैं। इतना ही नहीं वे अपने दरबार से दुखियों को ही सुखी बना कर लौटाते हैं। अपने माता-पिता तथा अन्य सम्बन्धियों की मृत्यु भी उनको प्रभावित नहीं कर सकी। ऐसे अवसरों पर वे जो कुछ करना चाहिए करते हैं परन्तु सदा की भाँति शान्त-चित्त रहते हैं। हमारे स्वामी के अतिरिक्त ऐसा अनुभव और कहाँ हो सकता है। संसार भर में हजारों संस्थाओं में अपना संदेश लेकर जो वे घूमते हैं यह उनके निष्काम प्रेम और दैवित्व का ही प्रमाण है।

अपने भक्तों का वे कितना ध्यान रखते हैं इसका पता इस बात से चलता है कि कभी-२ तो वे भक्तों का शारीरिक कष्ट अपने शरीर पर ले लेते हैं, यों तो इस संदर्भ में बहुत से उदाहरण हैं परन्तु प्रार्थी में 'शिव-शक्ति" और गोआ में 'अपन्डेसाइटिस' के दो उदाहरण ही प्रयाप्त हैं।

अपने समय को वह एक क्षण भी नष्ट नहीं करते। उनका कहना है "जो समय को नष्ट करता है वह जीवन को नष्ट करता है।" बिना आवश्यकता के वे एक नया पैसा व्यय नहीं करते। अनगणित शक्तियाँ उनके पास हैं परन्तु वे अपने पर सयंम रखते हैं। अपने जीवन के आरम्भ काल से अब तक बहुत से लोगों ने उनको गलत समझा है। उनके माता-पिता, सम्बन्धियों तथा भक्तों ने भी उनको बहुत कम समझा है। जो भी जाता है उनसे लाभान्वित होने जाता है। वह उनसे इसलिए प्रेम करता है कि भगवान साई उसको कुछ लाभ पहुँचाएँगे। भगवान यह सब कुछ जानते समझते हुए दुःखी मानवता की सहायता करते रहते हैं। अनेक बाधाओं के होते हुए भी वे अकेले ही अपना धर्म-संस्थापन कार्य पूरा करने में लगे हुए हैं। दैवी-शक्ति के अतिरिक्त यह और क्या है? चालीस वर्षों से वे दैवी-सत्य हमारे समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं और हम उसका अनुसरण करने में असमर्थ हैं। यह दैवी सहिष्णुता नहीं तो और क्या है? वे जानते हैं कि दुःख मनुष्य के अपने कर्मों का परिणाम हैं फिर भी वे उन्हें दूर करने को तत्पर रहते हैं। इसे दैवी-सहानुभूति के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? अपने कार्य में वे समस्त संसार के भिन्न-२ वर्गों के लोगों को सहायता करने पर बाध्य करते रहे हैं। इसको दैवी-शक्ति के अतिरिक्त और क्या नाम दिया जा सकता है?

यदि किसी की आँखें खुली हों तो वह स्वामी में स्थितिप्रज्ञ देख सकता है जैसा कि गीता में कहा गया है "दुःख में दुःखी नहीं, सुख में सुख से पागल नहीं। काम, क्रोध और भय से दूर शान्ति तथा उच्चकोटि के चिन्तन में जीने वाला।" गीता में दिए गए 'निष्काम कर्म' तथा ज्ञानी शब्दों का अर्थ समझने के लिए साई बाबा को देखो। पूर्ण वैराग्य तथा पवित्र प्रेम के इस सामन्जस्य को देखकर विश्वास आ ही जाता है।

इस प्रकार स्वामी जी अपने बच्चों को वह सब कुछ सिखाते हैं जो उनको उनके लक्ष्य तक ले जाता है। यदि कोई उनको देखकर नहीं सीख सकता तो वे उसको बोलकर, लिखकर तथा बातें करके सिखा देते हैं।

स्वामी जी ने अनेक पुस्तकें (वाहिनी) लिखी हैं। "ध्यान वाहिनी" में वे लिखते हैं—"अज्ञान को नष्ट करने तथा भगवान को पाने हेतु मनुष्य को ध्यान-मार्ग का पालन करना पड़ता है।" उपनिषद् वाहिनी में वे कहते हैं कि मनुष्य मूलरूप से देवत्व रखता है परन्तु वह अपने स्वभाव को भूल बैठा है। अपने असली रूप को पहचानने के लिए मनुष्य को उपनिषदों का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। "धर्म वाहिनी" में वे लिखते हैं कि जीवन एक कारागार की भाँति हैं। मनुष्य का धर्म है कि मुक्त होकर सच्चिदान्द की अनुभूति करे और जाने कि सब कुछ ब्रह्म है। "प्रसन्नती वाहिनी" में वे लिखते हैं कि भगवान प्राप्ति-साँसारिक मोह को भस्म कर देती है। काम, क्रोध तथा लालसा से मुक्त होकर सच्ची शान्ति का आभास हो सकता है। यह उसी समय सम्भव हो सकता है जब मनुष्य समझ ले कि उसके भीतर-बाहर मूल-तत्व भगवान है। अपनी समस्त कृतियों में भगवान साई ने अपने शिष्यों को अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने का प्रयास किया है।

अब उनके पत्रों, संदेशों तथा प्रवचनों से भी कुछ देखिए :—"अज्ञान के अन्धकार से मृत्यु अच्छी है"। "तुम एक व्यक्ति नहीं हो। तुम में तीन व्यतित्व निहित हैं। एक वह जो तुम स्वयं को समझते हो, एक वह जैसा दूसरे तुमको समझते हैं और एक वह जो वास्तव में तुम हो।" वे हमको सुझाव देते हैं कि हम अपने दोनों झूठे पक्षों को भूलकर आत्मिक पक्ष पर बल दें। मन में पवित्र विचार उत्पन्न करने हेतु उन्होंने एक पत्र में लिखा "यदि तुम अपने को मिट्टी समझते हो तो तुम मिट्टी के समान हो और यदि तुम स्वयं को भगवान समझते हो तो तुम भगवान ही हो। विचार ही सब कुछ है। जैसे तुम्हारे विचार होंगे वैसा ही तुम बन जाओगे।"

एक प्रवचन में उन्होंने कहा था—"इन तीन बातों का अनुसरण करो। मृत्यु से भयभीत न हो, संसार से न डरो और भगवान को न भूलो। आत्म-निरीक्षण के सम्बन्ध में उन्होंने कहा, "अपने मन

चरित्र, विचार, कर्म तथा शब्दों पर सदा कड़ी दृष्टि रखो।" उन्होंने व्याख्या की कि विचारों से ही कर्म तथा चरित्र की उत्पत्ति होती है। अच्छे चरित्र की इच्छा हो तो मन में अच्छे विचारों को स्थान दो। विचारों का सम्बन्ध भोजन से है और भोजन का वह सब कुछ है जो तुम ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शरीर के भीतर ले जाते हो इसलिए इस सम्बन्ध में भी सावधानी रखो कि तुम क्या देखते हो, क्या सुनते हो, क्या छूते हो और क्या सूँघते हो। यदि तुमने इसका ध्यान रखा तो जीवन में लक्ष्य तक पहुँच सकते हो।

जीवन की समस्याओं से परेशान व्यक्तियों के लिए स्वामी जी ने एक बार कहा था—"भगवान में समाकर रहो, सब कुछ ठीक रहेगा। दूसरों को भगवान में लीन करने का प्रयास करो, सब कुछ ठीक रहेगा। इस सत्य पर विश्वास रखो, तुम्हें मुक्ति मिल जाएगी।" एक अहंकारी को उन्होंने लिखा "जब जीवन सागर में अहंकार का बुलबुला टूट जाता है तो सागर ही बन जाता।" एक और पत्र में लिखते हैं "भक्ति उस समय पूर्ण होती है जब हर वस्तु में सब कुछ दिखाई देने लगता है।" आगे लिखते हैं, "तुम्हारे भीतर जो भगवान है वही सब के भीतर है। यदि तुम यह नहीं जानते तो कुछ नहीं जानते।"

इस प्रकार साईं सदगुरु हमको मृत्यु से जीवन की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर तथा असत्य से सत्य की ओर ले जाते हैं।

अन्तप्रेरणा भगवान का एक और शिक्षा-माध्यम है। यह उनके भक्तों का एक सामान्य अनुभव है कि भक्त उन्हें सदा अपने निकट भासता है। वे मनुष्य को उसी अन्तरात्मा द्वारा चेतावनी तथा निर्देश देते हैं और उसकी आन्तरिक रक्षा करते हैं। अनेक लोगों को सही मार्ग दिखाने या उनके दुःख का निवारण करने वे स्वप्न में प्रकट हुए और किसी-किसी के समक्ष वे विभूति के रूप में अपने फोटो से बाहर आए। एक समय जब स्वामी जी मेरी ओर से कृपादृष्टि किए हुए थे,

मुझे जीवन एक दम घोंट देने वाला दु:ख प्रतीत हो रहा था। मन ने मुझ से कहा कि मैं उनसे भाग जाऊँ और मनमानी करूँ। तभी स्वामी जी मेरे अन्दर से बोले, "मैं परमेश्वर स्वरूप हूँ। तुमको यह अनुभूति प्राप्त हो भी चुकी है। जिस प्रकार अग्नि और जल एक साथ नहीं रह सकते इसी प्रकार घृणा तथा क्रोध मेरे भीतर नहीं रह सकता। तुम्हारा कर्त्तव्य है कि तुम अपनी त्रुटियों को पहचानों और उन्हें दूर करो। मैं परिपूर्ण और स्वतन्त्र हूँ। मुझे न तुम से कुछ पाना है न खोना है। तुम मुझ से दूर होकर बहुत कुछ खो दोगे और यदि मेरे साथ रहे तो बहुत कुछ पा लोगे। सोचो और अपने को अपने आप से बचाने के लिए मेरे साथ रहो।"

एक बार स्वामी जी ने मुझ से कोई भी काम लेना बन्द कर दिया। यह स्थिति भी बड़ी कष्टदायक थी। उस समय भी मुझे आभास हुआ जैसे स्वामी जी कह रहे हों, "काम की इच्छा भी तो एक प्रकार से दुर्बलता है। शान्त रहो। जो कार्य तुम्हारे सम्मुख आए उसे लगन निःस्वार्थ तथा मुस्कान के साथ कर डालो। समर्पण प्रौढ़-बुद्धि का लक्षण है। इच्छा तथा पसन्द-नापसन्द इस बात का प्रमाण है कि तुम्हारा अहं शेष है और यह अहं ही मेरे प्रति पूर्ण समर्पण में बाधक है।"

मैं अपनी बात एक प्रार्थना के साथ समाप्त करता हूँ।

जब तक मेरी इच्छा समाप्त हो मेरी इच्छा तुम बने रहो।

जब तक मेरा भय दूर हो मेरे मन में यह भय रहने दो कि कहीं तुम्हारी आज्ञा उल्लंघन से मैं तुम्हें रुष्ट न कर दूं।

मुझे यह आभास प्रदान करो कि तुम सदा मेरे मन में हो और यह कि मैं जो यह कार्य करूँ वह तुम्हारा कार्य हो।

जब तक मुझे अपनी वास्तविकता का ज्ञान न हो तब तक तुम मुझे अपने शारीरिक रूप से प्रेम करने दो और मेरे अपने शरीर से उपेक्षा !

१५ एक दैवी सितार-वादक

*जे० श्यामसुन्दर राव

भारतीय संस्कृति संसार में प्राचीनतम् मानी जाती है और इस संस्कृति का एक विशेष पक्ष है संगीत। संगीत का स्रोत सामदेव है और सरस्वती संगीत की देवी है जिसके हाथ में वीणा रहती है। वीणा से ही आधुनिक भारत के महत्वपूर्ण संगीत यंत्र सितार का जन्म हुआ। इस यंत्र में ऐसा जादू है कि इसकी एक तरंग से सुप्त आत्मा जागृत हो जाती है। सितार में सात तार होते हैं और इसी बात से 'सितार' (सत-तारा) का नामकरण हुआ है।

सितार अन्दर से खोखला होता है। यह यंत्र काफी हल्का होता है। यह जितना ही हल्का होगा इसके सुर उतने ही गहरे तथा मधुर होंगे। दूसरी ओर सांसारिक चिन्ताओं का बोझ मनुष्य और ब्रह्मा के बीच बाधा बना रहता है। इसी बात को सम्मुख रखते हुए कलयुग के अवतार श्री सत्य साई बाबा ने सितार संगीत को ब्रह्मानुभूति का माध्यम बनाया है।

सितार चाहे कितना भी हल्का या थोथा हो बिना तारों के सुर नहीं दे सकता। जिस प्रकार सितार के तार सितार को संगीत प्रदान करते हैं इसी प्रकार सदाचार मनुष्य को मनुष्यता प्रदान करता है। सदाचार रहित मनुष्य पशु समान होता है

---

*बंगाल से आकर श्री श्यामसुन्दर जी ने यहाँ से बी० कॉम किया और अब हिन्दी में एम० ए० कर रहे हैं। वे एक कुशल सितार वादक हैं और उत्तरी भारत के प्राचीन संगीत में रुचि रखते हैं। एक सितार वादक के रूप में श्यामसुन्दरजी महाविद्यालय के वाद्य-संगीत में महत्व-पूर्ण बने रहे।

आज के दुर्बल मनुष्य के अस्त-व्यस्त जीवन में सत्य, धर्म, शान्ति, प्रेम, भक्ति, कर्त्तव्य तथा अनुशासन के सात सुरों से एक अद्‌भुत संगीत भर दिया है।

सितार का पहला तार बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी से रागों की उत्पत्ति होती है। भगवान साई ने अपने मानवीय सितार के लिए प्रथम तार प्रेम को चुना है। प्रेम-स्वर से वे आज के कोलाहल भरे जीवन में मधुर संगीत भर देते हैं।

इस सितार का द्वितीय तार है धर्म ! प्रेम तथा धर्म एक सिक्के के दो पक्षों के समान भगवान के कार्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जीवन मंच पर जब बुराई उभर आती है तो सदाचार पर्दे के पीछे चला जाता है। इसलिए भगवान साई प्रेम-सुर को बजाकर सदाचार्य को कार्यशील रखते हैं। यही कारण है कि उनको धर्म-स्वरूप कहा जाता है। अपने निस्वार्थ प्रेम से सदाचार को जागृत रखना ही उनके जीवन का लक्ष्य है।

सितार के हर तार का अपना महत्व है क्योंकि एक भी तार ढीला हो तो संगीत अस्त-व्यस्त हो जाता है। मानवीय सितार का हर तार भी इसी प्रकार महत्वपूर्ण है। इस सितार का तीसरा तार सत्व है जो सदाचार के साथ ही रहता है। वेदों में भी इन दोनों गुणों को समान महत्व दिया गया है—"सत्यं वद, धर्मं चर।"

भक्ति चौथा तार है जिसमें हर तार के बजने पर अपने आप कंपन उत्पन्न हो जाता है। यह बात केवल सितारवादक जानता है। मानवीय सितार के इस रहस्य को साईं बाबा भली-भाँति समझते हैं। भक्ति से मिला हुआ पाँचवाँ तार शान्ति का है। सितार में चौथा तथा पाँचवाँ तार मिलकर पंचम स्वर 'पा' की ध्वनि देते हैं इसी प्रकार भक्ति तथा शान्ति का चोली-दामन का साथ है।

सितार वादक पहले तथा सातवें तार पर विशेष ध्यान देता है। इन को छेड़ने से दूसरे तथा छठे तार में अपने आप ही कंपन उत्पन्न हो जाता है। सातवाँ तार लय को बनाए रखने के लिए छेड़ा जाता है और इसी लय से संगीत में माधुर्य उत्पन्न होता है। साईं बाबा के दैवी सितार में अनुशासन द्वारा ही जीवन के कर्कश स्वरों से मुक्ति मिलती है अनुशासन इस सितार का सातवाँ तार है। व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति के लिए स्वामी जी इस तार को पहले तार (प्रेम) के साथ मिल कर छेड़ते हैं।

भगवान साईं मनुष्य को कर्म करने की प्रेरणा देते हैं। यह छठा तार है। कर्म से ही हमको भगवान की दया प्राप्त होती है। यह पूर्व जन्म के कर्म ही का फल है कि हम ढाई सौ मानवीय सितार भगवान जैसे कुशल संगीतज्ञ के सम्पर्क में आ गए हैं।

जब यह सातों सुर एक साथ गूँज उठेंगे तो संसार एक अलौकिक संगीत से भर जाएगा।

सितार बजाने में बाँये हाथ की तर्जनी तथा मध्य उंगली और सीधे हाथ की पहली उंगली से काम लिया जाता है। भगवान साईं का दैवी प्रेम, दैवत्व तथा आदर्श जीवन इन तीनों उंगलियों के समान है जिनसे दैवी संगीत की रचना करके वे सुनने वालों को उसमें विलीन कर लेते हैं।

मेरा जीवन भी एक बिगड़े सितार की भाँति संगीत रहित था। भगवान ने मेरी ओर कृपादृष्टि डाली ओर मुझे अपने दयालु हाथों में ले लिया। उन्होंने मेरे हृदय के हजारों स्वरों को छेड़ दिया। अब तो मेरी यही प्रार्थना है कि भगवान मुझे एक दिन अपने अलौकिक संगीत में विलीन कर लें।

***

१६–व्यक्तिगत जीवन में दर्शन

*रूपक चाँगका कोटी

आज दर्शन को एक ऊँचा शब्द समझा जाता है तथा इसको समाज में निकम्मे बूढ़ों से सम्बन्धित माना जाता है परन्तु ऐसी बात नहीं। दर्शन एक युवक के जीवन में भी महत्वपूर्ण है।

जो अपने को दार्शनिक कहते हैं वे बहुधा दर्शन का क्रियात्मक अनुसरण किए बिना ही दर्शन का प्रचार करते रहते हैं। वे लक्ष्य के आस-पास चक्कर लगाते रहते हैं परन्तु लक्ष्य तक पहुँचते नहीं। उनकी दशा उस नेवले की सी होती है जो अपनी पूंछ पकड़ने के लिए उसके चारों ओर चक्कर तो काटता रहता है परन्तु उसे पकड़ नहीं पाता।

दर्शन मानव जीवन के चार मौलिक प्रश्नों के उत्तर देना चाहता है।

मैं कौन हूँ ?
मैं कहाँ से आया हूँ ?
मैं किस ओर जा रहा हूँ ?
यह संसार क्या है ?

प्रत्येक मनुष्य इस अर्थ में दार्शनिक कहा जा सकता है कि वह इन प्रश्नों के उत्तर खोजता रहता है।

अन्तिम विश्लेषण से हमको ज्ञात होता है कि यदि कोई भगवान की आराधना करे तो इन प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर सकता है। भगवान को आप गोविन्द, राम, दामोदर, शम्भू, या साई कोई भी

---

* इस वर्ष बी० एससी० किया। मधुर वाणी का वरदान प्राप्त किए यह एक अच्छे गायक हैं। नाट्य कला में इनकी रुचि गहरी है। "भज गोविन्दम" नाटक में इन्होंने आदिशंकर का अभिनय बड़ी सफलता से किया। यह नाटक १९७६ में महाविद्यालय के मंच पर प्रस्तुत किया गया। असम इनकी जन्म भूमि है।

नाम दे सकते हैं। हम भगवान ही हैं, उसी की ओर से आते हैं और उसी की ओर जाते हैं। यह संसार उसकी लीला मात्र है।

जितने भी दर्शनों का मैंने अध्ययन किया उन सब में मुझे शंकराचार्य के अद्वैतिक दर्शन ने बहुत प्रभावित किया। भगवद्गीता, उपनिषद तथा वेदों के दर्शन को मिलाकर इस दर्शन का आधार ज्ञान, भक्ति तथा कर्म पर है यह दर्शन सूक्ष्म भी है और साहसपूर्ण भी, विचारपूर्ण भी है और तर्कपूर्ण भी! अपने विस्तार तथा गहराई के कारण शंकराचार्य का यह दर्शन अद्वतीय है। इस दर्शन में वे धार्मिक ग्रन्थों के अद्वैतिक पक्ष सामने लाते हैं और भौतिकवाद तथा आध्यात्मिकवाद का बड़ा सूक्ष्म विश्लेषण करते हैं।

मनुष्य रोता हुआ जन्म लेता है मानो पूछ रहा हो कोहम, कोहम (मैं कौन हूँ ?) परन्तु माया और संसार में फंसकर वह अपने प्रारम्भिक प्रश्न का उत्तर खोजने योग्य नहीं रह जाता और शारीरिक तथा मानसिक रूप से परिवर्तित हो जाता है। वह अपने मस्तिष्क में केवल सूचना भर कर अपना साँसारिक ज्ञान बढ़ाता रहता है। इस संदर्भ में शंकराचार्य कहते हैं :—

भज गोविन्दम्, भज गोविन्दम्
गोविन्दम् भज मूढ़मते
संप्राप्त सन्निध काले
नहि नहि रक्षति दुकुम करे।

आधुनिक मनुष्य समझता है कि यह साँसारिक ज्ञान उसके लिए अति आवश्यक है। वह इसे प्राप्त करता है और परिणाम स्वरूप घमन्डी हो जाता है। मनुष्य ने शिक्षा को इतने निम्नतर तक गिरा दिया है कि शिक्षा ग्रहण करके वह द्वार द्वार किसी काम की भीख माँगता फिरता है।

साई बाबा कहते हैं "शिक्षा का लक्ष्य है चरित्र निर्माण।" व्याकरण के नियमों तथा विज्ञान के उन सिद्धान्तों से क्या लाभ जो मनुष्य को पशु से अधिक नहीं बना पाते ?

मनुष्य शिक्षा शास्त्रीयों के हाथों में कठपुतली बनकर रह गया है।

सूचना को ही शिक्षा समझ लिया गया है सूचना तो मनुष्य मन में कोलाहल ही उत्पन्न कर सकती है। वास्तविक शिक्षा तो वह है जो चरित्र निर्माण करके मनुष्य को चिन्तन करना सिखाए।

आज का मनुष्य अपने को शिक्षित समझकर इतना स्वार्थी हो गया है कि अपने रचेयिता को भी भुला बैठा। केवल साक्षरता के बल पर अहं में फंस कर मनुष्य उच्च आदर्शों तथा उच्च विचारों से दूर हट गया है।

वह शिक्षा किस काम की जो केवल पेट भरने में सहायता दे? क्या पशु-पक्षी अपना पेट नहीं भरते? क्या वे शिक्षित हैं?

ज्ञान मनुष्य के आस्तित्व का अंग है और ज्ञान कहीं बाहर से प्राप्त नहीं होता। मनुष्य ज्ञान की खोज में मीलों की यात्रा करता है परन्तु ज्ञान के स्रोत अर्थात अपने अन्तरतम में एक इंच भी नहीं झांकता। संसार का सारा ज्ञान अनन्तम् से ही प्राप्त हुआ है। ब्रह्मान्ड का विशाल पुस्तकालय तो स्वयं मनुष्य के भीतर है। केवल अन्दर झाँकने की बात है।

श्री शंकर आग्रह करते हैं "उस नाम का जाप करो और गोविन्दा की आकृति को निहारो तुम्हें समस्त ज्ञान प्राप्त हो जाएगा।" मनुष्य का सारा जीवन अनावश्यक बातों में नष्ट हो रहा है और उस महाज्ञान की ओर कोई ध्यान नहीं देता जो मनुष्य को अपूर्णता के दासत्व से मुक्ति प्रदान कर सकता है। एक दिन मृत्यु आकर इस प्रत्यक्ष संसार से तुम्हारे अस्तित्व के चिन्ह मिटा डालेगी। तब यह पुस्तक ज्ञान किस काम का?

अपने नाशवान रूप में मनुष्य जीवन का लक्ष्य जीवन-रहस्य को समझना तथा वास्तविकता को पहचान कर उसमें लीन हो जाना है। मनुष्य को सीखना चाहिए कि वह उस मृत्यु से कैसे गले मिले जो उसको एक शांतिपूर्ण तथा दैवी जीवन की ओर ले जाएगी।

थोड़ी सी शिक्षा, धन तथा ख्याति प्राप्त करके मनुष्य अपने यौवन तथा शक्ति पर गर्व करता है। शंकराचार्य ने क्या सुन्दर बात कही है :—

''न कुरु धन जन यौवन गर्वम
हरति नैमिस्यात काल : सर्वम
माया मयम इदन अखिलम हित्वा,
ब्रह्म पदत्वम प्रविश : विदित्वा।''

मिथ्या तथा भ्रम मनुष्य को जीवन की गाड़ी के दुखपूर्ण पहिए से बाँध देता है। वह धन, यौवन तथा मित्रों-साथियों के पीछे भागता है और भूल जाता है कि यह सब कुछ नाशवान है, धन तथा ख्याति तो ऐसे ही क्षणिक हैं जैसे पुष्प पंखुड़ी पर ओस की बुंदें। ''आज का राजा कल का भिखारी, आज का भिखारी कल का राजा।'' धन की लालसा मनुष्य को पशु के निम्न स्तर तक ले आती है और भाई-भाई का गला काटने को तत्पर हो जाता है।

किसी व्यक्ति का नाम कब तक रह सकेगा? जिस दिन सत्ता उसके हाथों से छिन जाएगी भिखारी भी उसका नाम नहीं लेगा। आज बच्चा है कल एक बच्चे का दादा और परसों मृत्यु शैय्या पर। फिर मनुष्य इन अस्थायी, नाशवान वस्तुओं पर क्यों गर्व करता है? यह उसका अहं ही होता है जो उसके विवेक को धुंधला कर देता है और वह सत्य तथा असत्य, अमर तथा अस्थायी को पहचान नहीं पाता।

एक मात्र स्थाई तत्व है और वह है गोविन्दा!

वही भगवान लाल वस्त्रों में सत्य साई का एक नया नाम धार कर फिर से धरती पर उतर आया है। इसी भगवान ने श्री शंकर को अपना संदेश वाहक बना कर पहले भेजा था। भाइयों! आओ हम इनके चरणाविन्द मजबूती से पकड़ कर भवसागर पार कर लें। आओ, उस साई मार्ग पर चल पड़ो जिस पर चलकर समाज से बुराइयों का उन्मूलन हो सकता है और यह संसार एक सुखद स्थान बन सकता है।

१७–गुणातीत के गुण

*ए० बी० श्रीनिवासन

भारत के लोग भगवद् अवतार में पूर्ण विश्वास रखते हैं। गीता में भी कहा गया है कि संसार में जब जब भी धर्म का हनन होता है। भगवान अवतरित होते हैं। मनुष्य को दु:ख तथा अन्धकार से निकालकर आनन्द के शिखर पर ले जाने के लिए आज के युग में भगवान ने साई बाबा का रूप धारण किया है।

अवतार में तीन गुण होते हैं– आकर्षण, प्रेम तथा प्रसन्न-चित्त। अवतार में छिपी आकर्षण शक्ति चुम्बक की भांति लोगों को सत्य मार्ग की ओर आकर्षित करती है।

त्रेता तथा द्वापर युग में भगवान की इस शक्ति ने शत्रु को भी अपनी ओर खींचा। कलयुग के इस अवतार में वह शक्ति और भी अधिक है क्योंकि आज का मनुष्य जीवन के कुप्रभावों से अन्धा हो चुका है।

साई का आकर्षण बहुरूपी है। किसी को वे दृष्टि से, किसी को मनोहर मुस्कान से और किसी को शब्दों से आकर्षित कर लेते हैं। संसार के कोने-२ से लोग उसकी ओर आकर्षित होते रहते हैं। मेरा विचार है कि भगवान के चरणारविन्दों की ओर आकर्षित होने के सम्बन्ध में इनमें से प्रत्येक व्यक्ति का अपना पृथक अनुभव होगा।

मैं अपना अनुभव बताता हूँ। मुझे श्री सत्य साई कला तथा विशाल महाविद्यालय में प्रवेश लेने में बड़ा संकोच था क्योंकि यहाँ के कड़े अनुशासन के बारे में मैंने बहुत कुछ सुन रखा था और उस समय अनु-शासन नाम की वस्तु से परिचित नहीं था। मैं तो कालेज के छात्रों को देखकर स्वयं भी वैसी ही स्वच्छंदता चाहता था। मुझे पता था कि साई

---

*पूना से आए श्रीनिवासन जी बी० एससी० करने के पश्चात क्रमबद्ध गणना (statistics) में डिप्लोमा कोर्स कर रहे हैं। ये बहुत अच्छे भजन गाते हैं।

महाविद्यालय में आने पर मुझे उस प्रकार का "आनन्द पूर्ण" जीवन नहीं मिल सकेगा।

स्वाभाविक ही था कि मैंने पहले पहल माता-पिता से साफ इन्कार कर दिया। इस बात को लेकर मेरी उनसे कुछ दिनों तक बोल-चाल भी बन्द रही। उन्होंने एक बार फिर मुझसे साई कालेज का प्रवेश पत्र भरने को कहा और मैंने फिर इन्कार कर दिया। मेरे पिताजी शान्त स्वभाव के व्यक्ति हैं परन्तु इस बार उन्हें क्रोध आ गया।

मेरे और उनके बीच काफ़ी कड़वाहट तथा गलतफहमी बनी रही। स्कूल परीक्षा का परिणाम अभी तक घोषित नहीं हुआ था। एक मित्र की सलाह पर मैंने यह सोचकर प्रवेश पत्र भर दिया कि परिणाम घोषित हुए बिना कोई भी महाविद्यालय मुझे प्रवेश नहीं देगा। मेरा विचार था कि ऐसा करने से मेरे माता पिता भी प्रसन्न हो जाते और मैं भी मजे में रहता। मैंने प्रार्थना पत्र भेज दिया। कोई सप्ताह भर बाद एक दिन डाकिया ने मुझे एक हरे रंग का कार्ड लाकर दिया। मुझे यह जानकर बड़ा धक्का लगा कि साई कालेज ने पास होने की शर्त पर मुझे प्रवेश देना स्वीकार कर लिया था। मेरे माता-पिता प्रसन्न थे परन्तु मैं बड़ा दु:खी था। परन्तु अब क्या हो सकता था। मैं जाल में फंस चुका था और मुझे साई बाबा के चरणों की ओर खींचा जा रहा था। दूर से उस शक्तिशाली चुम्बक ने मुझ जैसे जंग लगे लोहे के एक तुच्छ टुकड़े को अपनी ओर खींच लिया था। अपने ढंग से उन्होंने मुझे माँझ रगड़ स्वच्छ कर डाला। उन्होंने मुझे कई ऐसी बातें बताईं जिससे मुझे विश्वास करना ही पड़ा कि उनका कृपादृष्टि पहले से ही मुझ पर थी। यह उनका असीम प्रेम ही है कि वे भगवद मार्ग से भटके व्यक्तियों को राह पर ले आते हैं।

यह बात छात्रों के लिए ही नहीं बल्कि अन्य व्यक्तियों के साथ होती है। युवक हों कि वृद्ध सब उनकी ओर खिचते हैं और मैंने यह भी अनुभव किया है कि इस शक्तिशाली चुम्बक की ओर स्वच्छ लोहे की अपेक्षा जंग लगा लोहा अधिक खिचता है। इनकी यह विशेषता है कि ये पापी मन का मैल-कुचैल अपनी प्रेम वर्षा से धो डालते हैं।

जब व्यक्ति स्वामी जी के असीम प्रेम की अनुभूति प्राप्त कर लेता है तब यही प्रेम उसको स्वामी जी से कस कर बांध देता है। वे स्वयं

कहते है कि यदि कोई उनकी ओर एक पग बढ़ाता है तो वे उसकी ओर सौ कदम बढ़ आते हैं। क्यों न हम इस सुअवसर का पूरा-पूरा लाभ उठाएँ ?

अपने समय में गोपियों तथा गोपालों को आकर्षित करने के लिए भगवान कृष्ण ने बंसी का प्रयोग किया। जब वे बंसी की ओर आते तो उनको एक अद्भूत अनुभूति होती थी। बंसी अन्दर से खोखली होती है और यह इस बात का प्रतीक है कि मनुष्य भी जब साँसारिक आकर्षणों तथा अहंकार से रहित हो जाता है तो भगवान की ओर आकर्षित हो जाता है।

भगवान साई का दूसरा गुण यह है कि वे हमको इस बात में सहायता देते हैं कि हम अपने मन से दुर्विचारों तथा गलत आदतों को निकाल फेंकें। वे एक किसान की भाँति मन के खेत से घास निकाल कर बीजारोपण करते हैं और फिर पौधे को उन्नत करने हेतु स्वयं ही इसको पानी देते हैं। वे हमारे हृदय को भक्ति तथा प्रेम करने के लिए तैयार करते हैं और हमारे मन की रक्षा करते हैं। वे प्रेम के कोमल पौधे को बुराइयों से बचाने के लिए उसके चारों ओर अनुशासन की बाढ़ लगा देते हैं।

जब भगवान हमको एक उच्चतर अस्तित्व की ओर ले जाने का प्रयास करते हैं तो हमको ऐसा प्रतीत होता है मानो हमारा समय नष्ट हो रहा है। हम स्वयं अपने और उनके बीच की बाधाओं को दूर करने का प्रयत्न नहीं करते परन्तु वे हमें अपनी छत्र छाया में लिए रहते हैं। इस तपस्या में वास्तव में उनकी दया ही कार्य करती है। मनुष्य को अहं से सावधान रहना चाहिए। यदि कभी अहं जड़ पकड़ता भी है तो भगवान स्वयं उसका उन्मूलन करने को तत्पर रहते हैं ताकि भक्त का मार्ग सुगम बना रहे। यदि हम अपने खाली मन की झोली उनसे कुछ लेने के लिऐ फैला लें तो फिर उनकी दया अपार ही सिद्ध होती है।

आज के संसार में सत्यमार्ग से भटके हुए व्यक्तियों की कमी नहीं; भगवान यह बात भली-भाँति जानते हैं। और इसीलिए लोगों को अपनी ओर खींचने के पश्चात् वे उन पर प्रेम की वर्षा कर डालते हैं ताकि वे सत्यमार्ग पर चल पड़ें। एक बार मनुष्य उनके निकट आ जाए तो सत्य

मार्ग पर चल ही पड़ता है। यदि ऐसा नहीं होता तो इसका अर्थ यह है कि वह व्यक्ति विशेष, भगवान के आमन्त्रण के प्रति अत्यन्त तुच्छ सिद्ध हुआ है।

साई बाबा का तीसरा गुण है हर परिस्थिति में प्रसन्न चित्त रहना। भगवान कृष्ण भी इसी प्रकार चाहे युद्ध भूमि में रहे चाहे भद्र भूमि में, सदा प्रसन्न चित्त रहते थे। जब मनुष्य सुख की मुद्रा में होता है तो गाने लगता है। भय की स्थिति में तो कोई नहीं गाता परन्तु भगवान कृष्ण तो रुद्रभूमि में भी भगवद् गीता के श्लोक अर्जुन को गा गाकर सुनाते रहे। हमको भी स्थायी सुख की अवस्था प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए।

स्वामी जी भी सदा प्रसन्न चित्त रहते हैं। उनके परिवार के सदस्य उनके सम्मुख जटिल समस्याएं लाते रहते परन्तु स्वामी जी को शान्ति तथा प्रसन्न मुद्रा में देखकर उनकी आधी समस्या स्वयं ही सुलझ जाती है। शेष आधी समस्या का समाधान भी स्वामी जी बड़ी सुगमता के साथ कर देते हैं। कुछ समस्याएं तो इतनी जटिल होती है कि यदि मनुष्य उनको सुलझाने का प्रयास करे तो पागल हो जाए परन्तु भगवान उनको प्राथमिक कक्षाओं के गणित की भांति हल कर देते हैं।

चाहे साई बाबा लाखों के बीच हों या अपने एकान्त कक्ष में, सदा एक जैसे ही दिखाई देते हैं। वे स्वयं भी सुखी रहते हैं और अपने निकट आने वाले को भी सुख तथा प्रसन्नता प्रदान करते हैं। मैं समझता हूँ कि सत्य साई के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकता।

भगवान गुणातीत हैं परन्तु मनुष्य गुणरहित भगवान की बात सोच नहीं सकता इसीलिए अवतार साई अपने गुणों के साथ हमको अपने में विलीन करने के लिए प्रकट हुए हैं।

१८–बाबा तथा उनका प्रेम सिद्धान्त

*बी० वी० एस० सागर

जिस प्रकार धर्म एक है इसी प्रकार सिद्धान्त भी एक है और वह है प्रेम-सिद्धान्त ! यह बह्मान्ड सर्वशक्तिमान भगवान के असीम प्रेम का ही प्रदर्शन है पंच तत्व भी प्रेम के ही भिन्न-२ स्वरूप हैं। वायु उनके प्रेम की ओर चलती है और जल उनके प्रेम की ओर बहता है। अग्नि भी उनके प्रेम का प्रतीक है, भय का नहीं। प्रेम का यह सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त पंचतत्वों का मूल स्वभाव है।

भगवान बाबा केवल अवतार ही नहीं बल्कि प्रेमावतर तथा प्रेम-स्वरूप हैं। उनके कार्य का आधार ही प्रेम है। अन्य अवतार भी प्रेम से परिपूर्ण थे परन्तु उन्होंने अपना कार्य पूर्ण करने हेतु अत्याचारी तथा दुष्ट व्यक्तियों को कड़ा दण्ड भी दिया। श्री कृष्ण के पास भगवान का चिह्न सुदर्शन चक्र तथा श्री राम के पास धनुष के रूप में था। दुष्टों को नष्ट करने के लिए कलयुग में इस प्रकार के अस्त्रों की आवश्यकता और भी अधिक है, परन्तु भगवान साई का अस्त्र है प्रेम! उन्होंने स्वयं कई बार घोषणा की है कि वे पापी को नहीं बल्कि पाप को नष्ट करने के लिए संसार में पधारे हैं। उनके समस्त कार्यों का अधार प्रेम

---

*साई कालेज से बी० एस सी० करने के पश्चात् इन्होंने बंगलौर विश्व विद्यालय में एल० एल० बी० का कोर्स लिया है। इनका सम्बन्ध हैदराबाद से है।

है। जो उनसे थोड़ा सा भी सम्पर्क रखता, वह भली-भाँति जानता है कि भगवान साई पवित्र दैवी प्रेम साकार हैं।

श्री सत्य साई कालेज की नींव साई बाबा ने डाली थी। यहाँ रहने वाले हम छात्र कितने स्वभावशाली हैं कि हर क्षण उनके प्रेम का आनन्द लेते हैं। जीवन थोड़ा है और समय इतना नहीं कि नष्ट किया जाए। बाबा जी का कथन "समय को नष्ट करना जीवन को नष्ट करने के समान है" हमारे लिए विशेष रूप से और सामान्यत: और समस्त मानवजाति के लिए सत्य ही है।

उनका प्रेम आद्वतीय है। हजारों माताओं का प्रेम भी स्वामी जी के प्रेम की बराबरी नहीं कर सकता। वास्तव में माँ को अपने बच्चे से वात्सल्य होता है प्रेम नहीं और यदि इसे प्रेम कहा भी जाए तो इसमें स्वार्थ का भी अंश सम्मिलित रहता है। वह इसलिए प्यार करती है कि बच्चा उसका अपना होता है। परन्तु स्वामी जी का प्रेम पूर्णरूप से निष्काम है, दैवी है। वे स्वयं कहते हैं "कर्त्तव्य रहित प्रेम दैवी प्रेम होता है।" इसका अर्थ है कि प्रेम के साथ कोई भी शर्त जुड़ी हुई नहीं होनी चाहिए। क्या एक माता ऐसा प्यार दे सकती है? भगवान साई दूसरी ओर, हमसे इतना प्रेम करते हैं कि उनका प्रेम पाकर किसी अन्य प्रेम की आवश्यकता नहीं रह जाती।

प्रेम मानव जीवन का मौलिक अंश है। बहुत से लोगों के पास धन, शक्ति, ख्याति सब कुछ होता है परन्तु प्रेम के बिना उनको जीवन में भारी कमी का आभास रहता है। साधारणत: समाज में सुख को धन से संबंधित समझा जाता है। छात्रों की विचारधारा भी यही होती है कि धन बहुत महत्वपूर्ण वस्तु है परन्तु अपना समय तथा धन व्यय करने के पश्चात उन्हें ज्ञात होता है कि यह सब कुछ तो एकदम थोथा है।

उन्हें अनुभव हो जाता है कि समाज में मित्रता तथा मनोरंजन उसी समय तक प्राप्य है जब तक कि जेब भरी हुई है। जिस प्रकार बरसाती मेंढक पानी समाप्त होने पर लुप्त हो जाते हैं इसी प्रकार "परम मित्र" भी धन समाप्ति के साथ गायब हो जाते हैं। फिर उसका मन प्यार के लिए तरसता है और वे एक निस्वार्थ प्रेम देने वाला अस्तित्व खोजने लगते हैं। अन्त: उन्हें भगवान साई का पता लग जाता है। जिज्ञासावश वे उनके पास आते हैं और उनको सबसे भिन्न पाते हैं। उनको वे अलौकिक प्रतीत होते हैं। हो सकता है वे साई को भगवान के रूप में स्वीकार न करें परन्तु उनकी ओर आकर्षित अवश्य हो जाते हैं प्रेम का बन्धन मजबूत होता जाता है और मनुष्य के अन्तर्तम में एक परिवर्तन आने लगता है। भगवान जानते हैं कि किसी के भीतर क्या है और वे उसके साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं यहाँ तक कि व्यक्ति विशेष पूर्ण रूप से परिवर्तित हो जाता हैं।

मनुष्य को भगवान साई के निकट आकर अपना अन्तर्तम पवित्र होता ज्ञात होता है। उसका जीवन एक नए साँचे में ढल जाता है। भगवान आवश्यकता पड़ने पर डाँट डपट या उपेक्षा से भी काम लेते हैं परन्तु वह व्यक्ति उदास या निराश नहीं हो जाता। वह समझ जाता है कि गलती उसी की थी। धीरे-धीरे उसकी समझ में आ जाता है कि दैवत्व एक दर्पण की भाँति है जिसमें कर्मों का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। साथ ही साथ उसे प्रेम-अमृत का स्वाद मिलता रहता है और परिणाम-स्वरूप स्वामी जी के क्रोध के पीछे भी उसे उनका प्रेम प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है।

वृन्दावन में निवास करने वाले लगभग सभी छात्रों के साथ ऐसा ही होता है परन्तु उनमें प्रत्येक का अनुभव भिन्न होता है। धीरे-धीरे प्रत्येक छात्र कालेज तथा छात्रावास के अनुशासित वातावरण का अभ्यस्त हो जाता है।

भगवान अनुशासन का बहुत ध्यान रखते हैं। इस सम्बन्ध में हीरे की भांति कठोर हैं परन्तु वे आन्तरिक अनुशासन चाहते हैं। कर्तव्य, भक्ति तथा अनुशासन के तीन गुणों में वे अनुशासन को पहला स्थान देते हैं क्योंकि अनुशासन ही भक्ति के कोमल अंकुर की रक्षा करता है।

एक स्वच्छन्द व्यक्ति को अनुशासन में बाँधना काफी कठिन प्रतीत होता है परन्तु हीरा तो कट छंटकर ही मूल्यवान बनता है। धीरे-धीरे व्यक्ति की समझ में आ जाता है कि अच्छा बनने के लिए अनुशासन अनिवार्य है "परिस्थितियाँ जितनी भी कठिन होंगी उनका सामना करने वाला व्यक्ति उतना ही शक्तिशाली बनकर निकलेगा।" हम नष्ट हो जाने वाली कोमल कलियाँ हैं परन्तु यह हमारा स्वभाग्य ही है कि भगवान ने हमको अपने कर-कमलों से अपनी बगिया के लिए चुन लिया है ताकि हम पुष्प बनकर उनके चरणों में जा सकें।



१९–मौन स्वामी

*के० राजीव

एक महान अस्तित्व के बारे में कुछ लिखना मुझे बड़ा अटपटा सा लग रहा है। उनको सत्य साईं बाबा कहा जाता है। ऐसा कहना भी उद्दंडता ही है क्योंकि लाल वस्त्र पहने वे तो ब्रह्मांड के रचेयता हैं।

अपने अंह की संतुष्टि के लिए मैं कुछ शब्द-पुष्प उनके चरणार-विन्दों में अर्पित कर रहा हूँ। स्वामी जी को जानना असंभव है परन्तु हम उन्हें पहचान सकते हैं। हम किसी को उसके गुणों से पहचानते हैं और इस मानव स्वभाव को दृष्टि में रखते हुए ही भगवान सगुण हमारे बीच प्रगट हो गए हैं। शायद भगवान हमको यह दर्शाना चाहते थे कि गुण अपने वास्तविक रूप में कैसे दिखाई देते हैं ?

जिनको देखने के लिए आँखें और सोचने के लिए बुद्धि मिली है उनको स्वामी अवश्य अवतार दिखाई देंगे। पहले हम किसी फल को उसके बह्य आकार से ही पहचानते हैं, स्वाद का पता तो उसको खाने पर ही लगता है। भगवद् अनुभूति के फल का रसास्वादन करने के लिए भगवान हमको अनेक मार्ग दिखाते हैं। हम उनको अपना स्वामी मान लेते हैं क्योंकि उनके गुण तो पहले ही हम देख चुके हैं।

---

*कुइलन (केरल) से आकर इन्होंने बी० एस सी० किया और अब अंग्रेजी साहित्य में एम० ए० कर रहे हैं।

उनके चरणारविन्दों तक पहुंचने का मार्ग कठिन है क्योंकि इसके लिए अहं् का पूर्ण त्याग करना पड़ता है। उनकी शिक्षा में अहं् को नष्ट करने पर बहुत बल दिया जाता है और ऐसा वे चुपचाप करते हैं।

भगवद् अनुभूति की नौ विधियों में से अहं् को नष्ट करना एक है। अहं् का विनाश अनिवार्य है क्योंकि यह भक्ति-सरिता के प्रवाह में बाधा डालता है। कर्म का भी यही उद्देश्य है। अहं् कार्य का बदला चाहता है और फल की चिन्ता किए बिना कार्य करने से उहं् का विनाश होता है। अहं से द्वेष भी पैदा होता है और द्वेष ज्ञान का शत्रु है। ज्ञान प्राप्ति के लिए अहं् का नष्ट होना आवश्यक है।

स्वामी जी सामने हों तो अहं् का रूपान्तर हो जाता है। तब अहं् घमंड के लिए नहीं बल्कि आत्मज्ञान के लिए कार्यशील हो जाता है। व्यक्ति की इच्छा होने लगती है कि स्वामी जी उससे बात करें या किसी अन्य रूप में निकट आएं। उसका दुख सुख स्वामी जी की प्रतिक्रिया से संबन्धित हो जाता है। यह अहं्पूर्ण अनुभूति कि तुम दूसरों से भिन्न हो, प्रथक हो, स्वामी जी चुपचाप समाप्त कर देते हैं।

प्रथम बार स्वामी जी के सम्मुख आना एक अद्भुत अनुभव होता है। वे तुम्हारी ओर अविश्वसनीय हद तक ध्यान देते हैं। यदि तुम उनके पास एक पवित्र हृदय बालक के रूप में जाते हो तो वे तुमसे एक स्नेहपूर्ण माता की भांति व्यवहार करते हैं। एक शरारती बालक के रूप में जाने पर वे एक कठोर पिता की भाँति सिद्ध होते हैं और यदि उनसे कुछ सीखने के लिए जाओगे तो उनको अपना सच्चा गुरु पाओगे।

स्वामी जी हर क्षेत्र में कितने परिपूर्ण हैं यह देखकर आश्चर्य होता है। उनकी महान परिपूर्णता के सम्मुख तुम्हारा पूर्ण होने का प्रयास

निरर्थक लगता है। अपने को परिपूर्ण करने की श्रेष्ठ विधि यह है कि तुम स्वयं को उस अगाध सागर में विलीन कर लो। इसके लिए साधना का सहारा लेना पड़ता है।

यदि तुम एक बार स्वामी के दैवत्व में विश्वास कर लो तो फिर वे चुपचाप तुम्हारी रक्षा करने लगते हैं। यद्यपि वे तुम्हें एक खुली पुस्तक की भांति पढ़ सकते हैं परन्तु तुम अगली बार उनके सामने जाओगे तो ऐसा अनुभव करोगे मानो वे तुम को पहचानते ही नहीं। फिर भी उनके मौन में बहुत कुछ छिपा होता है। तुमको यह आभास हो जाता है कि वे तुमको भलीभाँति जानते हैं।

उनका मौन तुम्हारे लिए मौन नहीं है। वे तुम्हारे मन को अपनी वाणी सुनने योग्य बना देते हैं। उनके इशारे ही उनकी भाषा बन जाते हैं। तुम्हारी आशा के विरुद्ध वे तुम्हारे किसी भले कार्य की प्रशंसा नहीं करते। न मुस्कान बिखेरते हैं न एक शब्द मुंह से निकालते हैं। यह एक नया ही अनुभव होता है। उनका यह व्यवहार भी एक उद्देश्य के साथ होता है। इस प्रकार हम अपने कार्य के फल की इच्छा न करना सीख लेते हैं तथा स्वयं कार्य ही हमारे लिए आनंद का साधन बन जाता है।

उनके मौन से तुम्हारे मन में चिन्तन जागृत होता है और उससे कार्य का उद्देश्य समझ में आने लगता है। इस प्रकार मौन स्वामी जी तुम्हारे विचारों के स्वामी बनकर उन्हें आशा तथा परिपूर्णता की ओर प्रवाहित कर देते हैं।

स्वामी जी के मौन पर तुम अपना व्यक्तित्व भूलकर उनमें विलीन होने लगते हो। इसके पश्चात उनका एक शब्द, एक मुस्कान तथा एक

इशारा भी तुमको आनंद विमोर कर जाता है। वे आकाश की ओर देखकर मुस्करा देते हैं या वायु में अपना हाथ लहरा देते हैं और तुम पर इसका प्रभाव पड़ता है क्योंकि अब तुम हर ओर हो। वे कहीं किसी भिखारी को कुछ देने रुक जाते हैं, कहीं स्कूल के छात्रों को मिठाई बांटने लगते हैं तो कहीं यात्रा के बीच मज़दूरों से बातें करने लगते हैं। उनकी दया का पात्र उनसे पूर्ण रूप से अपरिचित हो सकता है परन्तु स्वामी जी उनको जानते हैं। तुमको प्रत्यक्ष रूप से कुछ नहीं मिलता परन्तु इस प्रकार के दयापूर्ण कार्यों से तुम अपने आप को कुछ ऊंचा उठता हुआ महसूस करने लगते हो। यदि तुम उनके कार्यों से आनंद की अनुभूति करने लगते हो तो बस यही प्रयाप्त है। इसका अर्थ है कि उन्हों ने तुमको अपनी दया-दृष्टि डालकर यह सिखला दिया है कि सारी सृष्टि एक है। तुम ने सबका दुख-सुख बाँटना सीख लिया है। द्वेष की वेदना तभी तक रहती है जब तक तुम अपने को दूसरों से अलग समझते रहते हो। इसका अर्थ यह भी है कि तुम स्वामी जी और स्वयं अपने आपकी सर्वव्यापकता को समझने लगे हो। अब तुम उनके हाथ की विद्युत शक्ति तथा उनकी दृष्टि के विस्तार को समझने लगे हो।

• • •

२०—एक मात्र भगवान--साईं

*शिव पंडित

भगवान कहाँ है ? वह क्या करता है ? क्या धर्म तथा भगवान भ्रांति मात्र है ? यदि भगवान है तो उसे कैसे प्राप्त किया जाए ?

ये प्रश्न युग-युग से मानव मन को व्याकुल किए हुए हैं। मनुष्य ने पूर्णता तथा आत्म-ज्ञान की खोज में जीवन के नए-नए पक्ष खोज लिए हैं परन्तु हर क्षेत्र से वह थक कर लौटा और अपने प्रश्नों के उत्तर न पा सका। ब्रह्माण्ड के रहस्यों को समझने के लिए उसने महासागरों को खंगाल डाला, ऊंचे पर्वतों को खोजा, अणु को तोड़ा, चन्द्रमा की मिट्टी धरती पर ले आया और दूर अन्तरिक्ष में पहुँच गया। प्रसन्नता की खोज में उसने कोई कसर न छोड़ी। परन्तु क्या लाभ हुआ ?

मनुष्य की सुख शान्ति की खोज भविष्य में जारी रहेगी। अतीत में भी वह इसके लिए युद्ध तथा क्रान्ति का कारण बनता रहा है। हर बार रक्तपात के पश्चात, मनुष्य के अन्दर छिपा पशु केवल इतनी अवधि के लिए शान्त बैठ सका जिसमें उसके घाव भर सकें। शान्ति के नाम पर हर युग में सरकार स्वयं अपनी युवा पीढ़ी को युग की अग्नि में धकेलती रही है। आज हम जिसको शान्ति समझते कहते हैं वह

---

*श्री शिव पंडित जी कॉमर्स के प्रवक्ता हैं और श्री सत्य साईं कालेज काडुगोडी में अध्यापन कार्य करते हैं।

केवल दो युद्धों के बीच की थकान भरी अवधि है। भयानक अस्त्रों से लैस, राजनीतिज्ञ अपनी क्रूरता पर मानवता, भाई-चारे तथा शान्ति के आवरण डालने का प्रयास करते रहते हैं। व्यक्तिगत रूप से मनुष्य अपराध और युद्ध से बचता है परन्तु राष्ट्रीय पैमाने पर यही बात प्रशंसनीय बन जाती है।

यदि हम आज के मनुष्य के कष्टों का कारण ढूँढें तो हमें पता चलेगा कि यह सब कुछ मनुष्य की आन्तरिक दुर्बलता के कारण है। जिस प्रकार एक सूखा पत्ता वायु के हर झोंके के साथ इधर-उधर भटकता रहता है इसी प्रकार अनुशासनरहित व्यक्तित्व की तीव्र वासनाओं में मनुष्य बहक रहा है। वह इस योग्य नहीं रह गया है कि जीवन की चुनौतियों का सामना कर सके। धर्म तथा भगवान को भूलकर मनुष्य की स्थिति ऐसी ही हो गई है जैसे जलयान तेज़ आँधी में भटक कर चट्टानों के बीच पहुँच जाए।

विश्वविद्यालयों से "शिक्षा" पाकर आज के युवक और "बुद्धिजीव" समझते हैं कि उनका दृष्टिकोण बड़ा तर्कपूर्ण तथा वैज्ञानिक है। वे केवल उन बातों में विश्वास करते हैं जो प्रत्यक्ष तथा स्पष्ट हों। वे समस्त ब्रह्मांड के रहस्यों को वैज्ञानिक यंत्रों तथा भौतिक सिद्धान्तों के सहारे समझना चाहते हैं। अपनी प्रयोगशालाओं और संस्थानों से निकलते ही ये लोग अपना सारा तर्क तथा विज्ञान भूल जाते हैं। प्रेम, दुख, सुख, घृणा, इर्ष्या आदि को परखनली में डालकर देखा समझा नहीं जा सकता परन्तु क्या कोई इनके होने से इनकार करेगा ? वह वैज्ञानिक तो भगवान के अस्तित्व से केवल इस लिए इनकार करता है क्योंकि वह भगवान को प्रयोगशाला में चीर-फाड़ नहीं सकता, बिल्कुल उस अन्धे के समान है जो सबसे यह कहता है कि सूर्य कहीं भी नहीं है।

जिस वस्तु का कोई नाम है उसका कहीं न कहीं अस्तित्व भी अवश्य होगा। प्रत्येक भाषा में प्रत्येक शब्द का एक विशेष अर्थ होता है और यह अर्थ किसी वस्तु या बात से जुड़ा होता है। जब भाषा में भगवान शब्द है तो भगवान कहीं न कहीं होगा भी। अज्ञान की बात अलग है। यदि कोई रसायनशास्त्र, भौतिक शास्त्र, इतिहास आदि से अनभिज्ञ है तो इसका अर्थ यह तो नहीं कि ये विषय हैं ही नहीं। रस्सी को साँप समझ लिया जाय तो रस्सी का अस्तित्व तो सिद्ध होता ही है। यदि रस्सी न होती तो उस पर साँप होने का भ्रम कैसे हो सकता था? भगवान के बारे में अज्ञान का अर्थ यह नहीं कि भगवान का अस्तित्व ही नहीं।

किसी वस्तु के बोध के लिए उस वस्तु तथा बोधक का होना अनिवार्य है। मनुष्य वृक्ष, फूल, धरती आकाश आदि का बोध इसी कारण प्राप्त करता है कि ये वस्तुएं उससे पृथक अस्तित्व रखती हैं। देखने वाला तथा देखी जाने वाली वस्तु एक नहीं हो सकते। आप कहेंगे कि शिशुकाल से मृत्यु तक एक ही मनुष्य में अनेकों परिवर्तन दृष्टि-गोचर होते हैं परन्तु परिवर्तन तो वास्तव में मनुष्य के शरीर से भिन्न तथा वाह्य होते हैं। मन के दुख तथा वेदना का आभास सुख तथा शान्ति के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है क्योंकि ये भावनाएँ एक दूसरे से भिन्न होती हैं। यदि किसी भावना का मन में विचरण ही न हो तो उसका आभास कैसे हो सकता है? अस्तित्व अनिवार्य है। भगवान का भी अस्तित्व है और वह विश्व के रंगमंच पर होने वाले सारे नाटक को देखता रहता है। मनुष्य भी बहुत कुछ देखता है और इसका कारण यह है कि भगवान उसके भीतर भी तो है।

मनुष्य गर्व करता है "यह मेरा घर है", "यह मेरी कार है", "यह मेरा धन है"। इस सबका अर्थ यह है कि मनुष्य स्वयं न घर है न

कार है। इन वस्तुओं का उससे संबंध अवश्य है। इसी प्रकार जब मनुष्य कहता है यह मेरा शरीर है, यह मेरी उँगली है, यह मेरा हृदय है तो इसका अर्थ भी यही होता है कि मनुष्य न शरीर है, न उँगली, न हृदय—हाँ इनका संबंध उससे अवश्य है। इसी प्रकार जब कोई यह कहता है "मेरे विचारों में उलझन हो रही है" तो वास्तव में वह यही कह रहा है कि उलझे विचार उससे संबंधित हैं।

अपनी सामान्य अवस्था में मनुष्य की चेतना के तीन पक्ष होते हैं—निद्रा, स्वप्न तथा जागृति की अवस्था। ये अवस्थाएँ अस्थायी होती हैं। एक अवस्था दूसरी अवस्था का स्थान लेती रहती है परन्तु मनुष्य के भीतर एक ऐसी भी चेतना है जो स्थायी रूप से हर क्षण बनी रहती है। दुर्भाग्यपूर्ण आज का बुद्धिजीवी इसमौलिकता को नहीं समझ सकता। सांसारिक तथा भौतिक पक्षों की खोज में पड़कर वह अपने भीतर झाँकना भूल गया है।

ब्रह्माण्ड का रहस्य अणु तथा परमाणु में निहित नहीं है। यह तो स्वयं मनुष्य के मन में निहित है। यदि वह रहस्य की खोज बाह्य संसार में करता रहेगा तो इस खोज का कभी अन्त नहीं होगा क्योंकि वह रहस्य को उस क्षेत्र में खोज रहा है जहाँ रहस्य नहीं है।

एक भ्रान्ति और भी है और वह यह कि मनुष्य अपनी बुद्धि के नन्हें से दीपक के सहारे सूर्य का रहस्य जानना चाहता है। यह प्रयास व्यर्थ है। शरीर तथा मन में उनकी अपनी कोई शक्ति नहीं होती। शक्ति का स्रोत तो उनके पीछे है। शरीर तथा मन तो यन्त्र समान हैं जो कोई उनके माध्यम से देखता है वह उनसे पृथक है। जिस प्रकार सूक्ष्मदर्शी यंत्र में झाँकने वाला यंत्र से पृथक होता है। इसी प्रकार बाह्य आँखों के सहारे हम वस्तुओं को देखकर भगवान का पता नहीं

लगा सकते । इसके लिए तो अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है ।

यह पुस्तक किसने बनाई ? पुस्तक बनाने वाले ने ! इसी प्रकार बर्तन कुम्हार ने बनाया। हर वह वस्तु जो हम अपने आस-पास देखते हैं किसी न किसी के द्वारा बनाई गई है। क्या इससे यह सिद्ध नहीं होता कि इस ब्रह्मांड की रचना भगवान ने की है ?

यदि किसी को सूर्य उज्जवल प्रतीत न हो तो इसमें सूर्य का नहीं बल्कि देखने वाले की दृष्टि का दोष है । दूध में मक्खन होता है परन्तु दिखाई नहीं देता । इसके लिए दूध को बिलोना पड़ता है। इसी प्रकार यदि कोई भगवान के दर्शन करना चाहे तो उसे अपने मन को बिलोना पड़ेगा और उसमें से अशुद्ध अंश निकालने पड़ेंगे ।

वेदों में जिस ब्रह्म की चर्चा है वही भक्तों के लिए भगवान है । वे दोनों पृथक अस्तित्व नहीं बल्कि एक ही सत्य के दो पक्ष हैं । चाहे वाष्प हो या हिम, हैं तो एक ही पदार्थ ! कभी-कभी भगवान अपने भटके हुए बालकों को सीधा मार्ग दिखाने के लिए शरीर रूप धारण कर लेते हैं परन्तु वे होते तो भगवान ही हैं । नगर में दंगा होने पर पहले पुलिस के सिपाही आते हैं परन्तु स्थिति बिगड़ जाए तो आई० जी० को स्वयं आना पड़ता है । मानव उद्धार के लिए यों तो आध्यात्मिक ऊँचाई पर पहुंचे बहुत से व्यक्ति सदा ही संसार में प्रस्तुत रहते हैं परन्तु कभी-कभी भगवान को स्वय भी आना पड़ता है । क्या कृष्ण जी के समय बहुत से महात्मा नहीं थे परन्तु क्या वे वह कार्य कर सके जो कृष्ण जी ने आकर किया ?

सतयुग में जो भगवान इस धरती पर पधारे थे वही आज कलयुग में भी मानव उद्धार के लिए अवतरित हुए हैं । कृष्ण जी ने अपने समय

के अनुसार चमत्कारी कार्य किए, सत्य साईं बाबा आजकी परिस्थितियों के अनुसार चमत्कार दिखा रहे हैं। उनकी तुलना दूसरे महात्माओं से करना व्यर्थ है। उनकी बुद्धि पर खेद है जो भगवान की आकृति को धुंधलाना चाहते हैं। वास्तव में वे स्वयं को ही नहीं जानते। कोई बड़े पद पर हो सकता है, विद्वान हो सकता है, अपने भाषणों में उपनिषदों के हवाले दे सकता है परन्तु इससे भगवान को समझने में तो सहायता नहीं मिलती।

कुछ लोग प्रश्न करते हैं कि यदि साईं भगवान हैं तो युद्ध, रोग तथा निर्धनता का अन्त क्यों नहीं कर देते। ये तो मनुष्य के अपने कर्मों के फल हैं जो समय आने पर अनिवार्य परिणाम हैं। कितना हास्यपद है घृणा का बीज बोकर प्रेमतरु की आशा करना ? फिर भी भगवान इन बातों को रोक सकते हैं यदि लोग सच्चे दिल से उनमें विश्वास रखें। क्या महाभारत का युद्ध स्वयं कृष्ण जी ने आरम्भ नहीं किया था ? क्या उनके समय में रोग तथा निर्धनता नहीं थी ? भगवान अपने ढंग से अपनी योजना पूरी करता है। मनुष्य भगवान की बातों को समझ ही नहीं सकता।

भगवान एक है और वह सर्वव्यापी है। श्री सत्य साईं ही वह भगवान हैं। यदि तुम उनमें आस्था रखोगे तो उनको सदा अपने बाहर, भीतर तथा आसपास पाओगे।



२१—स्वामी+भक्त=महाकृति

*कमल साहनी

"क्या तुम मुझसे सहानुभूति रखते हो ?" जब मैं प्रथम बार उनसे मिला तो स्वामी जी ने पूछा।

सहानुभूति ? क्या अर्थ था इसका ? मैं इतना छोटा था कि इसका अर्थ नहीं समझ सकता था। उपेक्षा भरे संसार में रहने वाला मैं भला सहानुभूति का क्या अर्थ समझता परन्तु मैं समझता था कि सहानुभूति एक सदगुण है इसलिए अपना अच्छा प्रभाव डालने के विचार से मैंने "हाँ" कह दिया।

"कितनी ?"

"इतनी" मैंने दोनों हाथों को कुछ इंच फैलाते हुए उत्तर दिया।

मुट्ठीभर सूखे चावल, थोड़े से झूठे बेर और कुछ इंच सहानुभूति, भगवान को बस यही मिलता है......

घृणा तथा उदासीनता को मैं समझता हूँ क्योंकि मैं इन्हीं के बीच रहता हूँ और मैंने भी उदासीनता की कला सीख ली है। स्वामी जी

---

* बम्बई से आए हुए श्री साहनी एक कुशाग्र बुद्धि छात्र हैं। वे अपनी परीक्षाओं में दस सर्वश्रेष्ठ छात्रों में रहे। वे बड़े अच्छे वक्ता हैं और इनका भाषण बड़ा विचारपूर्ण तथा मनोरंजक होता है। वे अब बंगलौर विश्वविद्यालय से एम०कॉम० कर रहे हैं।

से बातचीत के पश्चात मुझे आभास हुआ कि मुझे सहानुभूति की खोज करनी चाहिए। इस आभास के साथ मुझे ऐसा लगा कि मानो मेरे हृदय में एक जलता हुआ स्थान है जिसकी जलन किसी का प्रेम तथा प्रशन्सा पाकर ही शान्त हो सकती है। मुझे यह भी आभास हुआ कि मेरी इच्छा की पूर्ति दैवी पक्ष से हो सकती है।

जीहाँ सहानुभूति का अर्थ है दूसरों के एकान्त तथा दुख-सुख को बाँट लेना। यदि इसी का नाम सहानुभूति है तो एक तुच्छ मनुष्य होते हुए ब्रह्माण्ड के स्वामी के प्रति क्या सहानुभूति रख सकता हूँ? उनको न कोई दुख है, न उन्हें एकान्त सताता है और न ही उनको किसी मित्र की आवश्यकता है। तब भगवान ने मुझ से यह प्रश्न क्यों पूछा? वे भलीभाँति जानते हैं कि नाशवान मनुष्य सहानुभूति नहीं रख सकता। विवशता यह भावना समय के साथ तीव्र होती गई। मुझे पता लग गया कि मेरे जलते मन पर ईसा तथा कृष्ण की भांति स्वामी जी ही मरहम रख सकते हैं। उपनिषदों में भगवान तक सीधा पहुँचने की बात की गई है। मेरे सामने इसका प्रत्यक्ष प्रमाण था।

और फिर मेरी बारी आई कि मैं वही प्रश्न उनसे पूछूं "भगवान! क्या आपको मुझसे सहानुभूति है?"

"हाँ मेरे बच्चे।" उन्होंने कहा जो सहानुभूति का वास्तविक अर्थ जानते हैं।

"कितनी?" और उन्होंने हाथ फैलाकर क्षितिज तथा नक्षत्रों को अपने प्रेम घेरे में ले लिया। वे मेरी त्रुटियाँ तथा दोष भूल गए और इस प्रकार उन्होंने मुझे अपने से प्रेम करना सिखा दिया।

उनकी सहानुभूति का पहला प्रदर्शन तब हुआ जब मैं जीवन के मरुस्थल में धंसता जा रहा था। जीने के लिए रक्त में गर्मी उत्पन्न

कर देने वाला आत्मविश्वास अनिवार्य है, विशेषत: उस दशा में जब मनुष्य जीवन में असफलता के अतिरिक्त कुछ शेष न रह गया हो। कभी-कभी हम ऐसी विषम परिस्थिति में फंस जाते हैं कि निराश होकर अपने भाग्य को कोसने लगते हैं। अपने को एक पौधा मान लो जिसकी जड़ें जीवन देने वाले पानी की खोज में धरती में नीचे इधर-उधर फैली हों परन्तु उन्हें सूखी चट्टानों के अतिरिक्त और कुछ न मिला हो। पौधा जीवन की आशा छोड़कर मुरझा जाता है और तब वर्षा की अमृत भरी बूँदें आएँ और जल थल करके तुमको नया जीवन प्रदान कर दें।

मेरे साथ ऐसा ही हुआ। मैं साईं के दिखाए मार्ग पर चल न सका और जीवन मेरे लिए विवशता का बोझ बनकर रह गया और तब स्वामी जी के शब्द वर्षा बनकर आए "यदि हमारा प्रत्येक प्रयास असफल हो जाए, यदि हमारा शरीर काँटों से छिदकर रक्त बहाने लगे तब भी हमें साहस को नहीं खोना चाहिए। हमें अपने भगवान की रस्सी ऐसे दुख में पकड़े रहना चाहिए।" स्वामी जी के ये लिखित शब्द मुझ तक ठीक समय पर पहुँचे और मेरे अन्दर प्रसन्नतापूर्ण जीने की आशा फिर से जागृत हो गई। मेरे अन्दर एक ऐसा साहस तथा ऐसी शक्ति भर गई कि मैं अपने आप को एक नया व्यक्ति महसूस करने लगा।

भगवान साईं प्राय कहते हैं कि सफल जीवन बिताने के लिए प्रथम पग विश्वास, आत्मबल तथा भगवान में आस्था रखना है। परन्तु उन्नति पथ पर अग्रसर रहने के लिए मात्र विश्वास ही प्रयाप्त नहीं है। मनुष्य को आत्मविश्वास की सीमा पर रुकना नहीं चाहिए। उसका दूसरा पग भगवान के शब्दों में आत्म संतोष होना चाहिए परन्तु सन्तोष संसार में है कहाँ? अधिक और अधिक पाने की इच्छा बनी

ही रहती है। संतोष की खोज में यदि मुझे संतोष कहीं मिला तो वे स्थान था स्वामी जी के नयन, जिनके एक इशारे से भक्तों का हृदय संतोष तथा प्रेम से भर जाता है। यह माना जाता है कि मनुष्य को संतोष उसी दशा में मिलता है जबकि उसको इतना मिल चुका हो कि उसके हाथ भरे हों परन्तु स्वामी जी का संतोष इससे भिन्न है। वे तभी संतोष की अनुभूति करते हैं जब उनके हाथों से आनंद-गंगा बह-कर दूसरों को तृप्त करती है। दूसरों को कुछ देकर वे और भी संतुष्ट होते हैं। अजीब बात है न ? और इसके बावजूद उनका प्याला सदा भरा रहता है।

मैं उनका एक तुच्छ भक्त हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि देने वाले का प्रेम ही मूल्यवान वस्तु है। ज्यादा गहराई से विशलेषण करें तो ज्ञात होगा कि इसका अर्थ है वाह्य आवश्यकताओं से मुंह मोड़ कर अपने अन्तर्तम को पहचानना। संतोष केवल मनुष्य के भीतर है। यह मनुष्य के भले के लिए ही है कि वह अपने अन्दर झाँक कर कुछ देकर संतुष्ट होना सीखे।

सफल जीवन के लिए अगला तथा सबसे कठिन चरण है आत्म-त्याग, अपने को तुच्छ समझकर ही मनुष्य भगवान के चरणों में कोई भेंट चढ़ा सकता है। यही कठिन है। मनुष्य कैसे वह वस्तु त्याग दे जो उसने उचित या अनुचित साधनों से प्राप्त की है और जिसको वह अपनी वस्तु समझता है ? अपना शीश दूसरों के लिए कटाने की बात बकवास है। हम ऐसा ही सोचते हैं और जीवन भर त्याग से अनभिज्ञ रहते हैं। हम जीवन भर दूसरों से ही त्याग की आशा करते रहते हैं और जब हमारी बारी आती है तो अधिक से अधिक हम पुजारी को बुलाकर अपनी ओर से कुछ भेंट भगवान को चढ़ा देते हैं।

स्वामी जी के साथ रहकर आरंभ में मैं भी ऐसा ही सोचता था कि त्याग की बात बकवास है परन्तु उनके संग कुछ वर्ष रहकर मेरे विचार पूर्णत: बदल गए। मैंने भली भाँति देख लिया है कि उनका जीवन पूर्ण त्याग का आदर्श है। सवेरे से शाम तक वे अपने हरेक कार्य से दूसरों को सुख बाँटते रहते हैं। कभी-कभी मुझे बड़ा अजीब-सा लगता है कि एक मनुष्य केवल उन लोगों के लिए ही जिये जो उसको एक इंच सहानुभूति देने के अतिरिक्त उसके लिए और कुछ भी न कर सकें।

प्रसन्नती निलायम नामक सुन्दर भवन में रहकर स्वामी जी अपने लिए बहुत थोड़ा लेते हैं। शेष भक्तों के लिए होता है। उनका दृढ़ विश्वास है कि संतोष त्याग में ही निहित है।

मैं कहाँ तक इस बात को समझ पाया हूँ ?

मेरा पहला विचार है कि मैं पूर्ण भगवान का एक छोटा अंश हूँ। अंश यद्यपि स्वयं में भी पूर्ण होता है परन्तु पूर्ण से पृथक होकर अपूर्ण ही रहता है। स्वामी जी मुझ जैसे अंशों को अपने अन्दर विलीन करके पूर्ण बनाते रहते हैं। उन्होंने मुझको भी विश्वास, शक्ति तथा त्याग की निधि प्रदान की है। अन्य कृत्तियों की भांति मैं भी उनका ही प्रतिबिम्ब हूँ परन्तु मैं उनकी कृति हूँ अतः महाकृत्ति हूँ।

सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्र सब उनकी कृत्तियाँ हैं और उन्हीं के बीच मैं भी हूँ। यहाँ मुझे भगवान का एक संदेश याद आ रहा है।

"बच्चो ! तुम पक्षी हो मैं पंख। तुम पग हो मैं पथ। तुम दृष्टि हो मैं आकार हूँ। तुम्हारे साथ संसार है, मेरे साथ स्वर्ग। इस प्रकार तुम स्वतंत्र भी हैं और परतन्त्र भी। इसी प्रकार

हमारा आरंभ होता है और इसी प्रकार अन्त । तुम मुझ में हो, मैं तुम में हूँ ।"

प्रत्यक्षरूप से यह संदेश कविता की महाकृति है परन्तु गहराई से देखो तो इसमें सत्य का भंडार छिपा है । एक तुच्छ मनुष्य को एक महाकृति बना देना भगवान का ही कार्य है । स्वामी के बिना भक्त टूट कर बिखर जायेगा, भक्त एक शून्य की भाँति है जो स्वामी की ओर से प्रदान किए गए अंक से मिलकर ही कुछ महत्त्वपूर्ण बनता है ।

यहाँ पहुँचकर कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं—यदि ऐसा है तो मनुष्य के व्यक्तित्व से क्या लाभ ? क्या हमको अपने हर प्रयास में भगवान का ही सहारा लेना पड़ेगा

मनुष्य अपने आप एक सीमा तक ही पहुँच सकता है । मूलरूप से वह एक अंश मात्र है । पूर्ण होने के लिए स्वामी के दक्ष हाथों की ही आवश्यकता है । ये भगवान ही हैं जो अंशों को चुनकर महाकृत्तियाँ बना देते हैं ।

मैं अपने आपको महाकृति कहता हूँ तो कोई आपत्ति कर सकता है कि मैं अहंकार की भावना में ग्रस्त हूँ । ऐसा नहीं है । यह तो मेरे आत्म ज्ञान का परिणाम है । मुझे भगवान के कुछ शब्द याद आ रहे हैं—"जब मैं तुम से प्रेम करता हूँ तो अपने आप से ही प्रेम करता हूँ···प्यारे बच्चो तुम मेरे ही अंश हो···" इस प्रकार स्वामी की लीला में मैं एक महाकृत्ति हूँ और मैं ही नहीं तुम भी, ये समस्त व्यक्ति भी, ये फूल और तारे आदि भी उनकी महाकृत्तियाँ हैं ।

वेदों में कहा गया है—

मैंने अपने को भगवान तो नहीं समझा है परन्तु स्वामी जी ने मुझ में भगवान के रास्ते पर चलने की इच्छा अवश्य दीपित कर दी है। मैं पूर्णता प्राप्त करने तथा उनमें बिलीन हो जाने का प्रयास करता हूँ। कभी-कभी मुझे इस प्रयास में असफलता का मुंह भी देखना पड़ा क्योंकि भगवान ने मुझे कई बार अस्वीकार किया परन्तु उनकी अस्वीकृति केवल इस उद्देश्य से थी कि मैं स्वयं को और अधिक योग्य बना सकूँ। उनकी अस्वीकृति भी सहानुभूति का प्रतीक होती है और यही उनकी दक्षता का प्रमाण है।

भगवान ने अपनी सहानुभूति को इस लिए सीमित कर रखा है ताकि 'कारण तथा परिणाम' का सिद्धान्त संसार में चलता रहे। भगवान को इतना दुर्बल भी तो नहीं होना चाहिए कि हम अपराध करते रहें और वे हर बार हमको स्वीकार करते रहें। क्या वे इतने दुर्बल हो जाएं कि पापी मनुष्यों के पापों से समझौता कर लें? फिर भी उनकी अपने भक्त के प्रति उपेक्षा एक न एक दिन समाप्त हो जाती है।

भगवान ने मुझे विश्वास, संतोष, त्याग तथा आत्मज्ञान की निधि प्रदान की है और मेरी यही प्रार्थना है कि जब मेरे जीवन-पुष्प की पंखुड़ियाँ मुरझाकर गिरने लगें तो उनके चरणारबिन्दों में ही गिरें। वे पखुड़ियाँ सूखी तथा टूटी हुई होंगी परन्तु होंगी तो उसी पुष्प की जिसको तुमने मुस्कान प्रदान की थी।

• • •

२२–मुझे भी पथ मिला

*आर० रामाकृष्णा

एक दिन मैं समुद्र के शीतल जल में, सांसारिक चिन्ताओं से दूर, क्रीडामग्न था कि नारियल के एक वृक्ष की छाया की ओर मेरा ध्यान गया। वृक्ष की छाया में लटकते हुए काले नारियल भी दिखाई दे रहे थे। मैं तैरता हुआ उनकी ओर गया और झपट कर एक नारियल हाथों में ले लिया—परन्तु यह सब तो कल्पना थी। वास्तविक नारियल तो तट पर खड़े ऊंचे-ऊंचे पेड़ों में लगे मेरी पहुंच से बहुत दूर थे। हवा में झूलते नारियल मेरा मज़ाक़ उड़ाते हुए दिखाई दिए। मैं पानी से बाहर आकर नारियल के वृक्ष पर चढ़ने लगा। वहां से मैंने देखा कि पानी में मेरा प्रतिबिम्ब भी वृक्ष पर चढ़ता जा रहा था। जब मैं नारियल तक पहुंच गया तो मेरा प्रतिबिम्ब भी नारियल तक पहुंच गया। क्या अद्भुत अनुभूति थी! वास्तविकता तथा मिथ्या के बीच के अन्तर का यह मेरा पहला अनुभव था। अभी तक तो मैं यही समझता आया था कि भोजन, वस्त्र, घर तथा पैसा मनुष्य की परम आवश्यकताएं हैं परन्तु यह तो वृक्ष की छाया की भांति था। प्यास बुझाने वाला नारियल तो असली वृक्ष पर लगा हुआ था।

---

*बी० एस सी० के पश्चात् रामाकृष्णा जी बंगलौर विश्वविद्यालय से एल एल० बी० कर रहे हैं। वे एक अच्छे तथा चिन्तनशील लेखक हैं। वे आन्ध्र निवासी हैं।

भौतिक युग में जीने वाले मनुष्य को सबसे बड़ा खतरा यह है कि वह अपने अन्दर पाए जाने वाले शीतल स्रोत को भूल जाता है और केवल यही स्रोत ऐसा है जो उसकी चिर पिपासा को शान्त कर सकता है। क्या हमारी शिक्षा का उद्देश्य हमको वास्तविक वृक्ष पर चढ़ना सिखाना नहीं होना चाहिए ? आज मैं जान चुका हूँ कि भले बुरे को अलग अलग समझने का नाम ही शिक्षा है। यह कैसे हुआ ? कैसे मेरा मस्तिष्क इतना उन्नत हुआ कि नारियल के वृक्ष तथा उसकी छाया का अन्तर समझने लगा ?

मेरी कहानी मेरे बचपन से आरंभ होती है जबकि एक दिन मैं टहल रहा था। रास्ता काँटों भरा था और मेरा एक मित्र मेरे आगे-आगे चल रहा था। सहसा वह चीख पड़ा। उसके बायें पैर में काँटा चुभ गया था और वह पैर उठाए उसे निकालने के लिए व्याकुल था। मैं सोचने लगा जब पैर में पीड़ा होती है तो हाथों को इसका ज्ञान किस प्रकार हो जाता है। एक और घटना मुझे याद आ रही है। एक बार एक अध्यापक ने एक लड़के को मारा था तो उसकी आँखों में आँसू भर आए थे। तब भी मैंने यही सोचा था कि हथेली की चोट का आभास आँखों को कैसे होगया। कुछ न कुछ बात है अवश्य कि सारे शरीर में पीड़ा की अनुभूति जाग उठती है। परन्तु वह बात है क्या ? क्या एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच भी अनुभूति का यह संबंध होता है ? नहीं। यदि ऐसा होता तो अपने मित्र तथा साथी की पीड़ा का आभास मुझे भी होता। मैं न तो चिल्लाया न ही मेरी आँखों में आँसू आए। मैंने निष्कर्ष निकाल लिया कि एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य से इस प्रकार का कोई संबंध नहीं है और अपने ही ढंग से जीवन बिताता रहा। मुझे न दूसरों की चिन्ता थी न ही उनके दुख-सुख का आभास।

मैं अपने को दूसरों से अच्छा भी समझता था। मैं पूरा-पूरा प्रयास करता था कि कुछ न कुछ नयापन दिखाऊँ। मैं एक ग़लत रास्ते पर चल पड़ा और शीघ्र ही उस रास्ते पर कठिनाइयाँ आने लगीं। घने जंगल में सीधा चलना असंभव होता है परन्तु जीवन के घने वन में मैं सीधा चलने का प्रयत्न करता रहा। परिणाम स्वरूप मेरे हाथ पाँव घायल हो गए और मुझे रुक जाना पड़ा। आगे बढ़ने से भय लगने लगा। मैं उस मार्ग से हटकर सामान्य मार्ग पर चल पड़ा। इस नए मार्ग पर मेरी कर्मेन्द्रियाँ तो सुरक्षित रहीं परन्तु ज्ञानेन्द्रियाँ शिथिल होने लगीं। उस मार्ग के आस-पास बड़े सुन्दर मृग विचर रहे थे। मेरी इच्छा थी कि मैं उनको पकड़ूँ परन्तु उनके पीछे भाग कर काँटों में फँसने का भय था। तब मुझे पता लगा कि उस मार्ग पर भी भय है जिसपर सभी चलते हैं। तब मैं निर्भय होकर किस प्रकार जियूँ? मुझे इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिला और जीवन मुझे निरर्थक लगने लगा। प्रकृति में भी मुझे सुन्दरता दिखाई देनी बन्द हो गई। ऐसी दशा में जीवन का खेल जारी रखना बड़ा कठिन हो गया, जीवन का गीत गाना मुश्किल हो गया। जीवन अन्धकारमय लगने लगा। भय रहित मार्ग कौन सा है, कहाँ है? मैं स्वयं से प्रश्न करता परन्तु मेरा अस्त-व्यस्त मन कोई उत्तर नहीं सोच पाता था।

इस प्रकार श्री सत्य साईं महाविद्यालय में आने से पूर्व, मैं मूर्खता-पूर्ण जीवन व्यतीत करता रहा। यहाँ आकर मुझे ऐसे लगा मानो मैं एक सुन्दर उद्यान में हूँ। पहले मैं काँटेदार झाड़ी पर पड़े सफ़ेद कपड़े की भाँति था—खेंचो तो फट जाए, पड़ा रहने दो तो मैला हो कर गल सड़ जाए। किसने मुझे उस काँटों भरी झाड़ी से सुरक्षित उठाकर वृन्दावन के उद्यान में ला रखा?

कितने सुन्दर हैं वे! उनके दर्शन हुए तो मेरा मन पुकार उठा।

उन्होंने मेरी ओर देखा और उनकी तेजपूर्ण दृष्टि मेरे मन में उतर गई। मैं आश्चर्यचकित सा होगया—मेरे मस्तिष्क से सारे विचार भाप की भाँति उड़ गए। इस प्रकार उन्होंने मुझे देखना सिखाया। एक बार उन्होंने मुझसे बात की और मेरा मन अपने आप बोल उठा। इस प्रकार उन्होंने मुझे बोलना सिखाया मैंने उनके चरण छुए और मुझे लगा मेरा जन्म सफल हो गया। इस प्रकार मुझे विचार रहित होकर देखना, हृदय की भाषा बोलना और पवित्र होना उन्होंने सिखा दिया और मुझे विश्वास होगया कि मुझे काँटों भरे वन से इस उद्यान में लाने वाले वही थे। कृतज्ञ होकर मैंने उन्हें कुछ भेंट करना चाहा तो उन्होंने कहा, "मुझे पता है तुम मेरे लिए सुन्दर पुष्प तथा अनमोल रत्न लाए हो परन्तु मेरे बेटे तुम क्या जानते हो कि मुझे तो बस तुम्हारा हृदय चाहिए।"

हृदय! वे मेरा हृदय चाहते थे और मेरा हृदय उनकी ओर खिंचने लगा। मेरा विचार था कि दो व्यक्तियों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं होता परन्तु उन्होंने सिद्ध कर दिया कि हृदय का संबंध हृदय से होता है। उन्होंने मुझे नया मार्ग दिखाया और मुझे अपने भीतर परमात्मा के होने का आभास होने लगा। हृदय में परमात्मा के होने की अनुभूति आजके भौतिक संसार में शान्ति स्थापित करने के लिए अति आवश्यक है क्योंकि शान्ति की स्थापना केवल प्रेम से ही हो सकती है। आज के मनुष्य ने अपने मन में कुछ विचार बसा लिए हैं। उन्होंने खोज बीन किए बिना ही यह धारणा बना ली है कि सत्य क्रियात्मक नहीं है। यही कारण है कि वह प्रायः सत्य को पूर्ण रूप से समझ नहीं पाता। यदि हम अपने मन से ये विचार निकाल फेंकें तो मन के प्याले को प्रेम से भरा जा सकता है। हमारे हृदय को जितने प्रेम-जल की आवश्यकता है उसे देने के लिए साईं हमारे बीच हैं। हम

उन्हीं के अंश हैं। तब क्या एक व्यक्ति की चोट पर दूसरे की आँख में आँसू नहीं आ सकते ? उनके और मेरे बीच कुछ न कुछ अवश्य है। यह 'कुछ' प्रेम है जो अनेकता में एकता उत्पन्न कर देता है। साईं हम को प्रेम करना सिखाते हैं परन्तु वे हमसे क्यों प्रेम करते हैं ? उनके प्रेम का न कोई कारण होता है न समय। वे तो सबसे प्रेम करते हैं क्योंकि वे प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं को देखते हैं। मुझे भी उन्होंने यह अनभूति प्रदान करदी कि प्रेम अमर है। यह कभी नहीं बदलता, कभी नहीं मरता। प्रेम रहित तथा प्रेम सहित हृदय में इतना ही अन्तर है जितना एक बुझे हुए तथा एक दीपित दिये में।

भगवान साईं एक जलता हुआ दीपक हैं। वे हमको भी दीपित कर देते हैं। वे मेरी भांति हज़ारों दीप जलाते हैं परन्तु उनका अपना प्रकाश कम नहीं हो सकता। वे प्रेम का प्रकाश प्रदान करते हैं जो सदा फैलता ही जाता है। उनकी हर कृत्ति सुन्दर है। एक माता की भाँति वे अपने बच्चों को आनंद प्रदान करते हैं। मेरे अन्दर जो आत्मा कभी भयावह थी वह अब सुन्दर हो गई है। मुझे भी प्रेम का मार्ग मिल गया है जो अति सुन्दर है। इस मार्ग के दोनों ओर सुन्दर वृक्ष हैं जिनका पत्ता-पत्ता सुन्दर है। यहाँ बर्फ़ से ढके पहाड़ों, पवित्र वर्षा तथा फूलों की सुन्दरता है। वृन्दावन में लाल वस्त्र पहने साईं बाबा की आकृति सुन्दरता साकार है। साईं प्रेम हैं और प्रेम साईं।

भाइयों और बहनो !
आत्मा के वस्त्र पहनो।
स्वामी जी तुम्हारी त्रुटियाँ दूर करने के लिए
तुम्हें पूर्ण बनाने के लिए प्रस्तुत हैं।
आनंद मग्न होकर उनकी गाथा गाओ।
जब तुम्हारे मन में सूक्ष्मता तथा कोमलता जागृत हो जाए

अपने को अर्पित करने यहाँ चले आओ ।
वे तुमको तुम्हारे जन्म से पहले जानते हैं
उनके दर्शन करके स्वयं को उनमें पाओ ।

उनकी अनुभूति का एक मात्र रास्ता है अनुभव ! यदि तुमने प्रयोगशाला की भाँति इस क्षेत्र में भी परीक्षण आरंभ कर दिया तो तुम साईं को न तो समझ सकोगे और नही उनके चरणों का आनंद प्राप्त कर सकोगे । नदी ढलान की ओर बहती है और ढलान की ओर व्यक्ति का फिसल जाना भी सुगम है । सत्य की खोज में बहुत से व्यक्ति फिसल कर बहाव में बहने लगते हैं और उनको आभास भी नहीं होता कि वे सत्य-स्रोत से दूर होते जा रहे हैं । यदि कोई बहाव के विरुद्ध एक फुट भी तैरता है तो इसका अर्थ यह होता है कि वह स्रोत (लक्ष्य) से एक फुट निकट हो गया । प्रवाह के विरुद्ध चलना ही सत्य मार्ग है । भगवान ने यह मार्ग हमको दिखा दिया है । उनका कहना है "मेरा जीवन मेरा संदेश है ।" हमको तो बस उनके पदचिह्नों पर चलना है । कई बार मैं इस मार्ग पर चलते हुए फिसलकर गिरा और उनसे दूर हो गया । ऐसी दशा में मैं पश्चाताप से चिल्लाने लगा परन्तु वे अपनी दया की वर्षा मुझपर करते रहे और मुड़ मुड़ कर कहते रहे :—"भगवान को निहारो । भला करो और भले बनो ।" यही सच्चा मार्ग है । मैं न तो बुद्धिमान हूँ और न ही कोई योगी परन्तु मैंने यह सच्चा मार्ग पा लिया है ।

• • •

२३–साईं प्रयोगशाला

*के० चन्द्रशेखर

एक गाँव के निद्रा भरे वातावरण में दूर प्रात: की सुनहली सुन्दरता बिखर रही थी। जाड़ों की शीतल पवन में हम उस गाँव की गलियों से भजन गाते गुज़र रहे थे। अपना यह नगर संकीर्त समाप्त करके हम स्वामी जी के दर्शन हेतु वृन्दावन लौट आए। हम आनंद विभोर थे। सामने से नारंगी वस्त्र धारण किये स्वामी जी धीरे-धीरे प्रकट हुए। भजन की लै पर उनके दायें हाथ की उँगलिया थिरक रही थीं। सहसा उन्हों ने आरती आरंभ करने के लिए अपने सिर से इशारा किया। आरती के पश्चात सारे वातावरण में शान्ति फैल गई। उन्होंने मुस्करा कर इधर-उधर देखा और अपना हाथ उठाकर सबको प्रेमपूर्वक आशीर्वाद दिया।

भगवान भीतर चले गए और हम भी लौट आए। मैंने रास्ते में एक व्यक्ति को देखा जो बड़ी सुखपूर्ण मुद्रा ने आँखें बन्द किए कह रहा था "तुम्हारी कृपा।" मैंने उसको देखा और समझ गया कि वह अभी तक भगवद् दर्शन का आनंद पान कर रहा था।

आगे मुझे बीच रास्ते में खड़े दो युवक मिले जो कह रहे थे "आज

---

*चन्द्रशेखर का संबंध दक्षिणी कनाटा (कर्नाटक) से है। वृन्दावन से बी० एस सी० करने के पश्चात वे मोटर के पुर्जे बनाने का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं।

रविवार है। चलो सिनेमा देखें और अपने घर चलें।" वे अपने कपड़ों तथा फ़ैशन के बारे में भी बात चीत कर रहे थे। मैंने सोचा इन्होंने भी अभी-अभी भगवान के दर्शन किए है परन्तु इन्हें आनंद की कोई अनुभूति नहीं है।

यहाँ हम दो भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यक्ति देख सकते हैं। पहली प्रकार के व्यक्ति ने केवल भगवान के शारीरिक रूप को ही नहीं देखा बल्कि उनकी वास्तविकता से आत्मिक आनंद भी लिया। दूसरी प्रकार के व्यक्ति केवल उनका वाह्यरूप ही देखकर रह गए। केवल भगवान का मानवीय स्वरूप देखना लाभकारी नहीं है। हमको तो उनके अस्तित्व को अपने भीतर अनुभव करके आनंद प्राप्त करना चाहिए। इसके लिए आन्तरिक दृष्टि चाहिए किसी दूरबीन की आवश्यकता नहीं। नाही यह कोई ऐसी कठिन बात है कि मनुष्य न कर सके।

सत्य साईं द्वारा स्थापित की गईं सस्थांएं इस क्षेत्र में हमारी सहायता करती हैं। वे हमें सांसारिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करती हैं। सांसारिक शिक्षा अनिवार्य तो है हरन्तु आध्यात्मिक शिक्षा के बिना व्यर्थ है।

श्री सत्य साई महाविद्यालय तथा छात्रावास मनुष्य को परिपूर्णता के सांचों में ढ़ालते हैं। ये ऐसे कारखाने हैं जहाँ लोहे का एक तुच्छ टुकड़ा कोई काम की वस्तु बन जाता है। लोहे के कारखाने में लोहे को कठोरता के साथ कूटा पीटा जाता है। साई मनुष्य को बदलने का यह कार्य अपने ढंग से करते हैं। वे मनुष्य को अपने निकट बुलाकर उसको अपने प्रेम-अमृत का रसपान करा देते हैं। कारखाने में लोहे के टुकड़े को कोई आकार दिया जाता है। भगवान साईं भी अपनी सलाह, शिक्षा तथा विवेक बुद्धि से व्यक्ति का कायाकल्प कर देते हैं।

वे इस प्रक्रिया में उस की हर गतिविधि पर कड़ी दृष्टि रखते हैं और जहाँ आवश्यकता होती है सुधार कर देते हैं।

लोहे को शक्तिशाली बनाने के लिए भिन्न-भिन्न तापमान में रखा जाता है। भगवान साईं भी तुमको यहीं नहीं छोड़ देते। तुम्हें परिपूर्ण करने के लिए वे भी भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में परीक्षा करते हैं।

अन्त में कारखाने में लोहे से बनी वस्तु के दाग़ धब्बे दूर करने के लिए उनको रगड़ा चमकाया जाता है। भगवान भी अपनी गोद में तुम को बिठाकर तुमको निखारते संवारते हैं।

इस प्रकार तुम साईं मशीन के एक अंग बन जाते हो। एक साधारण व्यक्ति को एक असाधारण व्यक्ति बनाने के लिए साईं यह प्रक्रिया अपनाते हैं। कुछ व्यक्तियों को वे विशेष रूप से परखते हैं और फिर उनसे अपने कार्य में सहायता लेने लगते हैं। इस प्रकार वे मनुष्य को स्वयं उसके तथा राष्ट्र के लिए लाभकारी बना देते हैं।

युवको ! संसार में टूटने बिखरने की बजाए साईं की प्रयोग शाला में आकर कुछ काम की वस्तु बनो। हम सब साई की महान मशीन के पेच पुर्ज़े हैं और साईं स्वयं है इस मशीन के दैवी चालक !

• • •

२४–क्या मैं सौभाग्यशाली नहीं हूँ ?

*आर० रविशंकर

एक बालक के लिए उसके आस पास का संसार बड़ा रोचक होता है। जब वह चलने फिरने, खेलने तथा स्कूल जाने लगता है तब भी उसको संसार बड़ा आनंदायक लगता है। कुछ और वर्ष बीत जाने पर उसमें परिवर्तन आ जाता है और वह क्षणिक तथा अस्थायी आनंद के पीछे भागने लगता है। यह अवस्था बड़ी चिन्ता जनक होती है। युवक की उस समय बड़ी देख भाल की जानी चाहिए तथा उसका उचित मार्गदर्शन किया जाना चाहिए।

मेरी यही अवस्था थी कि मुझे स्वामी जी की दया तथा उनका प्रेम प्राप्त हो गया। उनके प्रेम का आभास ही हमको उनके चरणों के निकट ले आता है। उनकी दयादृष्टि ही थी कि मुझे उन के छात्रावास में स्थान मिल गया। यह वह स्थान है जिसे उनका दैवी आश्रम कहा जाए तो अधिक उचित है।

एक दिन मुझे यह जानकर बड़ा आनंद प्राप्त हुआ कि वृन्दावन में मेरे निवास के तीन वर्ष पूरे होगए हैं और मैं ग्रेज्युएट हो गया हूँ। यह तीन वर्ष मुझे तीन क्षणों की भाँति प्रतीत होते थे। मुझे

---

* रविशंकर जी श्री सत्य साई कालेज काडुगोडी में कामर्स के प्रवक्ता हैं।

ऐसा लगता था जैसे मैं वृन्दावन में किसी पर्व के अवसर पर, अन्य भक्तों की भाँति बहुत थोड़ी सी देर के लिए आया था।

अपने भगवान के निकट तीन वर्ष बिताकर मैंने कितना कुछ प्राप्त किया यह सोचकर मुझे आश्चर्य तथा आनंद दोनों की ही अनुभूति होती थी। मैं यहाँ एक सामान्य छात्र की भाँति आया था जिसने अपना जीवन व्यर्थ की बातों में गंवाया था परन्तु तीन वर्षों में मेरा दृष्टिकोण कुछ ऐसा बन चुका था कि मेरे विचार में मुझे कुछ बोलने की आवश्यकता ही नहीं रह गई थी।

जब मुझसे कोइ पूछता कि तीन वर्षों में मैंने क्या सीखा तो मैं तुरन्त उत्तर देता था कि मैंने इस अवधि में शान्त रहना सीखा है। इस बीच वास्तव में मैंने शान्त रहकर चलना, बोलना, उठना, बैठना, तर्क करना तथा व्यवहार करना सीखा था। मुझे पूर्ण ज्ञान था कि जब मैं यहाँ आया था तो कितना अपूर्ण था और तीन साल में भगवान साईं ने मुझको काँट छाँट कर कितनी बातों में परिपूर्ण बना दिया था।

छात्रों को परिपूर्णता के मार्ग पर चलाने के उनके ढंग बड़े रहस्य-पूर्ण हैं। कभी वे छात्रों पर एक दृष्टि डालकर कभी दोचार शब्द कहकर उनकी त्रुटियों को दूर कर देते हैं। कभी इस उद्देश्य को लेकर केवल एक मुस्कान बखेर देते हैं तो कभी डाँट-डपट भी कर देते हैं परन्तु उनका सबसे अधिक प्रभावशाली ढंग है ग़लती करने वाले के प्रति उपेक्षा का व्यवहार करना और यह भी रोचक बात है कि ग़लती करने वाले को यह ज्ञान हो जाता है कि उपेक्षा का कारण स्वयं उसकी दुर्बलता है—वह स्वामी जी के बताए हुए मार्ग पर ठीक से नहीं चल पा रहा है। वास्तव में वे हमारी उपेक्षा नहीं करते बल्कि हम उनके आदर्शों की उपेक्षा करते हैं। उनकी उपेक्षा निसंदेह हमारे

लिए असहनीय होती है। यह हमारे हृदय से सारा रक्त निचोड़ कर हमको अत्यन्त दुखी कर देती है, परन्तु उनकी ओर से जो कुछ मिलता है उसी में हमको अपना कल्याण दिखाई देता है। मेरे साथ भी ऐसा कई बार हुआ। ऐसे अवसर पर बड़ा सावधान रहना पड़ता है। दृढ़ता तथा विश्वास मन में लिए हमको प्रतीक्षा करनी पड़ती है। उपेक्षा की अवधि कब समाप्त होगी यह तो बस स्वामी जी ही जानते हैं। मेरे अनुभव के अनुसार यह अवधि कुछ क्षणों से लेकर कुछ वर्षों तक की हो सकती है।

परिस्थितियों ने मुझे उनके स्वर्ग समान निवास स्थान से दो वर्षों तक दूर रखा। इस आनंदमयी तथा सुखद वातावरण को छोड़ते समय मुझे बहुत दुख हुआ था। मुझे लगा था कि मेरी सारी क्षमताएं निष्क्रिय होकर रह गई हैं।

बी० काम० के अन्तिम वर्ष के बीच एक बार स्वामी जी ने मुझसे पूछा था कि बी० कॉम० के पश्चात मैं क्या करना चाहता हूँ? मैंने उत्तर दिया था कि मैं तो सदा-सदा के लिए वृन्दावन में ही रहना चाहूंगा। उन्होंने कहा था कि यदि ऐसी बात है तो मुझे अत्यन्त सावधान रहना पड़ेगा।

ज्ञान्द्रियों पर नियन्त्रण करने के विषय पर बोलते हुए एक बार स्वामीजी ने कहा था "महानता इसमें नहीं कि कोई व्यक्ति वृन्दावन में सयंम से रहे क्योंकि यह स्थान तो ऐसा है कि यहाँ मन के भटकने या सांसारिक मोह में फंसने की संभावना नहीं है। महानता तो वह होगी यदि तुम तृष्णा, इच्छा, आकर्षण तथा माया मोह वाले वातावरण में रहकर भी वैसे ही रहो जैसा [illegible] का प्रशिक्षण तुम यहाँ प्राप्त

करते हो।" मुझे तुरन्त आभास हो गया था कि स्वामी जी ने जो परीक्षा हमारे सम्मुख रखी थी बड़ी कठिन थी।

वृन्दावन से निकलने पर परीक्षा आरंभ भी हो गई थी। मुझे एक ऐसी संस्था में काम करना पड़ा जहाँ के छात्र हड़तालें करने में कुख्यात थे। स्वामी जी की दया से दो वर्ष बिना किसी गड़बड़ी के बीत गए और मैंने एम० कॉम० कर लिया। यदि भगवान की दी हुई परीक्षा मे पूरा उतरने का मेरा निश्चय दृढ़ न होता तो इन दो वर्षों में मैं कई अवसरों पर भटक सकता था। ये दो वर्ष पहले तीन वर्षों की अपेक्षा बहुत धीरे-धीरे व्यतीत होते हुए दिखाई दिए फिर भी वे बीत गए और एक दिन मैं आशा तथा विश्वास लिए वृन्दावन लौट आया। मैं भलि भाँति जानता था कि मुझे वहाँ सिद्ध करना होगा कि मैं परीक्षा में खरा उतरा था और यह बात तो निश्चित रूप से स्वामी जी की प्रतिक्रिया को देखकर ही कही जा सकती थी।

वह क्षण सदा के लिए मेरे मन में सुरक्षित हो गया है जब मैं धड़कते दिल तथा काँपती टाँगों से उनके भेंट कक्षा के बाहर जाकर खड़ा हो गया था। सहसा द्वार खुला और एक लाल प्रतिमा दिखायी दी। मेरे दिल की गति रुक सी गई जब स्वामी जी गेट की ओर आते हुए फूलों की एक झाड़ी के पीछे अदृष्य हो गए। जब वे फिर से दृष्टिगोचर हुए तो मेरी आशा भरी आँखें उनपर जम कर रह गईं। उनकी आंखें मेरे अतिरिक्त और हर ओर उठ रही थीं। कुछ क्षणों के पश्चात उनकी दृष्टि मुझपर पड़ी और उनकी मधुर मुस्कान तथा दो शब्दों से मुझे अनुमान हो गया कि उन्होंने मुझे स्वीकार कर लिया था। मैं उनके चरणों में गिर पड़ा।

मुझे यह आभास कभी नहीं होता कि मैं उनके कालेज के एक

प्रवक्ता के रूप में वृन्दावन लौटा हूँ। जैसा कि वह कहते हैं मैं तो अपने को सदा ही एक शिक्षार्थी समझता हूँ। वास्तविक गुरु तो स्वामी जी ही हैं। हम तो सदा ही उनके शिष्य बने रहेंगे।

स्वामी जी की एक योजना है और हमको उस योजना में अपना-अपना कार्य करना है। मेरा कार्य यह है कि मैं उनके कालेज में काम करूँ जहाँ लाखों व्यक्तियों का प्रशिक्षण होता है। सत्य साई छात्रावास की स्थापना भी उनकी योजना की एक कड़ी है और मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि इस अवसर पर मैं यहाँ प्रस्तुत हूँ।



२५–काश..................

*एन० कस्तूरी

काश मैं अपने आप पर से अस्सी वर्षों का बोझ उतार फेंकता और अपना पौत्र होता। यदि ऐसा हो सकता तो मुझे सत्य साईं कालेज में अध्ययन करने तथा छात्रावास में रहने का अवसर मिल जाता। अब तो केवल इतना है कि मैं इस भवन के बरामदों से गुज़र सकता हूँ और कभी-कभी छात्रों के सामने कुछ बोल सकता हूँ। मैं चौसठ वर्ष पहले ही उत्पन्न हो गया और इसी लिए मेरे कालेज के दिन बड़े उत्साहपूर्ण बीते। हम बिना कुछ समझे ही रटाई करते थे और हमको भारतीय संस्कृति से दूर रखा जाता था। हमको पाश्चात्य दार्शनिकों की पुस्तकें पढ़ाई जाती थीं परन्तु गीता, उपनिषद् या पातांजलि पढ़ने का अवसर नहीं मिलता था। आज मुझे प्रसन्नता होती है जबकि इस कालेज के छात्र वेदान्त, भक्ति, योग तथा मनु के धर्मशास्त्र पर प्रवचन सुनते हैं। आज भारत में और कोई महाविद्यालय ऐसा नहीं जो इस प्रकार गूढ़ विषयों को अपने कार्यक्रम में सम्मिलित करे तथा इस प्रकार छात्रों को आत्मिक प्रकाश प्रदान करे। काश मैं भी किशोर अवस्था में लौटकर इन छात्रों के साथ उनकी कक्षा, उनके पुस्तकालय तथा उनकी प्रयोगशाला में बैठ सकूँ।

मेरे समय में काले सूट पहने गोरे प्रवक्ता भी विदेश से आते थे

---

* "सनातन सारथी" के सम्पादक।

ग्रौर नोट्स लिखाते थे। हमको यह भी नहीं बताया जाता था कि पाँच हजार वर्ष पहले हम संस्कृति के मामले में कितने धनी थे। साईं कालेज में योग्य ग्रध्यापक छात्रों का मार्ग दर्शन करते हैं। यहाँ के ग्रध्यापक ग्रपने सदगुरु के संग रहकर ग्रानंदमग्न रहते हैं, शंकराचार्य की कविताग्रों का रस लेते हैं ग्रौर शिक्षा-दीक्षा को साधना समझते हैं। यहाँ छात्रों को पोथन, काम्बर, वसावरण तथा कालीदास की कृत्तियों का ग्रध्ययन कराकर ग्रपने समय के ग्रवतार के चरणार विन्दों की ग्रोर ले जाया जाता है। यहाँ के छात्र ग्रास पास के गाँवों में कल्याणकारी कार्य करते हैं ग्रौर ग्रामीणों से सहयोग प्राप्त करते हैं। यहाँ की शिक्षा से मनुष्य का चरित्र निर्माण होता है, ग्रात्म ज्ञान प्राप्त होता है तथा दूरदृष्टि मिलती है।

बहुत दिन पहले मैंने भी एक होस्टल में कुछ समय बिताया था। उन दिनों की याद मुझ में इच्छा उत्पन्न करती है कि मैं फिर से एक बालक बन जाऊँ ग्रौर साईं होस्टल में निवास करूँ। मैं जिस होस्टल में रहा वहाँ तो संगीन दीवारों के ग्रन्दर निर्जीव सा किताबी ग्रध्ययन का वातावरण था। वहाँ यह प्रातः ग्रौर सांयकाल की ताज़गी कहाँ थी? हमको सतसंग, भाईचारा तथा मित्रता कहाँ मिलती थी? हमको तो ग्रपने पूर्वजों से प्रथक करके पाश्चात्य देवताग्रों की देख रेख में रखा जाता था। वृन्दावन का यह छात्रावास तो धरती पर स्वर्ग के समान है। सरस्वती ग्रपनी वीणा से यहाँ हमारा स्वागत करती है। राजसिक तथा तामसिक पशु यहाँ ग्रंकश में रखे जाते हैं। यहाँ दूर-दूर तक कृष्ण की मुर्ली का संगीत बिखरा रहता है। यह विश्वभर के युवकों का छात्रावास है। छात्रों को चुपचाप तथा प्रसन्नता पूर्वक ग्रपने ग्रपने काम को सेवा समझकर करते देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है। ग्रध्ययन उनका तप है, भजन उनका श्वास ग्रौर सेवा उनका जीवन

है। कैसी कैसी प्रतिभाएं उनमें उत्पन्न हो गई हैं और इन सबका उद्देश्य है अपने प्रेमपूर्ण स्वामी के कार्य को आगे बढ़ाना। मेरी इच्छा होती है कि मैं रसोई में उनके साथ स्वादिष्ट व्यंजन बनाऊं, खाने के कमरे में प्रेम पूर्वक साथियों को भोजन परोसूं तथा गोकुलम में गायों तथा उनके बछड़ों की देख भाल करूँ। ये छात्र कार चलाना भी सीखते हैं और ट्रेक्टर चलाना भी, बिजली का काम भी कर लेते हैं और सफ़ाई का भी, पुस्तक की दुकान भी चलाते हैं और कैन्टीन भी, इधर उधर का काम भी कर लेते हैं और बैंड की धुन पर भजन भी गा लेते हैं। मैं भी इनके साथ काम करके इन से यह असीम आनंद बांटना चाहता हूँ।

कोई आश्चर्य नहीं कि बाबा जी उनसे प्रेम करते हैं। वे उनसे कहते हैं :—

> "जब मैं तुमसे प्रेम करता हूँ तो स्वयं से प्रेम करता हूँ, जब तुम अपने आप से प्रेम करते हो तो तुम मुझ से प्रेम करते हो।"

वे जानते हैं कि प्रत्यक्ष रूप से छात्र अध्ययन, सेवा तथा खेलकूद में लगे रहते हैं परन्तु उनके मन में बाबा जी ही बसे रहते हैं। इस पवित्र मन्दिर में कोई दूसरा विचार समा ही नहीं सकता। बाबा जी अपने छात्रों को जीवन के हर क्षेत्र में बढ़ते देखकर बड़े प्रसन्न होते हैं। छात्र एक ओर शिक्षा क्षेत्र में अनेक पारितोषक प्राप्त करते हैं तो दूसरी ओर अपना सेवा कार्यों के लिए समाज से प्रशंसा भी पाते हैं। वे कवि भी हैं, वक्ता भी, अभिनेता भी हैं और साधक भी। स्वामी जी कहते हैं कि "मैं नन्दलाल हूँ और आनंद बाला के रूप में अपने सखाओं के संग खेलने फिर से आगया हूं।" वे प्राय: छात्रों को "वृन्दावन के ग्वाले" कहकर पुकारते हैं। कार्यशीलता, बुद्धि तथा

चिन्तन द्वारा यहाँ के छात्र बाबा जी के निकट रहकर आनंद मग्न रहते हैं। बाबा जी के प्रभाव से वे साहसी, मधुर, विश्वासी, सदाचारी, शुद्ध हृदय तथा आध्यात्मिक व्यक्ति बन गए हैं।

जब मैं वृन्दावन के नन्दलाल के चरणों में बैठे युवकों को देखता हूं तो मुझे खेद होता है कि मैं संसार में इतना पहले क्यों आ गया था। कालेज तथा होस्टल के अतिरिक्त बाबा का व्यक्तित्व स्वयं में कालेज तथा होस्टल है। वे धर्मचक्र के धुरे के समान हैं इसी लिए छात्र अवसर मिलने पर उनके पास दौड़े चले आते हैं। शिक्षा दीक्षा की प्रक्रिया यहाँ सकारात्मक है। स्वामी जी की दृष्टि से कोई अपने को छिपा नहीं सकता और कोई बात उनके लिए अनसुनी नहीं रह सकती। वे प्रत्वेक विषय की गहराई में उतरे हुए हैं इस लिए कोई छात्र अपने अधूरे ज्ञान से उनको संतुष्ट नहीं कर सकता। छात्र उनके चरणों को कैसे थामे रहते हैं? कैसे वे उनके कहीं बाहर चले जाने पर मुरझा जाते हैं और उनके आने पर खिल उठते हैं? बावा जी की एक मुस्कान, उनका एक शब्द, उनकी एक झलक, उनके हाथ का एक इशारा, छात्रों के लिए हफ़्तों तक सहारा बना रहता है और स्वामी जी के पत्र में अपने लिए "प्रिय" लिखा पाकर तो वे बस मानो अमृतपान कर लेते हैं।

बाबा जी के निर्देशन में छात्र भोजन से पूर्व एक सामूहिक प्रार्थना गाते हैं। इस प्रार्थना से छात्रों को आन्तरिक दृष्टि तथा भगवद् अनुभूति प्राप्त होती है। यह प्रार्थना भगवद् गीता से लिया गया एक श्लोक है:—

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हवि ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना॥

इस श्लोक से भगवान की सर्वव्यापकता का ज्ञान होता है। जब छात्र दिन में दो बार इस प्रार्थना पर चिन्तन करते हैं तो उन्हें पता लगता है कि भगवान भोजन में भी है और भोजन बनाने वाली अग्नि में भी। खिलाने वाला भी भगवान है और खाने वाला भी भगवान है, तो छात्र के मन में विस्तार तथा अनुभव में व्यापकता उत्पन्न होने लगती है। वे वेदों से लिए गए शब्द भी अपनी प्रार्थना में बोलते हैं :—"असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्य मा अमृतोमा गमय।"

छात्रावास के रूप में इस स्वर्ग में छात्रों को अपनी प्रार्थना में माँगी जाने वाली तीनों वस्तुएं प्राप्त हो जाती हैं। यह छात्रावास एक अमरीकन भक्त वाल्टर कॉवने की याद दिलाता हैं जो तीसरी अखिल भारतीय सत्य साईं कानफ़न्स के अवसर पर मद्रास में स्वर्गवासी हो गए थे। परन्तु यह वाल्टर की मृत्यु नहीं थी। इसके पश्चात तो भगवान ने उन्हें उनके देश अमरीका भेज दिया था और वहाँ वे उन्नीस महीने तक जीवित रहे थे। तदपश्चात उनकी दोबारा मृत्यु होने पर भगवान साईं ने उनकी पत्नी एल्सी कॉबने को तार में लिखा था "वाल्टर यहाँ बिल्कुल ठीक पहुंच गया है। मैंने उसको अमर कर दिया है।" वास्तव में भगवान ने वाल्टर को अपने में इसलिए विलीन कर लिया था क्योंकि उन्होंने वाल्टर की सदा सदा उनकी सेवा तथा उनके कार्य में सहायता की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया था। संसार के और किसी छात्रावास में आध्यात्मिकता तथा दैवी ज्ञान की ऐसी तरंगें प्रस्तुत नहीं हो सकतीं। "उनके भय से आग जलती है, सूर्य चमकता है, हवा चलती है और मृत्यु भी डरकर भाग जाती है।" यह छात्रावास वाल्टर की पवित्रता तथा जीत का प्रतीक है। इस छात्रावास में रहकर छात्र अवश्य ही कार्यशील बनेंगे और शिक्षा तथा

चरित्र के नभ में तारे बनकर चमकेंगे।

यह ऐसा छात्रावास नहीं जहाँ कुछ समय रहकर छात्र कहीं और चले जाएं। यह ऐसा कालेज नही जिसको छात्र शिक्षा प्राप्ति के पश्चात छोड़ दें। यह तो एक आश्रम, एक चिकित्सालय, एक प्रयोगशाला तथा स्वर्ग के समान है। इसे तो तपोवन तथा ऋषि कुल कहना चाहिए। मुझे प्रसन्नता है कि मुझे उस क्रान्ति को आते देखने का अवसर मिला हुआ है जो साईं बाबा की छत्रछाया में युवकों द्वारा लाई जा रही है।



२६--भगवान के कार्य में युवकों का भाग

*राकेश सैन

मायाजाल में फंसे आजके मनुष्य के पास आध्यात्मिक बातों के लिए समय ही नहीं रहा है। वह भौतिक सुख की खोज में सारा दिन मारा-मारा फिरता है परन्तु कुछ क्षण एकान्त में बैठकर अपने भीतर झाँकने का प्रयत्न नहीं करता। इच्छाओं के चक्र में मनुष्य कुछ इस बुरी तरह फंस गया है कि उसकी एक इच्छा पूर्ण होती है तो दस इच्छाएं और उभर आती हैं। मनुष्य मुक्ति चाहता है परन्तु मुक्ति उसे कैसे प्राप्त हो सकती है जबकि वह शारीरिक आराम का थोड़ा सा भी त्याग करने को तय्यार नहीं है ?

परिणाम स्वरूप शान्ति तथा धर्म की यह धरती आज ऐसे व्यक्तियों से भर गई है जिनके जीवन में काम, क्रोध, मोह, घृणा, ईर्ष्या तथा असंतोष का राज्य है। इस दुर्दशा को देखकर भगवान ने इस धरती पर सत्य साईं को अवतार बना कर भेजा। जैसे कि गीता में भगवान कृष्ण ने कहा था, "दुष्टों को नष्ट करने तथा सदाचार की स्थापना करने में युग युगान्तर में अवतरित होता रहता हूँ।" इसी प्रकार भगवान साइ ने घोषणा की है कि "मैं सनातन धर्म की पुर्नस्थापना के लिए अवतरित हुआ हूँ।"

---

*राकेश सैन श्री नकुल सैन (आई० सी० एस०) गवा के भूतपूर्व लैफ्टीनैन्ट गवर्नर के सुपुत्र हैं और भगवान साई के उत्साहपूर्ण भक्त हैं।

समाज कल्याण के लिए भगवान ने युवकों को अपना माध्यम चुना है। यदि छोटी अवस्था में भक्ति, कर्त्तव्य तथा अनुशासन का बीज बो दिया जाए तो कुछ समय पश्चात, प्रेम, शान्ति तथा संतोष के फल प्राप्त किए जा सकते हैं। भगवान का कहना है, "जल्दी से चल पड़ो, धीरे चलो और सुरक्षित ढंग से लक्ष्य तक पहुंच जाओ।" बाल्यकाल में आध्यात्मिकता की ओर से आँखें बन्द रखने तथा वृद्धावस्था में भगवान की ओर झुकने में कोई सार नहीं है।

कुछ लोग कहते हैं कि भगवान साईं अनुशासन पर आवश्यकता से अधिक बल देते हैं। क्या वे भूलते हैं कि अनुशासन तथा संयम से ही संतोष तथा मन की शान्ति की प्राप्ति संभव है?

भक्ति का यह अर्थ नहीं कि घंटे दो घंटे के लिए मन्दिर में बैठकर माला फेरें। भक्ति का सर्व श्रेष्ठ रूप यह है कि हम जिस कार्य को कर सकने की क्षमता तथा योग्यता रखते हों उसे तन्मयता तथा लगन से करें। जैसा कि भगवान स्वयं कहते हैं, "काम ही भक्ति है, कर्त्तव्य ही भगवान है।"

युवकों के चरित्र को नए साँचे में ढालने के उद्देश्य से देश भर में अनेक सत्य साईं कालेज आरंभ करना, भगवान साईं का महत्वपूर्ण क़दम है। देश के अन्य कालेजों में तथा संसार भर के कालेजों में आध्यात्मिक प्रशिक्षण के प्रति उपेक्षा का व्यवहार किया जाता है परन्तु इन कालेजों में इस पक्ष पर बहुत बल दिया जाता है। भगवान कहते हैं, "चरित्र के बिना शिक्षा न केवल व्यर्थ है बल्कि हानिकारक है।"

सत्य साईं कालेजों में अध्ययन करने वाले छात्रों को यह स्वभाग्य प्राप्त है कि भगवान सदा ही उनके निकट रहते हैं और वह भी उनको

सौभाग्य है कि भगवान स्वयं उनका माग दर्शन करते रहते हैं। यहाँ भगवान स्वयं छात्रों को सिखाते हैं कि जीवन की विपत्तियों तथा दुखों से निराश नहीं होना चाहिए बल्कि उनको जीवन का सामान्य अंग समझ कर उनका सामना करना चाहिए।

भगवान कहा करते हैं, "समस्याओं तथा विपदाओं का तो स्वागत करना चाहिए क्योंकि यह हमको विनम्रता तथा भगवान का आदर करना सिखाती हैं। सुख दो दुखों का मध्यान्तर होता है। आनंद दुख से ही उत्पन्न होता है क्योंकि आनंद की उत्पत्ति आनंद से नहीं हो सकती।" वे यह भी कहा करते हैं कि निम्नलिखित चार सिद्धान्तों को ग्रहण कर लिया जाए तो जीवन सरल, सुगम बन सकता है :

भगवान के पदचिह्नों पर चलो।
शैतान से लड़ो।
अन्त तक युद्ध जारी रखो।
बाज़ी जीत लो।

भगवान के पदचिह्नों पर चलने का पहला चरण है भगवान की छत्र छाया में रहना। भगवान छात्रों के सम्मुख अपने प्रवचनों में गीता तथा महाभारत की घटनाएं सुनाते हैं और सत्य तथा धर्म के सिद्धान्त बताते हैं। वे अर्जुन का महाभारत के बीच भ्रान्ति में फंस जाने का उदाहरण दिया करते हैं कि अपने संबंधियों को शत्रु पक्ष में देखकर अर्जुन ने कृष्ण से पूछा था कि वे उनको किस प्रकार मारें। तब कृष्ण जी ने उन्हें समझाया था कि इस प्रकार के संबंध तो केवल सांसारिक तथा अस्थायी होते हैं। असली बात तो यह है कि धर्म तथा अधर्म में भेद किया जाए। इस प्रकार छात्र उनसे सत्य, धर्म, शान्ति तथा प्रेम का पाठ पढ़कर संसार के क्रियात्मक क्षेत्र में कूद पड़ते हैं।

शैतान (बुराई) से लड़ने का दूसरा चरण तब आरंभ होता है जब छात्र संसार तथा जीवन की वास्तविकताओं को देखते हैं। यहां उनकी परीक्षा आरंभ होती है कि वे दूसरों से प्रभावित होकर स्वयं बदल जाते हैं या साईं की शिक्षा के अनुसार दूसरों को अपने सांचे में ढालते हैं। यदि वे दूसरों को बदलते हैं तो यही भगवान के कार्य का प्रचार है।

अन्त तक युद्ध जारी रखने की बात भी क्रियात्मक जीवन में आती है। देखना यह होता है कि छात्र साहस तथा विश्वास छोड़कर जीवन की बाज़ी को बीच ही में तो नहीं छोड़ देते हैं। इस संबंध में भगवान हम से कहा करते हैं कि :—

जीवन एक चुनौती है, इसे स्वीकार करो।
जीवन एक सपना है, इसे साकार करो।
जीवन एक खेल है, इसे खेलो।
जीवन प्रेम है, इसका रसपान करो।

यदि कोई इन तीन चरणों में सफल रहता है तो चौथा चरण उसके लिए सुगम हो जाता है—वह जीवन तथा मृत्यु की बाज़ी जीत लेता है।

आजकल हज़ारों युवक भगवान से निर्देश तथा आर्शीवाद लेने उनके पास आते हैं। पत्तापार्थी में युवक थोड़े समय के लिए भगवान के साथ रह पाते हैं परन्तु इतने से ही वे अपने कार्य के लिए एक नई लगन लेकर लौटते हैं। कुछ युवक भगवान साईं के बारे में अपनी शंकाएं दूर करने के उद्देश्य से उनके पास आते हैं और उनमें से अधिकतर

भगवान के ही होकर रह जाते हैं। कुछ युवक यह भी कहते दिखाई

देते हैं कि वे भगवान के सच्चे भक्त हैं और उनपर आँखें बन्द करके विश्वास करते हैं। परन्तु क्रियात्मक रूप में वे भगवान की बताई बातों का पूर्ण रूप से अनुसरण नहीं करते। भगवान का कहना है कि कथनी, करनी तथा विचार में मनुष्य को एक होना चाहिए। ये युवक इस शिक्षा को भूलकर साईं से दूर होते ही फिर से पुरानी आदतों में फंस जाते हैं। यदि वे सोचते हैं कि भगवान को उनके बारे में ज्ञान नहीं तो वे ग़लती करते हैं क्योंकि भगवान एक स्थान पर नहीं रहते बल्कि सब-के हृदय में निवास करते हैं। इसलिए चाहे हम भगवान के निकट हों या उनकी दृष्टि से दूर हमको सदाचार त्यागना नहीं चाहिए। भगवान के पथ को प्रयत्न किए बिना छोड़ना एक पाप है क्योंकि यह कर्त्तव्य से मुंह मोड़ना ही है। हाँ प्रयत्न करने के बावजूद यदि किसी को सफलता न मिले तो उनका दोष नहीं—भगवान की इच्छा ! यदि भगवान साईं की किसी एक बात को भी एक व्यक्ति दृढ़ता से पकड़ ले तो मुझे विश्वास है कि हम इस योग्य हो जाएंगे कि विश्व के कोने-कोने में 'साईं पताका' फहरा सकें क्योंकि "बूंद-बूंद से सागर बनता है।"

• • •

२७--स्वामी—मेरे प्राण

*के० प्रेमानंद

वृन्दावन में तीन वर्ष रहकर मुझे यह विश्वास हो गया है कि यदि कोई रक्षक तथा मुक्तिदायक है तो वे केवल स्वामी जी हैं। हम ने स्वर्ग के संबंध में पढ़ा है कि वहाँ सबकुछ प्रचुर मात्रा में होता है। वृन्दावन भी ऐसा ही स्वर्ग है।

स्वामी जी इस युग में मनुष्य को मुक्ति दिलाने तथा धर्म का पुर्न उत्थान करने हेतु पधारे हैं। हमारा वातावरण अस्त व्यस्त है और संसार विनाश के किनारे खड़ा है परन्तु भगवान साईं हमारा बहुत बड़ा सहारा हैं। वे कहते हैं, "जब मैं हूँ तो तुम्हें भय कैसा ?" लोग भगवान की ओर ऐसे ही खिंचे चले आते हैं जैसे चुम्बक की ओर लोहे के टुकड़े। सर्वशक्तिमान भगवान, सत्य, सदाचार तथा सुन्दरता के प्रतीक हैं।

कहा जाता है कि जीवन एक तूफ़ान की भाँति है परन्तु हमारे लिए तो जीवन भगवद् प्रेम का एक गीत है। वृन्दावन आकर, उनकी

पी० यू० सी० की परीक्षा के दोनों वर्षों में प्रेमानंद जी ने बहुत अच्छे अंक प्राप्त किए। अब वे यहाँ बी० कॉम० कर रहे हैं। ये एक अच्छे गायक तथा अभिनेता हैं। इनकी जन्म भूमि कोयलन (कैरल) है।

निकटता हमारे जीवन को समस्त रूप से परिवर्तित कर देती है। उनका जीवन उनका संदेश है और हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके आदेशों को क्रियात्म रूप दें और इस योग्य बनें कि हमारे विचार, कथन तथा कर्म में समानता उत्पन्न हो जाए। कर्तव्य का ठीक अर्थ यह है कि हम निष्पक्ष होकर कार्य करें और हर कार्य को भगवान का कार्य समझें—"कार्य साधना है और कर्त्तव्य भगवान !"

हमारा कर्त्तव्य कर्म है उसका फल नहीं। स्वामी विवेकानंद कहते हैं "यदि भगवान की दया न हो तो सागर में एक बूंद जल और कुवेर के घर एक रोटी का टुकड़ा न रहे और यदि भगवान चाहें तो मरुस्थल में नदियाँ बहा दें और भिखारी को मालामाल कर दें।" सच्चाई में अणु से भी अधिक शक्ति है। भगवान का प्रेम अमृत तुल्य है। इसका वर्णन नहीं हो सकता, केवल अनुभव हो सकता है। यदि हम उनके चरणारविन्दों में अपने आपको अर्पण कर दें तो वे हमारे हैं और हम उनके। भगवान ने हमको सब कुछ दिया हैं और हमें उसका उचित उपयोग करना चाहिए। वे कहते हैं, "यदि तुम हज़ार बार भी असफल हो चुके हो तो एक बार और प्रयत्न कर लो।" उनका प्रेम हज़ारों माताओं के प्रेम के बराबर है।

वे प्राय: कहा करते हैं "भगवान केवल एक है और वह सर्व-व्यापी है। धर्म केवल एक है और वह प्रेम है।" प्रेम का यह दैवी स्वरूप वृन्दावन आने वालों के मन से मैल कुचैल धो डालता है। वे हम को मार्ग दिखाते हैं, हमारी रक्षा करते हैं, हमें ऊपर उठाते हैं और हमें अपना दास बना लेते हैं। जब हमारा हृदय उनका हो जाता है तो हमारे कर्म में भक्ति तथा श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है और काम हमारे लिए आनंद तथा शान्ति स्रोत बन जाता है।

"यदि मन में सदाचार होगा तो चरित्र में सुन्दरता आएगी।
यदि चरित्र में सुन्दरता होगी तो घर में सुख होगा।
यदि घर में सुख होगा तो राष्ट्र में व्यवस्था होगी।
यदि राष्ट्र में व्यवस्था होगी तो संसार में शान्ति होगी।"

हमें क्षणिक सांसारिक आनंद से मन हटाकर, भगवान साईं के अद्वितीय तथा अमर अस्तित्व से मन को जोड़ लेना चाहिए।



२८--साई—कल की आशा

*डी० सोमा शेखर

आजके संसार में अकसर व्यक्ति न किसी से प्रेम करते हैं और नही दूसरे उनसे प्रेम करते हैं। लोग स्वार्थ के जाले में लिपटे हुए हैं। ऐसे में प्रसन्नता की खोज ऐसे ही है जैसे मरुस्थल में पानी की खोज! इन्द्रिय लिप्सा में फिरे हुए मनुष्य के लिए जीवन का कोई अर्थ नहीं और प्रसन्नता ऐसी वस्तु है जिसको इधर उधर से निचोड़ कर प्राप्त किया जा सकता है। वह मनुष्य भी जो दूसरों की सहायता से अपना पेट भरता है जीवन के मार्ग सुखी कल की आशा में तेज़ दौड़ना चाहता है और धनी व्यक्ति अपने जीवन को ऐश्वर्य की चादर में लपेटकर प्रसन्नता खोजते रहते हैं परन्तु निसंदेह आजका मनुष्य असंतुष्ट तथा अप्रसन्न है।

क्या स्थायी सुख प्राप्त हो सकता है और यदि हाँ तो कैसे?

क्या मनुष्य भौतिक तथा शारीरिक नियमों के कारण उत्पन्न हो गया है या उसकी उत्पत्ति का कोई उद्देश्य है?

क्या चिर-सुख कल्पना है या वास्तविकता?

ये प्रश्न मनुष्य अनादिकाल से पूछता आया है और आज भी पूछ

---

* आप काडुगोडी के श्री सत्य साईं कालेज आफ़ आरट्स एन्ड साइंस में, भौतिक शास्त्र के प्रवक्ता हैं।

रहा है। महात्माओं ने हर युग में इन प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास भी किया है। उन्होंने शब्दों के द्वारा इन प्रश्नों का उत्तर न देकर अपने जीवन को उदाहरण बनाकर लोगों को प्रकृति के रहस्य समझाए और यह उन्हीं महात्माओं की दया है कि मानो जीवन के मरुस्थल में आशा-शरिता अभी तक सूखी नहीं है।

यदि बाबा जी मुझे वृन्दावन न बुला लेते तो मैं भी आज प्रसन्नता की खोज में मृगतृष्णाओं में भटकता होता। शायद हर मनुष्य के जीवन में एक ऐसा समय आता है जब वह सहसा ही परिवर्तित हो जाता है। उसके मन से पुराने विचार तथा मान्यताएं लुप्त हो जाती हैं और वह नई विचारधारा में बहने लगता है परन्तु इसके लिए किसी शक्तिशाली प्रेरणा की आवश्यकता होती है। यह मेरा सौभाग्य ही था कि युवावस्था के आरंभ में ही मुझे भगवान साईं का सहारा मिल गया और मेरी आत्मा सत्य तथा आनंद के पथ पर चलने योग्य हो सकी।

मेरा यह परिवर्तन धीरे धीरे प्राकृतिक रूप से हुआ। स्वामी जी के प्रभाव से मनुष्य इस सुगमता के साथ परिवर्तित होता चला जाता है कि उसको यह प्रक्रिया स्वप्न की भांति प्रतीत है। इसके लिए स्वामी का तरीक़ा है 'प्रेम' और प्रेम उतना ही प्राचीन है जितनी कि सृष्टि ! स्वामी जी हर व्यक्ति के साथ भिन्न-भिन्न तरीक़े से व्यवहार करते हैं। वे स्वयं कहतु हैं "मेरा जीवन मेरा संदेश है।" और यह उनका समस्त जीवन ही है जिसका हर क्षण, हर कार्य, भक्तों को प्रभावित करता रहता है। उनका प्रेम अगाध तथा असीम है और उसकी वर्षा सब पर समान रूप से होती रहती है। इसका एक उदाहरण देना यहाँ अनुचित न होगा। एक दिन एक उच्चाधिकारी

भगवान का आशीर्वाद लेने आया। ड्राईवर को कार के पास छोड़कर अधिकारी तथा उसके साथी एक ऐसे स्थान पर आकर बैठ गए जहाँ बाबा जी की दृष्टि आसानी से पड़ सकती थी। भगवान आए तो अधिकारी तथा उसके साथियों ने तो उनके दर्शन भली भांति किए परन्तु ड्राइवर वंचित रह गया। वह बेचारा उदास सा खड़ा था। सहसा भगवान भजन कक्ष की ओर सीधे जाने के बजाए मुड़ गए और ड्राइवर के सम्मुख जा खड़े हुए। उन्होंने उससे केवल एक दो बातें ही नहीं कीं बल्कि उसे विभूति भी दी। उस समय उस ड्राइवर के मुख़ पर प्रसन्नता की जो मुद्रा थी वह भुलाई नहीं जा सती। वास्तव में भगवान का प्रेम एक सरिता है जो मधुर आवाज़ के साथ बहती सबको तृप्त करती बहती रहती है।

सत्य का साकार रूप होने के अतिरिक्त भगवान में एक और विशेष गुण है और वह यह कि उनकी सक्रियता में निषक्रियता तथा निषक्रियता में सक्रियता का संतुलन बना रहता है। वे ऐसा कहते ही नहीं बल्कि करके दिखाते हैं कि मनुष्य निरन्तर कर्म भी करता रहे और कर्म से मन को प्रथक भी रखे। हम उनके निकट रह कर बड़े आश्चर्य से देखते हैं कि बड़े बड़े कार्य वे पूर्णता के साथ करते हैं परन्तु फिर भी उनसे प्रथक रहते हैं। इस प्रकार वे हमें सिखाते हैं कि कर्म हमको मोक्ष तथा प्रसन्नता प्रदान कर सकता है। सामान्य मनुष्य कर्म तथा वैराग्य के इस संतुलन को अपने जीवन में इस प्रकार बनाए रख सकता है कि वह अपने कर्तव्य को भगवान की साधना समझकर करता रहे।

वे केवल कर्म द्वारा ही शिक्षा नहीं देते। उनकी निषक्रियता भी बहुत कुछ सिखा जाती है। जब भगवान अपने आप में लीन हों उनके चरणों में बैठकर उनकी तेजस्वी आँखों को चुपचाप देखते रहना एक

अद्‌भुत अनुभव होता है। ऐसे समय पर देखने वाले को एक अदभुत् सुख का आभास होता है। जब हम उनके बनाए मार्ग पर नहीं चल पाते और वे हमें यह बात जताना चाहते हैं तो हमारे प्रति उपेक्षा का व्यवहार करने लगते हैं। ऐसी अवस्था में भक्त उस आनंद से वंचित हो जाता है जो उनको निहारने में मिलता है और फिर अपनी भूल ठीक करने को तत्पर हो जाता है। यदि भक्त सच्चे मन से पश्चात्ताप करे तो भगवान उसकी ओर देखकर धीरे से मुस्करा देते हैं और सब कुछ ठीक हो जाता है। इस प्रकार भक्त का मन उच्चतर क्षेत्र में विचरता रहता है और उसको समय के बीतने का भी आभास नहीं होता।

जब मैंने अपनी बी०एस०सी० की परीक्षा दी तो मुझे प्रसन्नता की बजाए इस संस्था को छोड़ने का दुख महसूस हुआ। जब स्वामी जी ने परामर्श दिया कि मैं कहीं और जाकर अपना अध्ययन जारी रखूं तो मेरा मन बिलकुल ही टूट गया परन्तु मुझे स्वामी जी के शब्दों ने सहारा दिया "तुम्हारे स्वयं के भीतर प्रसन्नता तथा दैवी अमृत का महासागर छिपा है उसे खोजो और उसे बहने दो।"

स्वामी जी से शारीरिक रूप से दूर होकर मैं प्रायः उन दिनों को याद किया करता था जब उन्होंने मुझको नए सांचे में ढाला था तथा मुझ पर अपने निष्काम प्रेम की वर्षा की थी। जीवन में प्रथम बार मुझे आभास हुआ कि संसार कितना अपूर्ण है तथा संसार वाले कितने स्वार्थी हैं। मुझे यह भी अनुभव हो गया कि भौतिक सुख के माध्यम से यदि हम प्रसन्नता को खोजना चाहेंगे तो निराशा के दलदल में फंसते चले जाएँगे। जब मैं अपने चारों ओर फैले वातावरण को देखता और वृन्दावन के जीवन से उस जीवन की तुलना करता तो मुझे लगता कि स्वामी जी के साथ बिताया समय मानो स्वप्न की बात थी। मुझे

ऐसा लगता था मानो मैं किसी अन्य नक्षत्र पर पहुंच गया हूँ। पूरे दो वर्ष पश्चात भगवान ने मुझे अपने महाविद्यालय में कार्य करने के लिए वापस बुलाने की कृपा की।

आज जबकि हमने उनके द्वारा निर्मित इस नए मन्दिर (छात्रावास) में प्रवेश किया है हमको यह याद करना चाहिए कि किस प्रकार उनकी दयादृष्टि हम पर रही है और किस प्रकार सामान्य शिक्षा के साथ उन्होंने हमारी आत्मा को भी प्रशिक्षण दिया है। जहाँ तक मेरा संबंध है मैं इस प्रश्न का उत्तर तो नहीं खोज पाया कि भगवान ने क्यों मुझे चुना परन्तु इसमें संदेह नहीं कि मैं और मेरे अन्य साथी वास्तव में सौभाग्यशाली हैं।

भगवान साईं ने हमको प्रसन्नता का मार्ग दिखाने के पश्चात इस बात का ध्यान भी रखा कि हम उस पर अग्रसर रहें। उन्होंने हमें यह भी सिखा दिया कि प्रसन्नता अपनी पसंद का कार्य करने में नहीं बल्कि जो कुछ किया जाए उसको ही पसंद करने में निहित है। अब हम इसी लिए प्रसन्न रहते हैं कि हमारा प्रत्येक छोटा बड़ा कार्य भगवान के लिए होता है। उन्होंने हमको यह भी सिखाया है कि प्रसन्नता प्रेम तथा विशाल हृदयता से प्राप्त हो सकती है। भगवान के इस स्वर्ग में रहकर हमारे हृदय में बिस्तार उत्पन्न हुआ है और हमारी इच्छा है कि हम समस्त संसार में प्रेम भाव फैला दें। यहाँ हम एक दूसरे से प्रेम रखते हैं क्योंकि भगवान हम सबसे प्रेम करते हैं।

आध्यात्मिक क्षेत्र में हमने भगवान साईं से सीखा है कि जीवित रहने का आनंद तभी प्राप्त हो सकता है जबकि हम अपनी आत्मा के अन्दर गहराई तक उतर जाएं। हम सबकी यही कहानी है। मैं स्वामी जी के लाखों भक्तों में से एक तुच्छ भक्त हूँ परन्तु मुझे पूर्ण ज्ञान है

कि भगवान ने मुझे अपनी कृपादृष्टि से कृतार्थ किया है और मेरे मन को ऐसा परिवर्तित कर दिया है कि अब मैं सुख के मार्ग पर आगे बढ़ता ही जाऊंगा। मुझे आशा है कि भविष्य में यहाँ ऐसे असंख्य व्यक्ति आएंगे जो अपना जन्म सिद्ध अधिकार अर्थात प्रसन्न रहना, खो बैठे हैं और यहाँ आकर भगवान की प्रेम-ज्योति से अपना हृदय दीपित करेंगे। एक दिन अवश्य आएगा जब समस्त संसार उनके चरणों में आकर उस अनंत सुख की अनुभूति करेगा जो भगवान साईं में निहित है।



२६--दैवी-माता

*रामाकृष्ण रेड्डी

यह सत्य है कि संसार में माँ से अधिक प्यारा और कोई नहीं होता। हम अपनी उत्पत्ति के पश्चात् सर्वप्रथम अपनी माता को ही देखते हैं। वही हमारे स्वास्थ्य, शिक्षा तथा उन्नति के लिए यत्न करती है और वही हमको संसार में जीना तथा व्यवहार करना सिखाती है। इसी लिए हमारे प्राचीन धार्मिक ग्रन्थों में माता को भगवान कहा गया है। वे जिस अद्वती प्रेम की वर्षा हम पर करती है हम उससे एक क्षण के लिए भी अलग होना नहीं चाहते। स्कूल जाने से भी हम इसी लिए कतराते हैं।

वृन्दावन आने से पूर्व हम इस सत्य से अनभिज्ञ थे कि एक माता और भी है जो सृष्टि की रचयेता तथा समस्त माताओं की माता है। उसके प्रेम की तुलना हो ही नहीं सकती। वे हमारे हृदय में निवास करती है और भीतर से ही हमारा पथप्रदर्श करती है। हमको जन्म देने वाली माता तो हमको उसी समय भोजन देती है जब हम रोते चिल्लाते हैं परन्तु यह माँ बिन मांगे ही हमको अमृत प्रदान करती है। इस दैवी माता का प्रेम ऐसा है जिसका न कोई आदि है न अन्त।

---

*रामाकृष्ण रेड्डी ने आन्ध्र से आकर यहाँ से बी० कॉम० किया और अब बंगलोर विश्वविद्यालय से एम० कॉम० कर रहे हैं।

वह हमको भली भांति समझती है और हमको सान्त्वना, साहस तथा शान्ति प्रदान करती रहती है।

भगवान साईं ही यह दैवी माता हैं और केवल माता ही नहीं वे हमारे पिता, हमारे गुरु, हमारे चिकित्सक तथा हमारे जीवन के निमाता हैं। हम बच्चे गलतियां करते हैं परन्तु वे एक पिता के समान उनको ठीक कर देते हैं। जब अपराध संगीन हो तो थोड़ा सा दंड भी देते हैं।

जो व्यक्ति सतह पर देखता है उसके लिए जीवन खाने, पीने, काम करते तथा सोने का ही नाम है परन्तु हमारे यह सद्‌गुरु हमको बताते हैं कि जीवन का अर्थ इससे कहीं अधिक तथा कहीं गहरा है। हमारा हर कार्य भगवान के प्रति एक भेट है, यज्ञ है। मनुष्य में क्षमता है कि प्रयास करके अपने चरित्र को ऊंचा उठा ले और दुष्टों को चुनौती देकर बुराई पर विजय प्राप्त कर सके। निष्काम सेवा तथा भक्ति द्वारा पुरानी आदतों को छोड़कर नई तथा अच्छी आदतें अपनाई जा सकती हैं।

हम काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा मात्सर्य रूपी छः शत्रुओं से घिरे रहते हैं। यही हमारे दुखों की जड़ है। स्वामी जी अपने प्रेम-मन्त्र द्वारा हृदय से इस कैंसर को निकाल फेंकते हैं।

वृन्दावन में आने से पहले छात्र इधर-उधर पड़ पत्थरों के समान होते हैं। जीवन के तपते मरुस्थल में शुष्क हवाएं उन पत्थरों को तोड़ती बखेरती रहती हैं। दैवी माता ऐसे पत्थरों को चुन कर वृन्दावन में ले आती है और सत्य, धर्म, शान्ति तथा प्रेम की छेनी से इनकी काँट छाँट करती है।

इसलिए हमारा परम कर्तव्य है कि हम अपने भगवान की अमर शिक्षा का अनुसरण करें और प्रार्थना करें कि साईं माता हमको अपने काम में अपना माध्यम बना ले।

३०--साईं और मैं

*एन० रामाकृष्णन

जिस प्रकार श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपना परम मित्र बनाया था इसी प्रकार साईं कृष्ण ने हम सबको अपना मित्र बना लिया है और यह उन्होंने केवल हमारे भले के लिए किया है। साईं ने मुझे भी अपने प्रेमपाश में लेकर मुझे सदाचार का मार्ग दिखाया है।

साईं कहते हैं, "स्वाद हड्डी में नहीं कुत्ते के रक्त से रिसते जबड़े में होता है। प्रसन्नता किसी वस्तु में नहीं, स्वयं मनुष्य के भीतर होती है। वासना त्याग कर प्रेम करना ही सुखी जीवन का रहस्य है।" मैंने बिल्कुल ऐसा ही अनुभव किया। मैं भौतिक आनंद के पीछे भाग रहा था। मेरा आचरण, मेरी संगति अलग थी। मुझे इसका ज्ञान भी था परन्तु मैं विवश था और कोई मेरी सहायता करने वाला नहीं था। मैं समझता था कि सांसारिक सुख के अतिरिक्त सुखी जीवन का और कोई रास्ता नहीं है।

साईं वृन्दावन में आने के पश्चात् ही मुझे अपनी गलती का पता लगा। मुझे ज्ञान हो गया कि मैंने अपना बहुत सा समय तथा बहुत सी शक्ति व्यर्थ में गवांदी। साईं ने मुझे बहुत ऊंचा उठा कर यह बता

---

*एन रामाकृष्णन ऊटी से आये थे। उन्होंने यहां से बी० कॉम० किया और अब बंगलोर विश्वविद्यालय से एल० एल० बी० कर रहे हैं।

दिया कि अपने अन्दर छिपे दैवत्व का आनंद लेने के लिए जीवन को किस प्रकार बिताना चाहिए ।

एक परम मित्र की भांति भगवान साईं मेरी प्रत्येक त्रुटि को दूर कर देते हैं और मुझे ज्ञान भी नहीं होता कि ऐसा कब हुआ । वे मेरे भीतर निवास करते हैं और मुझको कठपुतली की भांति नचाते रहते हैं । उन्होंने मुझे पत्थर के टुकड़े से एक मूर्ति बना डाला है ।

जब तक हम सांसारिक वस्तुओं से मुक्ति प्राप्त नहीं कर लेते हमको दुख से मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती । हम भगवान में विश्वास रखें और अपना प्रत्येक कार्य लक्ष्य की ओर बढ़ने के उद्देश्य से करें । यह केवल प्रेम द्वारा ही हो सकता है क्योंकि प्रेम ही भक्ति है । भगवद् प्रेम तो एक सागर समान है । जिसकी गागर में जितनी क्षमता है उस सागर से पानी ले ले । भगवान साईं इसी प्रकार सब पर दयालु हैं । अब यह प्रत्येक व्यक्ति की क्षमता पर है कि वह उनसे कितना कुछ ग्रहण करता है ।

साईं को समझने के लिए व्यक्ति को उनके पास जाना चाहिए, न कि यह आशा रखनी चाहिए कि वे स्वयं उसके पास आएं । जिस स्थान पर प्रेम का पौधा नहीं है उसी स्थान पर तो प्रेम के बीजारोपण तथा प्रेम की वर्षा की आवश्यकता होती है ।

संसार के प्रत्येक कार्य में आध्यात्मिक भूख की प्रेरणा बनती है परन्तु मनचाही वस्तु की प्राप्ति के पश्चात भी मनुष्य अतृप्त रहता है । यह तृप्ति उस समय तक नहीं मिलेगी जबतक आत्म ज्ञान प्राप्त नहीं होगा । यही "दैवी असंतुष्टि" उन्नति का रहस्य है ।

३१--काश मैं भस्म होता

*के० मुर्ली कृष्णा

सारा दिन इतने बादल रहे थे कि मुझे पता भी न चल सका कि सूर्य कब अस्त हो गया। गरज चमक के साथ लगातार वर्षा हो रही थी। सहसा बिजली भाग गई। मैं ने उठकर एक मोमबत्ती जला ली जिसके धुँधले प्रकाश में फिर से सब कुछ दिखाई देने लगा।

इसी प्रकार जब मेरे मन में अन्धेरा हो चुका था और जीवन मेरे लिए एक निराशाजनक बोझ बन गया था साईं बाबा ने मुझे प्रकाश दिखाया। एक लाल रंग की मोमबत्ती, मुस्कान जिसकी ज्योति थी, मेरे सामने आ गई थी। हर क्षण उनके मुख पर एक नई शोभा उधमान हो रही थी।

मेरे कमरे की मोमबत्ती पर एक पतंगा आकर नृत्य करने लगा है। वह शिखा पर इतना मोहित होता है कि उसके अन्दर घुस जाता है और उसके दोनों पंख भस्म हो जाते हैं। मुझे पतगे से इर्ष्या होने लगती है। काश मेरे ये दो पंख—मेरा मन तथा मेरा अहं—साईं बाबा के प्रेम-प्रकाश में जलकर भस्म हो जाते। इन्होंने मुझे बड़ा

---

* इन्होंने बी० कॉम० में उच्च स्थान प्राप्त करके परीक्षा पास की। अब इन्होंने चारटर्ड अकाउन्टैन्सी का कोर्स लिया है। इनका संबंध तामिलनाडु से है।

दुख पहुंचाया है। ये मुझे एक पुष्प से दूसरे पुष्प तक उड़ाए फिरे हैं।

साईं बाबा का प्रकाश भी इसी प्रकार व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित करता है और फिर उसे भस्म कर डालता है। दूर दूर से आने वाले पतंगों के मन से उनका प्रकाश अज्ञान तथा भ्रान्ति को दूर कर देता है। जहाँ हमको सर्प दिखाई देते थे वहाँ तो अब केवल रस्सी दिखाई देने लगती है। अतः हमारी भौतिक इच्छाएं तथा अवगुण भस्म हो जाते हैं और हम उनके चरणों में गिर पड़ते हैं।

स्वामी जी कहते हैं "निस्वार्थ का नाम ही प्रेम है।" एक पत्र में उन्होंने लिखा था—"तुम सब में मैं स्वयं को पाता हूँ। तुम सब मेरे ही रूप हो। जब मैं तुमसे प्रेम करता हूँ तो मानो स्वयं से प्रेम करता हूँ। इसीलिए तुम मुझ से प्रेम करते हो।" वे हम से इतना ही प्रेम करते हैं जितना स्वयं अपने से। वे हमारे दुख तथा उसके निवारण का कितना ध्यान रखते हैं। उनका निष्काम प्रेम इस प्रकार का है जहाँ प्रेमी तथा प्रेम के पात्र में कोई भिन्नता नहीं रह जाती। वे दोनों एक हो जाते हैं। वहाँ न कोई देने वाला रहता है न पाने वाला। दोनों स्वयं को भूलकर स्वयं को दूसरे की आँखों से देखने लगते हैं। दोनों का दुख सुख एक हो जाता है। अहं का पूर्ण विनाश हो जाने पर ही सच्चा प्रेम उत्पन्न हो जाता है। द्वेष की समाप्ति पर ही प्रेम की अनुभूति होती है।

स्वामी जी इस प्रकार के प्रेम की व्याख्या के लिए उस विद्वान का उदाहरण दिया करते हैं जो बहुत से श्रोतागण के सम्मुख गीता से प्रवचन दे रहे थे। श्रोतागण में एक बूढ़ी स्त्री भी थी जो सामने दाईं ओर बैठी थी और रो रही थी। विद्वान अपना भाषण समाप्त करके उसके पास पहुंचे और उससे रोने का कारण पूछा। उसने

बताया कि वह भाषण के बीच भगवान कृष्ण के उस चित्र को देखती रही थी जिसमें वे अर्जुन को उपदेश देते दिखाए गए थे। भगवान कृष्ण का सिर अर्जुन की ओर घूमा हुआ था और बूढ़ा स्त्री को इस विचार से रोना आ रहा था कि इतनी देर तक सिर घुमाए रखने से भगवान को कष्ट हो रहा होगा। विद्वान स्तब्ध रह गया। बूढ़ी स्त्री भगवान में पूर्ण रूप से विलीन हो चुकी थी। उसका प्रेम पवित्र था।

प्रत्येक व्यक्ति के मन में ऐसा ही प्रेम होना चाहिए। ऐसा प्रेम हमारा अंह तथा हमारे अवगुण समाप्त कर सकता है। यह हमको जीवन का सही दृष्टिकोण प्रदान कर सकता है और सदमार्ग दिखा सकता है। हम भगवान को प्रसन्न करने के लिए कुछ इस लिए करें कि हम उनके अंग हैं। हमें सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि उनके आदेशों का उलंघन करके हम उनको कितना कष्ट पहुंचाते हैं।

इस प्रकार के प्रेम को ही अद्वतीय प्रेम कहा जाता है यदि। हम समस्त मानवजाति के लिए इस प्रकार का प्रेम अपने मन में भर लें तो यह सच्चा ज्ञान तथा सच्ची भक्ति होगा और फिर हम जो कुछ करेंगे वह सदकर्म ही होगा। ऐसा प्रेम ही हमें साई धर्म के तीन स्तम्भों—सत्य, धर्म, शान्ति—की ओर ले जा सकता है। जो भगवान के अंग बन चुके हैं कौन उनसे असत्य तथा अधर्म का व्यवहार करेगा ?

जब मैं अपने स्वप्न से चौंका तो मुझे ऐसे लगा मानो मुझे उस पवित्र प्रेम के दर्शन हो गए हैं जो मनुष्य को सत्य, धर्म, शान्ति, भक्ति ज्ञान तथा कर्म की ओर ले जाता है।

३२--भगवान की सेवा में रत युवक

*एस० रघुनाथ

यह अनुभव तो सुखदायी है ही कि भगवान हमारे हृदय की पुकार सुनकर अपने प्रेम की वर्षा हमपर करें परन्तु यह अनुभव और भी सुखदायी है कि हम भगवान की पुकार को सुनकर उनकी ओर दौड़ें।

जब मैं युवकों के मन में भगवान साईं के प्रति श्रद्धा देखता हूँ तो प्रायः मेरे मन में यह विचार आता है।

आजके युग में वैज्ञानिक उन्नति है परन्तु मानवता नहीं, व्यापार है परन्तु इमानदारी नहीं, राजनीति है परन्तु सिद्धान्त नहीं। ऐसी परिस्थिति में हम जैसे वे व्यक्ति जिनके मन सत्य को पहचान गए हैं, बड़े दुखी तथा निराश होते हैं क्योंकि आजका जीवन बिना किसी उद्देश्य तथा बिना किसी सिद्धान्त के चल रहा है। हमको भावी जीवन नीरस दिखाई देता है।

प्रायः युवक यह समझते हैं और उनको समझाया भी यही जाता है कि युवावस्था जीवन की रंगरलियों में खो जाने के लिए होती है। यदि युवक इस परामर्श का अनुसरण करता है तो आनंद के साथ उसको दुख भी मिलते हैं और अन्ततः वह सुख के लिए चिल्लाने लगता है।

---

* रघुनाथ जी गुजरात के रहने वाले हैं। वे एक परिश्रमी छात्र तथा मधुर गायक हैं। ये यहाँ बी० कॉम० कर रहे हैं।

क्योंकि एक इच्छा के पश्चात दूसरी इच्छा मन में जन्म लेती रहती है इस लिए युवक भी अपनी जीवन पद्धति को बदलता रहता है—कभी वह शरीर को आराम पहुंचाने का प्रयत्न करता है तो कभी मस्तिष्क में कुछ भ्रान्तियाँ भर लेता है। कभी अपने आप में खो जाता है तो कभी हिप्पी बन जाता है। यह जीवन क्योंकि सिद्धान्त रहित होता है इस लिए शीघ्र ही नीरस लगने लगता है। क्योंकि वह भिन्न-भिन्न माध्यमों से अपनी सन्तुष्टि चाहता है इस लिए उसे उतने पर कभी संतोष नहीं होता जितना उसके पास होता है। और इसके पश्चात आरंभ होता है इच्छाओं को युद्ध !

युवकों के प्रति भगवान साईं बड़ी समझदारी से पिता के समान व्यवहार करते हैं। हमको उनके अन्दर एक ऐसा व्यक्तित्व दिखाइ देता है जो हमारे कुकर्म तथा कुमार्ग के संबंध में जानते हुए भी हम को दुराचार की नीचता से सुख की ऊंचाई की ओर ले जाना चाहता है। वे हमें सिखाते हैं कि जीवन हमको इस लिए मिला है कि हम अपने आप को बृहत, विस्तृत तथा गहरे अर्थों में जीने के लिए तय्यार करें तथा सदकर्म के द्वारा परमात्मा में लीन हो जाएं।

भगवान साईं हमारा दृष्टिकोण बदल देते हैं, हमारे जीवन का नवनिर्माण कर देते हैं और अपने आन्तरिक स्पर्श से हमारी अन्तरात्मा को जागृत कर देते हैं। उनका समत्व तथा शान्ति हमको मोहित कर लेती है। उनके प्रेम, सहन तथा आनंद से हम गदगद हो उठते हैं। हमको उनके हर गुण से जीवन की नई मान्यताएं मिलती हैं।

उनके समत्व का अर्थ है सबके लिए समान प्रेम। इस संदर्भ में मैं वृन्दावन के छात्रों के नाम उनके एक पत्र से कुछ शब्द प्रस्तुत करता हूं :—

"आओ, सब आओ और मुझमें अपने आप को देखो क्योंकि मैं स्वयं को तुम सब में देखता हूँ। तुम मेरा जीवन हो, मेरे श्वास हो, मेरी आत्मा हो। तुम सब मेरे ही रूप हो। जब मैं तुमको प्यार करता हूँ तो स्वयं को प्यार करता हूँ। इस लिए तुम भी मुझ से प्रेम करते हो तुम मेरी आत्मा हो और मैं अपने आप से इस लिए पृथक् हो गया हूँ कि मैं अपने आप से प्रेम कर सकूँ।"

इससे हमको ज्ञात होता है कि भगवान हम सबके भीतर हैं। यदि हमें इस बात का ज्ञान नहीं हो हम कुछ भी नहीं जानते।

उनके चित्त का स्थिरता आदर्श है। यह विनम्रता तथा शान्ति की मूर्ति हैं यद्यपि उनकी मुट्ठी में ब्रह्मांड के रहस्य हैं फिर भी वे दयावान हैं। इससे हमको सीखना चाहिए कि हमारी किसी इच्छा की पूर्ति हो या न हो, हमारे संग कुछ हो न हो, हमको शान्त रहना चाहिए।

उनकी सहनशीलता में दैवी प्रेम की सरिता बहती प्रतीत होती है। वे हमारी बुद्धिहीन भावनाओं तथा तर्क रहित विचारों को सहन करके उनकी शुद्धि कर देते हैं। वे हमें सिखाते हैं कि सहिष्णुता युवकों के जीवन का सार है। "हमारी प्रकृति चाहती है कि हम मुक्के का उत्तर मुक्के से, धोखेबाजी का उत्तर धोखेबाजी से तथ झूठ का उत्तर झूठ से दें परन्तु हमें बदला नहीं लेना चाहिए। हमको संयम से काम लेकर अपनी भावनाओं से पृथक रहना सीखना चाहिए।" यह है भगवान साईं की शिक्षा !

उनके अस्तित्व से असीम आनंद प्रवाहित होती प्रतीत होता है जो

हमको जीवन लिप्सा से मुक्ति का आभास दिलाता है। जब हम उनके

सम्मुख होते हैं या उनके मधुर शब्द सुन रहे होते हैं तो हम अपनी वासनाओं तथा इच्छाओं को भूल सा जाते हैं। उन स्वर्गीय क्षणों में हमको न किसी वस्तु की इच्छा होती है न कमी प्रतीत होती है। हमारे हृदय उनमें खो जाते हैं। वे हमारे मन को भली भाँति पढ़ सकते हैं, हमारी इच्छाओं, समस्याओं तथा हमारे विचारों को अच्छी तरह जानते हैं और हमारी बौद्धिक क्षमता के अनुसार ही हमारे भीतर प्रेम तथा भलाई का प्रसारण करते हैं।

फिर भी हमको इस अनुभूति पर दुख होता है कि हम भगवान के प्रेम तथा पथप्रदर्शन का अनुसरण नहीं करते। हम प्रायः सोचते हैं कि किस बात से वे प्रसन्न होंगे और किस से अप्रसन्न ! यदि हम उनको प्रसन्न नहीं कर पायेंगे तो वे हमारे प्रति उपेक्षा का व्यवहार करेंगे और परिणामस्वरूप हमको मानसिक कष्ट सहन करना पड़ेगा।

भगवान का मधुर उत्तर होता है "तुम्हारी प्रसन्नता ही मेरा जीवन है।" साधारणतः अस्थायी वस्तुओं से प्राप्त होने वाले आनंद की व्यक्तिगत अनुभूति को प्रसन्नता कहा समझा जाता है। दुख से मुक्ति के आभास को सुख कहा जाता है। उदाहरणार्थ गर्मी के मौसम में ठंडा शर्बत हमारी प्यास को बुझाकर हमको प्रसन्नता देता है। भूख में भोजन से भी हमको सुख प्राप्त होता है। सुख की अनुभूति हम को इस लिए होती है कि हमको जो दुख था वह समाप्त हो गया।

परन्तु सच्ची प्रसन्नता क्या है ?

भगवान कहते हैं, "प्रसन्नता इसमें निहित नहीं कि एक मनुष्य वह कुछ करे जो करना वह पसंद करता है बल्कि इसमें है कि जो कुछ उसे करना पड़ता है उसे पसंद करने लगे।"

सच्ची प्रसन्नता की इस परिभाषा के पश्चात भी दो प्रश्न हर

जाते हैं। पहला यह कि मनुष्य अपनी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए क्या करे ? भगवान हमसे अपने नित्य प्रति के कार्यों में अपनी अन्तर्रात्मा की बात को मानने का आग्रह करते हैं। वे हमको लोभ तथा विपत्ति के आगे हार न मानने तथा अपने कार्यों में स्वच्छ मन रहने की भी शिक्षा देते हैं। वे यह कहते भी हैं कि शुद्ध विचार दुर्भावनाओं की हत्या करके मनुष्य को सत्यमार्ग दिखाते हैं।

अब दूसरी समस्या यह है कि हम अपने कार्य तथा अपने बिचारों में सामन्जस्य किस प्रकार बनाए रखें। यह सत्य ही है कि मनुष्य बहुत से उन प्रभावों तथा उन प्रेरणाओं के आधीन होता है जो उसकी ज्ञान सीमा से भी बाहर होती हैं। हमारा चरित्र हमारे द्वारा नहीं बल्कि हमारे लिए बना प्रतीत होता है। इस स्थान पर भगवान फिर हमें राह दिखाते हैं वे आग्रह करते हैं कि हम अपनी गलत आदतों को बदलें, अपनी क्षणिक तथा छोटी-छोटी इच्छाओं का त्याग करें, अपनी वासनाओं पर नियन्त्रण लगाएं और अपनी क्षमताओं को विस्तृत करें। इस प्रकार एक प्रक्रिया आरंभ होगी जिसमें हमारी बुरी आदतें समाप्त होती जाएंगी और अच्छी आदतें उनका स्थान लेती जाएंगी। यही हमारा चरित्र निर्माण होगा। इस प्रकार हम जो आरंभ में वासनाओं के दास और इच्छाओं की युद्धभूमि होती हैं धीरे-धीरे अपने प्रयास तथा संयम से अपने आप पर कुछ सीमा तक अंकुश लगाना सीख जाते हैं।

हमारा आदर्श यह होना चाहिए कि हम भगवान के दिखाए रास्ते पर चल कर उनकी सेवा में रत हो जाएं और इससे आनंद की अनुभूति प्राप्त करें। उन्होंने हमको वह कुछ दिया है जो न विश्वविद्यालयों की डिग्रियाँ दे सकती हैं न जिसको धन से खरीदा जा सकता है। यह धन कोई शुभ-चिन्तक दे सकता है न कोई गुरु। हम में भगवान ने यह विश्वास भर दिया है कि अपनी त्रुटियों के होते हुए भी हम ऐसे

तुच्छ नहीं हैं कि जीवन को केवल पेट भरने का खेल समझें तथा दुख और संदेह की अवस्था में अपना जीवन व्यतीत करें। हमारा भाग्य यह नहीं कि हम दुराचार तथा उत्तेजना में सिसकते रहें। हम इस योग्य हैं कि पवित्र हो सकते हैं, अपनी पशु-वृत्तियों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं और प्रत्यक्ष रूप से मनुष्य होते भी मौलिक रूप से दैवत्व प्राप्त कर सकते हैं।

हमको उन पर भरोसा रखना चाहिए जिन्होंने हमारी जीवन नय्या को संदेह तथा निराशा के भंवर से निकालकर विश्वास तथा पूर्णता की एक सुरक्षित चट्टान तक पहुंचा दिया है। वे माता से अधिक स्नेही, पिता से अधिक दयालु, संबंधियों से अधिक सहानुभूति रखने वाले तथा किसी भी सांसारिक शक्ति से अधिक शक्ति शाली हैं।

हमारा कल्याण इसी में है कि हम अपने भीतर के मानव को पशु पर विजय दिलादें और उस मानव को अपने भीतर छिपे भगवान के द्वारा उज्जवल कर लें।

बीते हुए समय तथा वर्तमान के बीच खड़े हम यह दृढ़ विश्वास रखते हैं कि भविष्य ऐसा ही होगा जैसा भगवान करते हैं—"मिथ्या की हार होगी और सत्य की विजय। सदाचार का राज्य होगा। उस समय शक्ति का स्रोत न ज्ञान होगा न धन, बल्कि चरित्र होगा। अविष्कार करने वाली बुद्धि की बजाए सदबुद्धि संसार पर राज्य करेगी।"

हम युवक ऐसे ही कल की ओर अग्रसर हैं।

• • •

३३--भगवान के प्रति एक भजन

*डॉ० नरेन्द्र

हम भगवान के चरणारविन्दों में बैठते हैं
मौन—उनपर आँखें जमाए
इस इशारे की प्रतीक्षा में
कि भजन गाया जाए ।
प्राण हमारे विवेक के तट से
तीन बार टकराता है
अपनी प्रति ध्वनि से
आत्म जाग जाता है ।
उनतक पहुंचकर उनमें विलीन हो जाता है ।
तब संगीत के पंखों पर सवार
भजन गूंज जाता है
प्रत्येक व्यक्ति आनंदविभोर होकर
उनकी महिमा गाता है ।
सहस्रों आवाजें एक स्वर में गाती हैं ।
भगवान विचारपूर्ण मुद्रा में मुस्काते हैं
कभी रहस्यपूर्ण हो जाते हैं ।
आनंद से आँखें बन्द किए
भजन की लै पर लहराते हैं ।
वायु में अपना हाथ लहराते हैं ।

कभी कोई झाँझ उठाकर
संगीत को और मधुर बना देते हैं
भजन समाप्त होता है—और भगवान
उठ खड़े हुए—एक सुनहली शिखा की भाँति,
हमारी आँखें रस पान करती हैं उनके सौन्दर्य का,
भजन के अन्तिशब्द हमारे हृदय से उबल पड़े हैं।
हम प्रार्थना करते हैं :—
"भगवन ! यह दृश्य हमारे मन की आंखों पर
सदा सदा छाया रहे।
साईं बाबा की जय !"

३४--विज्ञान तथा महाविज्ञान

*प्रो० पी० एस० राव

"सत्य अनस्ति परोधर्मः" ये किसी प्राचीनकाल के महात्मा के शब्द हैं। उसके कहने का तात्पर्य है कि सत्य से बड़ा गुण कोई नही है। सत्य ही आध्यात्मिकवाद तथा विज्ञान का मूल सिद्धान्त है। इस लिए दोनों ही सत्य की खोज में लगे रहते हैं परन्तु दोनों का क्षेत्र एक दूसरे से भिन्न है। विज्ञान अध्ययन, अनुमान तथा परीक्षण की प्रक्रिया अपनाता है।

पिछले कुछ दशकों में विज्ञान ने ऐसे बहुत से कार्य किए हैं जिनसे मानवजाति को लाभ पहुंचा है। विज्ञान ने समय तथा दूरी पर विजय प्राप्त कर ली है। आज एक महाद्वीप दूसरे महाद्वीप के इतना निकट आ चुका है कि पिछली पीढ़ी में पड़ौसी गाँव भी इतना निकट नहीं था। रेडियो तथा टेलीविज़न ने समस्त संसार को हमारे द्वार पर ला खड़ा किया है। रोग भी बड़ी सीमा तक नियन्त्रण में आ चुका है।

परन्तु क्या मनुष्य सुखी और समान संतुष्ट है ?

इसका उत्तर है 'नहीं'। मनुष्य आराम के लिए भी नींद की गोलियाँ खाने पर विवश है और आनंद के लिए भी उसे उत्तेजक

---

* श्री राव काडोगोडी में श्री सत्य साईं कॉलेज आफ़ आर्ट्स एन्ड साइंस में रसायनशास्त्र के प्रोफ़ैसर तथा हैड आफ़ दि डिपार्टमैन्ट हैं।

ग्रौषधियों की ग्रावश्यकता पड़ती है। साइंस के क्षेत्र में उन्नति हुई है परन्तु क्या मनुष्य के मन से घृणा दूर हो सकी है? क्या भूख तथा निर्धनता का ग्रन्त हुग्रा है? क्या युद्ध समाप्त हो सके हैं? इन सब प्रश्नों का उत्तर भी 'नहीं' है। इसका कारण यह है कि मानव ग्रमानव हो गया है ग्रौर ज्ञान के बदले शक्ति का पुजारी बन गया है। मानवीय मान्यताएं लुप्त हो गईं हैं ग्रौर विज्ञान का दुरुपयोग किया जाने लगा है। मुझे यह याद दिलाने की ग्रावश्यकता नहीं कि ग्रणु बम के ग्रविष्कार के साथ हीरोशिमा तथा नागासाकी का विनाश हुग्रा। इस प्रकार विज्ञान सुख के साथ दुख भी ग्रपने साथ लाया ग्रौर यदि यही प्रवृत्ति बनी रही तो एक दिन समस्त मानव जाति नष्ट हो जाएगी।

क्या पागलपन की इस प्रवृति का कोई उपचार नहीं? क्या मनुष्य मनुष्य नहीं बना रह सकता? ऐसा होसकता है यदि विज्ञान के घोड़े मुंह में सदाचार तथा धर्म की लगाम डाल दी जाए। विज्ञान बिना धर्म के ग्रन्धा है ग्रौर धर्म बिना विज्ञान के लंगड़ा! प्रत्येक धर्म में किसी न किसी मात्रा में ग्रन्धविश्वास पाया जाता है ग्रौर इसको समाप्त करने के लिए विज्ञान की ही ग्रावश्यकता है। विज्ञान को हमारी संस्कृति का एक ग्रंश बनना ही चाहिए परन्तु ग्रब कुछ दिनों से हमारे देश के वैज्ञानिक धर्म तथा महात्माग्रों की खिल्ली उड़ाने के ग्रतिरिक्त भगवान के ग्रस्तित्व से ही इनकार करने लगे हैं ग्रौर उन्हें यह ज्ञान नहीं कि वे मानवजात्ति को इस बात से कितनी हानि पहुंचा रहे हैं।

ग्रपने ग्रधूरे पन पर पर्दा डालने के लिए वे हर प्राचीन बात को ग्रन्धविश्वास कहने लगे हैं परन्तु वे पिछले जीवन के संस्मरण, मूर्तियों की ग्राँखों में ग्राँसू, मृतकों से मिलने वाले संदेश तथा प्रेत ग्रादि से कैसे

इनकार कर सकते हैं जिसका अनुभव सारे संसार को ही होता रहता है। वास्तव में ये बातें विज्ञान की पहुंच से बाहर हैं और इन क्षेत्रों में हस्तक्षेप करने से विज्ञान को कुछ मिलेगा भी नहीं।

इतनी उन्नति के बावजूद मनुष्य स्वयं को नहीं जान सका है। अभी तक "मैं कौन हूँ ?" का उत्तर नहीं मिल सका है। शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसे सोते में स्वप्न न दिखाई देते हों। आँख खुलते ही स्वप्न का अनुभव लुप्त होजाता है हालांकि स्वप्न के अनुभव सुप्तावस्था में इतने ही वास्तविक थे जितने कि जागृत अवस्था के अनुभव। इससे निष्कर्ष निकलता है कि पाँच ज्ञान्द्रियों के अतिरिक्त कुछ सूक्ष्मेन्द्रियाँ भी होती हैं जो सुप्तावस्था में कार्यशील रहती हैं। सोने तथा जागने की अवस्था में "मैं" प्रस्तुत रहता है। सोकर उठने के पश्चात् व्यक्ति कहता है "मैं खूब सोया।" यह कौन सा मैं था जो सो रहा था ? यह 'मैं' जागृत अवस्था वाला 'मैं' ही तो होता है। इसीको आत्मा कहा जाता है परन्तु क्या विज्ञान ने इस आत्मा का वर्णन किया है या इससे कोई सम्पर्क स्थापित किया है ?

यह 'मैं' क्या है ? क्या शरीर का नाम 'मैं' है ? ऐसा नहीं है क्योंकि हम कहते हैं "यह मेरा शरीर है।" इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि 'मैं' शरीर से प्रथक है। यह मस्तिष्क भी नहीं। तब ? क्या विज्ञान ने यह रहस्य समझ लिया है ? वास्तव में इस रहस्य को हम नहीं समझते, प्रत्येक मनुष्य का अनुभव है कि पाँच ज्ञानेन्द्रियों के अतिरिक्त भी अनुभूति की क्षमता उसमें होती है परन्तु विज्ञान इसकी व्याख्या करने में असमर्थ है। एक सिद्ध पुरुष का शक्तिशाली विचार जिसे संकल्प कहा जाता है तुरन्त ही प्रत्यक्ष रूप से कुछ परिणाम उत्पन्न कर सकता है परन्तु विचार को हम देख नहीं सकते क्योंकि यह मन का कार्य है परन्तु आध्यात्मिक संसार में यह विचार ही एक

ठोस वस्तु होती है। वैज्ञानिक भौतिक तथा बाह्य सिद्धान्तों को मानते हैं जबकि ऋषियों, मुनियों तथा महात्माओं का क्षेत्र होता है आत्मा तथा आत्मशक्ति, और वास्तव में संसार में यह जो सब कुछ है वह आत्मा के ही कारण है।

भौतिक शक्तियों से ऊपर एक विश्वव्यापी चैतन्य राज्य करता है और ब्रह्मांड की समस्त शक्तियों पर नियंत्रण रखता है। यह शक्ति ज्ञानेन्द्रियों तथा विज्ञान के सिद्धान्तों से बाहर की चीज़ है। इस शक्ति के सम्पर्क में आकर व्यक्तिगत चैतन्य भी इतना शक्तिशाली हो जाता है कि उसमें कुछ असाधारण क्षमताएं उत्पन्न होजाती हैं। ऐसे व्यक्ति संकल्प तथा आत्मशक्ति के बल पर प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति कर सकता है। सामान्य व्यक्ति इसे चमत्कार कहता है और वैज्ञानिक चकित रह जाता है कि 'कुछ नहीं' से यह 'कुछ' कैसे उत्पन्न हो गया। मन तथा मैं दोनों ही ज्ञानेन्द्रियों की पहुंच से ऊपर हैं। विज्ञान केवल मन को विचारों के केन्द्र के रूप में मानता है हालांकि किसी वैज्ञानिक ने आजतक मन को भी नहीं देखा है।

एक वैज्ञानिक भगवान तथा आत्मा दोनों को ही नहीं देख सकता इसलिए उनके अस्तित्व के बारे में भी संदेह रखता है। आध्यात्मिकवाद में यह कोई समस्या ही नहीं क्योंकि उसका तो क्षेत्र ही विज्ञान के क्षेत्र से ऊपर होता है। वह तो भगवान तथा आत्मा की अनुभूति प्राप्त कर लेता है और इस अनुभूति को उन्नत करने में लगा रहता है। आध्यात्मिकता के अपने नियम तथा अपने सिद्धान्त हैं। शरीर तथा ब्रह्मांड इसकी प्रयोगशालाएं हैं। इसका मूल सिद्धान्त तो यह है कि जीवात्मा परमात्मा का अंश है और इसका लक्ष्य है जीवात्मा को परमात्मा में विलीन कर देना। योग तथा साधना द्वारा आध्यात्मिकता का प्रशिक्षण होता है। जिस प्रकार विज्ञान के विशेषज्ञ

विज्ञान की शिक्षा देते हैं इसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्र के विशेषज्ञ 'गुरु' इसकी शिक्षा देते हैं।

विज्ञान की भांति आध्यात्मिकता में भी कई चरण होते हैं जिनसे होकर एक व्यक्ति को गुजरना पड़ता है। मन पर नियन्त्रण सबसे महत्वपूर्ण चरण है और यह मनुष्य का मित्र भी सिद्ध होसकता है तथा शत्रु भी! चंचल मन बाह्य दृष्य देखता है परन्तु स्थिर मन ब्रह्मांड के रहस्य देखने योग्य होजाता है। मनुष्य वही कुछ होता है जो कुछ उसका मन होता है। इसी लिए बहुत से लोगों का जीवन नर्क के समान होता है और बहुतों का स्वर्ग के समान! यह भी मनुष्य के लिए अच्छा ही है कि मन में एक समय में दो विचार एकत्र नहीं हो सकते। इसी लिए साधक जब अपने मन को परमात्मा की ओर लगा लेता है तो बाह्य वस्तुएं उसके लिए लुप्त हो जाती हैं। परमात्मा की ओर निरन्तर विचार से साधक की शारीरिक चेतना समाप्त हो जाती है। मन में विवेक उत्पन्न हो जाता है तो बुद्धि बहुत पीछे रह जाती है। (पातञ्जलि द्वारा लिखी गई एक महान् व्याख्या इस सम्बंध में है और उसका नाम है "योगसूत्र।")

जैसा सभी जानते हैं मन अपने प्राकृतिक रूप में एक बेलगाम घोड़े की भांति चंचल होता है। इस घोड़े पर काबू पाने के लिए आध्यात्मिकता की आवश्यकता पड़ती है और जब मन काबू में आ-जाता है तो शरीर अपने आप ही नियन्त्रित हो जाता है। भगवान साईं मन को 'इच्छाओं की गठरी' की उपमा देते हैं। यदि इच्छाएं ही न रहेंगी तो मन किस चीज़ में उलझेगा? इस अवस्था को पाने के लिए दस पाँच वर्ष पर्याप्त नहीं होते। भगवान कृष्ण ने भगवद् गीता में मन पर नियन्त्रण पाने की राह में आने वाली कठिनाइयों की चर्चा की है। वे कहते हैं कि इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिए

इच्छाओं से मुक्ति तथा तपस्या की आवश्यकता पड़ती है। पातञ्जलि ने इसी बात को "चित्तवृत्ति निरोध" कहा है। वे कहते हैं कि मन पर नियन्त्रण के लिए अनेक चरणों से गुजरना पड़ता है और वे चरण हैं, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा तथा समाधि ! इनमें से प्रत्येक चरण महाविज्ञान है। समाधि द्वारा साधक एक अचेतन समाधि की अवस्था प्राप्त कर लेता है और इस अवस्था में मन निष्क्रिय हो जाता है। इसी अवस्था में आत्मज्ञान तथा परमात्मा में विलीन होने का अनुभव प्राप्त होता है। जब यह अवस्था आ जाती है तो साधक को एक चिरन्तन् सुख का आभास रहने लगता है। यदि कभी उसका मन इस संसार की ओर आता भी है तो उसको उसमें भी परमात्मा ही दृष्टिगोचर होता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य इस संसार के रहस्य ही क्या ब्रह्मांड से आगे के रहस्य भी जान जाता है।

इस प्रकार प्रकृति मनुष्य के भीतर भी है उससे बाहर भी है। उसका प्रयत्न होना चाहिए कि दोनों पर विजय प्राप्त करे। बाह्य प्रकृति में शरीर भी सम्मिलित है और यह सब पदार्थ के अणुओं से बना हुआ है तथा भौतिक सिद्धान्तों द्वारा व्यवस्थित रहता है। आन्तरिक प्रकृति बड़ी सूक्ष्म होती है। इसी से बाह्य प्रकृति को प्रेरणा प्राप्त होती है। बाह्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करना बड़ी बात है परन्तु आन्तरिक प्रकृति पर नितन्त्रण पाना और भी बड़ी बात है। इसके लिए उन सिद्धान्तों का ज्ञान भी आवश्यक है जो भावनाओं, वासनाओं तथा इच्छाओं से सम्बंधित हैं। विज्ञान बाह्य प्रकृति को देखता है और आध्यात्मिकता के महाविज्ञान का संबंध आन्तरिक प्रकृति से होता है। दोनों के अपने-अपने नियम तथा सिद्धान्त हैं। वैज्ञानिक सिद्धान्तों से आध्यात्मिकता को परखना वैज्ञानिक बात नहीं परन्तु इतना अवश्य है कि विज्ञान और आध्यात्मिकता एक दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि पूरक हैं।

३५--वृन्दावन–एक पवित्र संगम

*ए० वी० लक्ष्मीनरासिमन

सागर से बाष्प के रूप में जल ऊपर उठकर बादल बनता है और बादलों से पानी बरसकर नदी नालों से होता हुआ फिर से सागर में पहुंच जाता है। इस ब्रह्मांड की प्रत्येक वस्तु भी इसी चक्र में बन्धी हुई हैं—एक स्रोत से निकलती है और फिर उसी स्रोत में जा मिलती है।

वेदों के अनुसार, स्रोत से निकलना प्रवृत्ति मार्ग है और वापस उसमें समाना, निवृ ति मार्ग है! स्रोत है ब्रह्म जो न मिटता है न बदलता है और मनुष्य अपने भिन्न-भिन्न तथा विशेष रूप में उससे ही बाहर आते हैं। वही ब्रह्म जड़-चेतन, सूक्ष्म-स्थूल, अंश तथा पूर्ण में, भिन्न-भिन्न स्वरूपों में विद्यमान है।

मनुष्य काल तथा नित्यता के मध्य एक पुल के समान है। अहं मनुष्य को नित्यता से दूर करता है और आत्मज्ञान मनुष्य को नित्यता के निकट लेजाता है। मनुष्य अपने अहं को नष्ट करके अमर हो सकता। वह उस स्रोत से दूर भी हट सकता है जहाँ से वह आया था और उसमें विलीन भी हो सकता है। इसी लिए मनुष्य के रूप में जन्म

---

*काडुगोडी में श्री साईं कालेज आफ आर्टस एण्ड साईंस में वनस्पति ज्ञान के प्रवक्ता हैं।

लेने को देवता होने से भी श्रेष्ठ समझा जाता है। केवल मनुष्य ही मोक्ष प्राप्त कर सकता है। मनुष्य के भीतर जड़ तथा चेतन दोनों के गुण होते हैं। विवेक तथा ज्ञान के सहारे मनुष्य मोक्ष प्राप्त कर सकता है परन्तु इस प्रयास में सफल होने के लिए मनुष्य को लाखों जन्म लेने पड़ते हैं। फिर भी मनुष्य में यह क्षमता है कि वह यह चुनौती स्वीकार कर सके ग्रौर विजय प्राप्त कर सके। महात्मा बुद्ध को कई बार मनुष्य के रूप में जन्म लेने के पश्चात् मोक्ष प्राप्त हुग्रा। सच्चिदानंद ग्राकार रहित, गुण रहित तथा ग्रमर है परन्तु इसकी प्राप्ति मनुष्य के लिए बहुत कठिन है।

तुकाराम, नामदेव, रामकृष्ण परमहंस, मीरा, थ्यागराज, ईसा तथा बुद्ध जैसे महात्माग्रों की जीवनी का ग्रध्ययन करने से पता लगेगा कि उन्होंने कितना महान प्रयास किया। ग्रात्मज्ञान के क्षेत्र में ये महात्मा हमारे ग्रादर्श हैं; वे जगद्गुरु हैं। मानव प्रवृत्ति के पशु पक्ष को जीतने तथा ग्रन्त तक लड़कर जीवन-युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए हमको इन महात्माग्रों के पदचिन्हों पर चलना चाहिए।

हिन्दू दर्शन के ग्रनुसार ग्रवतार इस प्रकार के गुरुग्रों से भी श्रेष्ठ होता है। वह तो गुरुग्रों का गुरु होता है। मानव के रूप में वह परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ झलक होता है। केवल ग्रवतार के माध्यम से ही परमात्मा के दर्शन प्राप्त हो सकते हैं। मनुष्य ग्रवतारों की ग्राराधना करने पर विवश है। वे केवल स्पर्श, दृष्टि या इच्छा से ही ग्राध्यात्मिकता का ग्रनुभव दूसरों को करा सकते हैं। उनकी ग्राज्ञा से पापी एक क्षण में साधु बन जाते हैं। समय समय पर भगवान ग्रवतरित होते हैं क्योंकि उनको संसार से दुराचार को समाप्त करना होता है। "सदाचार की स्थापना करने दुराचार को नष्ट करने ग्रौर भले लोगों की रक्षा करने, मैं युग युगान्तर में ग्रवतरित होता हूँ।"

यह बात भगवान कृष्ण गीता में कहते हैं और श्री रामकृष्ण परमहंस कहते हैं :—"जब भारी वर्षा का तूफ़ान आता है तो नदी नाले, ताल तलय्या, झीलें तथा गढ़े अपने आप ही भर जाते हैं। इसी प्रकार जब संसार में कोई अवतार आता है तो आध्यात्मिकता की बाढ़ सी आती है और ऐसा लगता है कि वायु आत्मा की सुगंध से बस गई है।"

यह कलयुग है और इसको प्राय: अच्छा नहीं कहा जाता परन्तु यह तो सबसे अच्छा युग है क्योंकि किसी भी युग में साईं जैसा अवतार नहीं हुआ। महानतम अवतार साईं किसी एक वर्ग, क्षेत्र या एक धर्म के लिए नहीं हैं। वे सारे धर्मों तथा प्रत्येक मनुष्य के लिए हैं। उनका अनंत प्रेम तथा अपार दया सबके लिए है। कृष्ण जी कहते हैं, "मूर्ख ब्रह्मांड के स्वामी के रूप में मेरी वास्तविकता को नहीं देखते और मुझे मनुष्य समझते हैं।" इसी प्रकार आज मूर्ख साईं की वास्तविकता को न समझकर उनके बारे में संदेह करने लगते हैं। वे नहीं जानते कि साईं ब्रह्मांड की हर कृत्ति का स्रोत हैं। उनके तरीकों की व्याख्या चाहना मूर्खता ही है क्योंकि जिस स्तर पर वे अपने कार्य करते हैं वह व्याख्या से परे का स्तर है। उनके तरीके तथा उनकी प्रकृति का तो केवल आनंद उठाया जा सकता है।

यह देखकर आश्चर्य होता है कि साईं का अपार प्रेम किस प्रकार संसार के कोने कोने युवकों को आकर्षित करके एक रहस्यपूर्ण ढंग से उनका हृदय परिवर्तन कर देता है। वृन्दावन में आकर युवक आत्मा के खोजी बन जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति एक नए अनुभव की कहानी सुनाएगा कि किस प्रकार साईं ने उसको वृन्दावन की ओर खींचा।

वे व्यक्ति जो वृन्दावन आते हैं बहुत कुछ पा लेते हैं। उनको भगवान की संगति का आनंद प्राप्त होता है। प्राचीन काल के किसी महात्मा

को भी परमात्मा से इतनी समीपता नहीं थी जितनी कि भगवान साईं को प्राप्त है। युवक उनके पास उलझे हुए आते हैं और उनकी उलझनें उनकी निकटता से दूर होजाती हैं। वे अपवित्र आते हैं परन्तु उनका स्पर्श पाकर पवित्र होजाते हैं। उनकी चुभती हुई दृष्टि हृदय में उतर कर हृदय को शुद्ध कर देती है। उनके चरणारविन्दों में वे प्रेम का अमृत पीते हैं और आध्यात्मिक विवेक प्राप्त कर लेते हैं।

जब नदी सागर से मिलती है तो एक अन्तिम संघर्ष होता है। सागर नदी को पीछे धकेलना चाहता है परन्तु नदी अपने इस स्रोत में विलीन होना चाहती है। अन्ततः सागर आने वाली नदी को अपने भीतर ले लेता है। लोग इस संगम में स्नान करके पवित्र हो जाते है। भगवान साईं तथा वृन्दावन वासियों का संगम इससे भी अधिक पवित्र होता है। मनुष्य जब वृन्दावन आते हैं तो उनकी आत्मा में वेदना होती है तथा हृदय पर मैल की तह चढ़ी हुई होती है। साईं के प्रेम की शक्तिशाली लहर उनको अपने भीतर लेकर उनको शुद्ध तथा शान्त बना देती है। आओ और इस पवित्र संगम में नहा लो क्योंकि भविष्य में ऐसा संगम फिर कभी नहीं मिलेगा। वे लोग धन्य हैं जो यहां आते हैं।

३६--वृन्दावन में भगवद् दर्शन

*सुदर्शन

भगवान के दर्शन देने का समय होगया है। भक्त व्याकुलता से उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। उनमें से कुछ तो यहाँ घन्टों पहले आगये थे कुछ अभी-अभी आए हैं परन्तु उन सब के आने का उद्देश्य एक ही है और वह यह कि भगवान की एक झलक देख लें। बाबा जी किसी भी क्षण आसकते हैं। सन्नाटा छा गया है। अन्दर के द्वार से कुछ चुस्त तथा तेजस्वी मुख वाले प्रसन्नचित्त युवक यह घोषणा करने के लिए बाहर आगए हैं कि भगवान आरहे हैं। सारी—आँखें उसी ओर लग जाती हैं और लो—वह अपनी मधुर मुस्कान लिए बाबा जी आगए। वे धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे हैं और छात्र उनके दोनों ओर खड़े उनके अदभुत् सौन्दर्य का आँखों से रसपान कर रहे हैं। भगवान किसी पर दृष्टि डालते हैं, किसी की पीठ थपथपाते हैं और किसी से एकाध बात कर लेते हैं। छात्र प्रसन्न हैं। कोई भी देख सकता है कि छात्रों को उनसे कितनी आदरपूर्ण श्रद्धा है। बाबा जी के पीछे-पीछे छात्र भी चलने लगे हैं।

अब भगवान उस स्थान पर पहुंच गए हैं जहाँ वे अपने अन्य भक्तों के सम्मुख रुक जाएंगे। छात्र भी ऐसे स्थान पर खड़े होगए हैं जहाँ से बाबा जी को भली भाँति निहार सकें। छात्रों को देखकर बहुत

---

*काडुगोडी में श्री साईं कॉलेज में भौतिक शास्त्र के प्रवक्ता हैं।

से दर्शकों के मन में यह प्रश्न उत्पन्न होता होगा कि ये युवक कौन हैं और यहाँ किस प्रकार का जीवन व्यतीत करते हैं ? उनका उद्देश्य क्या है ? भगवान की संगति में रहकर उनको क्या लाभ है और भगवान उनसे क्या कार्य करना चाहते हैं ?

इन प्रश्नों के उत्तर देना कठिन नहीं । ये बाबा जी की सेना है जो भक्ति, कर्तव्य तथा अनुशासन का प्रशिक्षण पाकर एक उच्च स्तर का जीवन व्यतीत करने के लिए तय्यार हो रही है । वे यहाँ से जाकर असंख्य लोगों को प्रभावित करेंगे और इस प्रकार संसार को अच्छा बनाने में सहायक होंगे । यही भगवान का लक्ष्य है ।

इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भगवान ने अनेकों शिक्षा संस्थान स्थापित किए हैं जहाँ सामान्य धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के अतिरिक्त आध्यात्मिक साधनों से आध्यात्मिक ज्ञान दिया जाता है । भगवान के विचार में जीवन समस्त ज्ञानेन्द्रियों में विवेक की उत्पत्ति का नाम है इस लिए सच्ची शिक्षा में आदत, दृष्टिकोण, कर्तव्य तथा कार्य पर ध्यान दिया जाता है । वृन्दावन हो या अन्य साईं संस्थान इनमें ऐसी ही शिक्षा दी जाती है ।

शिक्षा की प्रक्रिया उसी क्षण आरंभ हो जाती है जब छात्र यहाँ प्रवेश करता है । वे जब आते हैं तो भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुभव तथा अपूर्णताएं लेकर आते हैं । दूर-दूर से भिन्न-भिन्न वातावरण में पले इन छात्रों को आत्मा का ज्ञान नहीं होता । वे तो शिक्षा को डिग्री प्राप्त करने का माध्यम समझते हैं ताकि उन्हें कोई नौकरी मिल जाए । उनकी भाषा भी अलग-अलग होती है परन्तु शीघ्र ही वे हृदय तथा प्रेम की भाषा सीखकर एक परिवार की भाँति रहने लगते हैं । बाबा जी की प्रेम गंगा में नहा कर वे एक समूह की भाँति कार्य करने लगते

हैं। उनके विचार तथा दृष्टिकोण, उनकी आदतें तथा उनकी जीवन पद्धति परिवर्तित होने लगती है और यह सबकुछ किसी भय या दबाव से न होकर उनके अपने मन की प्रेरणा से होता है। वे समझ जाते हैं कि वे एक दूसरे से नियमों द्वारा नहीं बल्कि बाबा जी के प्रेम सूत्र द्वारा बंधे हुए हैं। "हम एक दूसरे को प्यार करते हैं क्योंकि भगवान साईं हम सबको प्यार करते हैं।"

सदगुरु साईं आरंभ से ही अपना कार्य शुरू कर देते हैं। कभी मुस्काकर, कभी बात चीत करके, कभी मजाक करके, कभी चुप रहके भगवान नए आने वाले के मन को बदल डालते हैं। यह परिवर्तन छात्र के शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक तथा अध्ययन के क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होने लगता है। पुरानी सुस्ती दूर हो जाती है। वे सवेरे उठकर ॐ का जाप करते हैं और ब्रह्ममुहूर्त में सुप्रभातम में भाग लेते हैं। दोपहर के पश्चात तथा संध्या को भजन और भोजन तथा कालेज के आरंभ होने से पूर्व प्रार्थना करते हैं। इससे उनके मन में परमात्मा के प्रति कृतज्ञता का आभास उत्पन्न होता है और युवावस्था में ही उनको भक्ति का स्रोत मिल जाता है। छात्र यहाँ एक दूसरे को सहन करना, एक दूसरे को सहयोग देना तथा एक दूसरे के लिए त्याग करना भी सीखते हैं। वे जो कुछ उनके सम्मुख आता है उसका उसी रूप में सामना करना भी सीखते हैं। इन बातों से उनके चरित्र का निर्माण होता जाता है।

वृन्दावन के छात्रों की कहानी में सबसे लाभप्रद वे भेंटें होती हैं जो वे अनौपचारिक रूप से बाबा जी से करते हैं। उनके सम्मुख होना अपने आप में एक शिक्षा है। वहाँ मनुष्य को जीवन के वास्तविक मूल्य तथा मौलिक सिद्धान्त सीखने का अवसर मिलता है। छात्र वहाँ जाकर सीखते हैं कि वे कैसे वस्त्र धारण करें, कैसे बाल रखें, कैसे उठें

बैठें तथा कैसे व्यवहार करें। इतनी छोटी-छोटी दिखाई देने वाली बातों में भी भगवान छात्रों के सुधार का ध्यान रखते हैं और यह सब-कुछ प्रेमपूर्वक होता है। वे छात्रों को दूसरों के साथ मिलकर जीना सिखाते हैं। उनका परामर्श है "तुम सदा दूसरों को अपना आभारी नहीं बना सकते परन्तु उनसे मधुरतापूर्ण बात तो कर सकते हो।" वे कहा करते हैं कि पंचतत्व भगवान का शरीर हैं इस लिए इनका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए, न ही आग, पानी, वायु तथा मिट्टी को दूषित करना चाहिए। समय के सदुपयोग पर भगवान बहुत बल देते हैं। वे कहते हैं "जो समय नष्ट करता है वह जीवन को नष्ट करता है।" हर क्षण का ठीक ढंग से उपयोग होना चाहिए। वे छात्रों से कहते हैं कि धन को गलत ढंग से व्यय करना भी गलत है। वे "सादा जीवन उच्च विचार" का प्रचार करते हैं।

बाबा जी अपने सम्मुख छात्रों को भिन्न-भिन्न विषयों पर बोलने के लिए भी प्रोत्साहन देते हैं। भौतिक तथा अलौकिक विषयों पर वे स्वयं भी कभी कभी प्रवचन देते हैं। समस्त आध्यात्मिक क्रान्ति बाबाजी की इस कहावत पर आधारित होती है "शीघ्र आरंभ करो, धीरे चलो और लक्ष्य तक सुरक्षित पहुँचो।" वे यह भी कहते हैं कि, "जल्दबाजी से हानि होती है और हानि से चिन्ता। इस लिए जल्दबाजी न करो।" वे छात्रों को समझाते हैं कि उन्हें अपना हृदय पवित्र बनाना चाहिए क्योंकि एक पवित्र हृदय ही में सत्य का प्रतिबिम्ब दिखाई दे सकता है।

हृदय की पवित्रता प्राप्त करने के लिए मन तथा समस्त ज्ञानेन्द्रियों पर नियन्त्रण लगाना अनिवार्य है। जीभ बकवास, चुगली, गाली तथा दूसरे के प्रति दुर्भावना व्यक्त करने के चार पाप कर सकती है। चुप रहने का अभ्यास कर लिया जाए तो इन से बचा जा सकता है।

बाबा जी मौन का एक और आदर्श भी प्रस्तुत करते हैं और वह है शेष ज्ञानेन्द्रियों का मौन ! इस प्रकार का मौन मन के लिए सात्विक भोजन का कार्य करता है और शरीर को भी बल देता है।

बाबाजी चरित्र पर बहुत बल देते हैं और इसी को शिक्षित होने का चिन्ह समझते हैं। वे कहा करते हैं कि "इस बात की चिन्ता न करो कि तुम ज्यादा अच्छे अंक प्राप्त नहीं करते। ध्यान इस ओर दो कि कोई तुमपर उंगली न उठाए।" वे उच्च आदर्श छात्रों के सम्मुख रखते हैं:—तुम अपना हृदय शंकर जैसा बनाओ और अपना हृदय बुद्ध जैसा। अपना हाथ ईसा जैसा बनाओ और अपना प्रेम साईं जैसा।" समाज सेवा पर भी बाबाजी लगातार बल देते रहते हैं क्योंकि उनके विचार से सेवा अहं को नष्ट कर देती है। सेवा द्वारा मनुष्य 'मैं' के सीमित संसार से निकलकर बृहत संसार में आजाता है।

बाबा जी से ये भेंटें मन पर स्थायी प्रभाव डालती हैं। छात्र सेवा के अवसर खोजते हैं और अपने अन्दर क्षमता तथा उत्साह उत्पन्न करने का प्रयास करते रहते हैं। वे पशुओं की देख भाल करते हैं, खाना बनाते हैं, वृन्दावन के फ़ार्म में काम करते हैं, बिजली तथा पानी की फ़िटिंग की देख भाल करते हैं, सफ़ाई करते हैं और हर प्रकार का काम करने को तय्यार रहते हैं। वे जानते हैं कि काम से बचा नहीं जा सकता और काम महत्वपूर्ण है। वे यह भी सीख जाते हैं कि काम फल की चिन्ता किए बिना भगवान की सेवा हेतु किया जाना चाहिए। बाबा ने उनके हरकार्य में साधना का रंग भर दिया है। जब वे सब्जी काटते हैं तो सोचते हैं कि अपने अहं काट रहे हैं और सफाई करते हुए उनको लगता है मानो वे अपना हृदय स्वच्छ बना रहे हैं। यह भावना उनको अध्ययन में भी सहायता देती है।

विश्वविद्यालय में वे उच्च स्थान प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त वे भजन गाते हैं, संगीत यन्त्र बजाते हैं और आस पास के ग्रामों में सेवा कार्य करते हैं।

यह सबकुछ किस प्रकार संभव होता है ?

क्योंकि छात्रों का एक ही उद्देश्य है और वह है बाबा को प्रसन्न करना। बाबा जी को प्रसन्न रखना ही उनके जीवन का सार है। भगवान साईं असीम तथा अनंत हैं इस लिए उन तक पहुँचने के मार्ग भी अनेक हैं। छात्र भिन्न-भिन्न मार्गों पर चलकर अपने-अपने ढंग से उन तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। भगवान परिपूर्ण हैं और दूसरों को भी परिपूर्ण देखना चाहते हैं। वे उनको परिपूर्णता प्रदान भी करते हैं।

आलोचक तथा अपने मन में संदेह रखने वाले व्यक्ति इस प्रकार के जीवन के बारे में प्रश्न कर सकते हैं। उनको तो यही बात आश्चर्य चकित करती है कि जीवन में प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है परन्तु प्रत्यक्ष को प्रमाण की क्या आवश्यकता ? जो स्वाद मधुमक्खी को पुष्पामृत में मिलता है वह भला कोई और क्या जाने ? प्रेम के स्रोत से वृन्दावन के छात्र कैसा आनंद प्राप्त करते हैं इसको मूर्ख क्या समझ सकते हैं ?

अब प्रश्न यह है कि इस सब का उद्देश्य क्या है ? उत्तर साधारण है। छात्रों को यह विश्वास उत्पन्न किया जाता है कि वे स्वयं भी जीवन लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं और दूसरों को भी वहाँ तक पहुँचने में सहायता दे सकते हैं।

हम भगवान के आभारी हैं कि उन्होंने हम को दूर-दूर से अपने पास बुलाकर अपने प्रेम तथा अपनी दया से इस योग्य बनाया कि

हम उनके मानव पुनरुत्थान के दैवी कार्य में उनके यंत्र बनकर कुछ सहायता दे सकें। हमको प्रार्थना करनी चाहिए कि युवकों में जो उनका विश्वास है हम उसे पूरा कर सकें। हमको उस दिन की प्रतीक्षा है जब हम उनके संदेशवाहक का रूप धारण कर लेंगे और संसार वाले हमारे अस्तित्व में भगवान साईं की झलक देखेंगे। वह दिन ही हमारे लिए वास्तविक साईं दर्शन का दिन होगा।

३७--श्री सत्यसाई विश्वविद्यालय

*बी० श्रीनिवास मूर्ति

मुझे कभी-कभी मन की आँख से ऐसा दिखाई देता है कि साईं कालेज तथा वृन्दावन छात्रावास उन्नति करके एक अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र बन गया है जहाँ शिक्षा एक आनन्ददायक आध्यात्मिक अनुभव है और शिक्षक सद्ज्ञान के पथप्रदर्शक ! यह नई विश्वसंस्था एक आधुनिक गुरुकुल होगी जहाँ सनातन धर्म का पुनरुत्थान होगा और सत्य, धर्म, शान्ति तथा प्रेम का प्रकाश !

आजकल संसार में घासफूस की भाँति इतने विश्वविद्यालय उत्पन्न हो गए हैं कि उनको विश्वविद्यालय कहना भी उचित नहीं लगता। यहाँ तो ज्ञान के टुकड़े कर दिये गये हैं और बुद्धि भटक गई है। शिक्षा में अधर्म आजाने से अनैतिकता भी आगई है। सबको शिक्षा देना अच्छी बात है यदि इससे स्तर न गिरे।

आधुनिक विश्वविद्यालयों की समस्या है बुद्धि तथा आत्मा में सामञ्जस्य उत्पन्न करना। बुद्धि ज्ञान प्राप्ति का एक साधन है और सत्य की ओर लेजाने वाली भी! परन्तु सहज ज्ञान, आध्यात्मिकवाद तथा आत्मज्ञान जैसे रहस्यपूर्ण ढग भी शिक्षा प्राप्ति के माध्यम हैं। यद्यपि स्वयं कुछ वैज्ञानिक विज्ञान की सीमाओं और विवशताओं

*काडोगाडो में श्री साईं कॉलेज में अंग्रेजी के रीडर।

को मानते हैं परन्तु प्रायः वैज्ञानिक केवल बुद्धि के पीछे पड़े हुए हैं। वास्तव में जीवन में बुद्धि के अतिरिक्त और भी बहुत कुछ है। प्रकृति रहस्यों से भरी पड़ी है और आध्यात्मिकता इन रहस्यों की खोज करती है।

सत्य साईं विश्वविद्यालय का यह प्रयास होगा कि बुद्धि को आत्मा के वस्त्र पहनाए और आत्मा को बुद्धि के। यहाँ ज्ञान की सभी शाखाओं का संगम सत्य से होगा। इस विश्वविद्यालय का क्षेत्र तथा दृष्टिकोण विश्वव्यापी होगा।

एक विश्वविद्यालय का मौलिक कार्य होता है शिक्षा देना परन्तु शिक्षा तो बड़ी भ्रान्तिपूर्ण वस्तु है। मनुष्य अपनी सीखने की क्षमता ही के कारण अन्य प्राणियों से पृथक माना जाता है। मनुष्य का वह ज्ञान जो उसे मूल वृत्तियों के रूप में मिलता है सीमित होता है परन्तु उसके मस्तिष्क की सीखने की शक्ति अपार है।

धर्मनिरपेक्ष शिक्षाशास्त्री शिक्षा को मनुष्य का समाजीकरण कहते हैं परन्तु शिक्षा का अर्थ इससे कहीं अधिक गहरा है। सत्य साईं की शिक्षा मनुष्य को केवल समाज में रहने योग्य ही नहीं बनाती बल्कि उसको आत्मिक बल देकर मनुष्य भी बनाती है। सच्ची शिक्षा मनुष्य की शारीरिक, मानसिक, भावात्मतक तथा आध्यात्मिक क्षमताओं का सर्वांगीण विकास करती है। शिक्षा केवल कुछ बातें जान लेने का नाम नहीं है। वास्तविक शिक्षा तो वह है जो मनुष्य की सुप्त शक्तियों को जागृत करे, उसकी ज्ञानेन्द्रियों को प्रखर बनाए, उसमें सद्गुण उत्पन्न करे, उसमें छिपे पशु पर अंकुश लगाए तथा उसके व्यक्तित्व में निखार लाए।

भगवान साईं शिक्षा सम्बन्धी विचार उनके निम्नलिखित शब्दों से भली भाँति व्यक्त होते हैं :—

"बुद्धि का लक्ष्य मोक्ष है ।
संस्कृति का लक्ष्य परिपूर्णता है ।
ज्ञान का लक्ष्य प्रेम है ।
शिक्षा का लक्ष्य चरित्र है ।

श्री सत्य साईं विश्वविद्यालय इन्हीं चार बातों पर अपनी शिक्षा की दृढ़ नीव रखेगा ।

बुद्धि ज्ञान से श्रेष्ठ होती है । ज्ञान जीवन को अच्छे ढंग से व्यतीत करने में सहायक होता है । चरित्र निर्माण साईं शिक्षा के ढाँचे की रीढ़ की हड्डी है । कर्तव्य, अनुशासन और भक्ति को भी शिक्षा के अंग होना चाहिए । कार्य, आराधना और बुद्धि भी शिक्षा के तीन स्तम्भ होते हैं । बाबा जी इनके साथ-साथ विचार, कथन, तथा कार्य में उचित सामञ्जस्य रखने पर भी बल देते हैं । वे छात्रों से आग्रह करते हैं कि वे अपने शब्दों, कार्यों, विचारों, हृदय तथा चरित्र पर कड़ी दृष्टि रखें । ऐसी कड़ी दृष्टि रखने से ही हम अपने शरीर तथा मन पर नियन्त्रण रख सकते हैं ।

हर भाषा में प्रेम शब्द के अनेकों अर्थ निकलते हैं परन्तु इस शब्द का जो सर्वश्रेष्ठ अर्थ है वही सत्य साईं की शिक्षा नीति का केन्द्र है । प्रेम भी ज्ञान प्राप्ति का माध्यम होता है क्योंकि मन के भी अपने ढंग है जिनको मस्तिष्क नहीं समझ सकता । यदि संसार से प्रेम लुप्त हो जाए तो जीवन नीरस होकर रह जाए ।

भगवान बाबा का अमर दर्शन-शास्त्र साईं शिक्षा के पाठ्यक्रम का मुख्य पक्ष होगा । बाबा जी के दर्शन को मैंने इसलिए अमर कहा

क्योंकि वह विस्तृत, गहरा तथा हर युग के लिए उचित है। उनका धर्म सनातन धर्म का नया निखरा हुआ रूप है। यह तर्क, बुद्धि, तथा परीक्षण से ऊपर की वस्तु है। बाबा जी का जीवन भौतिकवाद पर आत्मा की विजय का जीता जागता उदाहरण है और यही उनका संदेश है। यदि हम बाबा जी के दर्शन को समय, स्थान तथा तर्क से समझने का प्रयत्न करें तो हमारी मूर्खता ही होगी।

दार्शनिक परिभाषाओं की उलझन में सदा पड़े रहे हैं। कुछ दार्शनिकों ने दर्शन की परिभाषा यह दी है कि दर्शन पूर्ण ज्ञान है जबकि विज्ञान का ज्ञान अधूरा है। दर्शन बुद्धि से निष्पक्ष प्रेम का नाम है। दर्शन समन्वय करता है जबकि विज्ञान विश्लेषण करता है। दर्शन भिन्न-भिन्न माध्यमों से प्राप्त ज्ञान का समन्वय करने का प्रयास करता है। कुछ आधुनिक दार्शनिकों ने यह प्रयास छोड़ भी दिया है। उन्होंने विचारों की व्याख्या तर्क के सहारे करनी आरम्भ कर दी है। इस प्रकार दर्शन विज्ञान का शासक बनने की बजाए विज्ञान का दास बनने पर सन्तुष्ट होगया है।

कुछ भी हो यह प्रत्यक्ष है कि दर्शन और विज्ञान जीवन का एक विश्वव्यापी दृष्टिकोण उत्पन्न करने में असमर्थ हैं। यह काम आध्यात्मिकता ही कर सकती है। साईं बाबा का दर्शन आध्यात्मिकता पर ही आधारित है और इसी लिए बुद्धि की पकड़ से बाहर है। यही दर्शन साईं-शिक्षा का आधार है। साईं विश्वविद्यालय में तुलना के लिए शंकर, रामानुज, माधव, काँट, हीगिल आदि के दर्शन का भी अध्ययन होगा। विज्ञान तथा सामाजिक विषय पाठ्यक्रम में साथ साथ चलेंगे। पाठ्यक्रम अरूढ़िवादी, विस्तृत तथा प्रभावशाली होगा। सामान्य शिक्षा के साथ धार्मिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा भी साईं विश्वविद्यालय में होगी और और योग, साधना, बुद्धमत, जैन दर्शन, रहस्यवाद आदि भी

साथ साथ चलेंगे। एक विश्वव्यापी विश्वविद्यालय में बाबा जी के बिचारों के संचार के लिए माध्यम भी विश्वव्यापी होना चाहिए इसलिए अंग्रेजी भाषा ही अध्ययन तथा परीक्षा का माध्यम रहेगी।

इस विश्वविद्यालय में सावधानी के साथ चुने हुए अध्यापक होंगे जो छात्रों के मस्तिष्क में घासफूस ढंसने का प्रयत्न नहीं करेंगे। छात्रों का लक्ष्य भी केवल डिग्री प्राप्ति न होकर मानसिक प्रकाश प्राप्त करना होगा। यहाँ के अध्यापक डा० बैनीटो एफ़० रेज़ के शब्दों में "जागृत करने वाले, चेतना को मोक्ष प्रदान कराने वाले, प्रोत्साहन तथा प्रेरणा देने वाले, कठिन मार्ग पर पुल बनाकर सुगम बनाने वाले, समन्वय उत्पन्न करने वाले, प्रकाश देने वाले तथा स्वयं नमूना बनकर दिखाने वाले" होंगे।

अपनी बौद्धिक क्षमता तथा अपने सत्चरित्र के सहारे ही साईं विश्वविद्यालय में किसी को प्रवेश प्राप्त हो सकेगा। यहाँ से शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात छात्र, बाबा जी के संदेशवाहक बनकर विश्व में फैलेंगे और सत्य, धर्म, शान्ति और प्रेम के उनके नियमों का प्रचार करेंगे।

मैं ने साईं विश्वविद्यालय की कल्पना करके यह एक काल्पनिक रूपरेखा तैयार की है। इसको अधिक अच्छा तो योग्य गुरू ही बनाएंगे। मैं आशा करता हूँ कि बाबा जी की अपार कृपा से शिक्षा यह आदर्श कार्यक्रम शीघ्र ही साकार होगा।

मु० गुलाब सिंह एण्ड सन्स (प्रा० लि०) गुलाब भवन, ६-बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित। कपूर प्रिंटिंग प्रेस, ६४-ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया द्वारा मुद्रित।

